गांधीजी १९ — जोहानिसबर्गमें

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

३

(१८९८-१९०३)

नवम्बर १ २ में उपनिवेश-मंत्री श्री चेम्बरलेन दक्षिण आफ्रिका आ रहे थे अतः वहांके भारतीयोंने गांधीजीसे लौटनेका आग्रह किया। अपने जीवनकी इस अनिश्चितताके समय उन्होंने प्रभुके प्रति अपनी पूर्णतामें अपनी श्रद्धा प्रकट की। इस अवसरका जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा है "इस [संसार]में जो एक परमतत्त्व निश्चित रूपसे निहित है, यदि उसकी झाँकी मात्र हो सके उसपर श्रद्धा रहे तभी जीना सार्थक है। उसकी खोज ही परम पुरुषार्थ है।" (गुजराती आत्मकथा १९५२ पृष्ठ २५)। उनका दक्षिण आफ्रिका लौटना इस आशयका संकल्प था।

दिसम्बर खत्म होते-होते वे डर्बन पहुँचे। उन्होंने देखा कि ट्रान्सवालमें नये एशियाई विभागके द्वारा भारतीयोंपर पुराने कानून-नियम अभूतपूर्व कठोरतासे लागू किये जा रहे हैं। उन्होंने चेम्बरलेनके समक्ष एक प्रतिनिधिमण्डलका नेतृत्व किया और दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंपर लादी गई वैधानिक निर्योग्यताओंको सामने रखा। दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके धूमिल भविष्यकी संभावना से उन्होंने भारत लौटना मुल्तवी करके जोहानिसबर्गमें रहना तय किया। ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयकी सनद लेकर वे फिर से भारतीयोंकी शिकायतों को दूर करानेके लिए अनेक मोर्चों-पर काम करने लगे। गोखलेको लिखे गये एक पत्रमें वहांके आन्दोलनकी बढ़ती हुई शक्तिके बारेमें उन्होंने कहा संघर्ष मेरी अपेक्षासे बहुत अधिक जोरदार है।

इस समय उनका व्यक्तिगत जीवन आत्म-निरीक्षणके एक नये दौरसे गुजरा। जिस तरह दक्षिण आफ्रिकाके पहले निवासमें ईसाई मतने उनकी धार्मिक जिज्ञासाको प्रभावित किया था उसी तरह इस बार थियोसॉफीने उन्हें प्रभावित किया और वे हिन्दू धर्मशास्त्रके गम्भीर अध्ययनकी ओर प्रेरित हुए। गीता उनके लिए "आचारकी प्रौढ़ मार्गदर्शिका धार्मिक कोश हो गई और उन्होंने उसे कंठस्थ कर लिया। अपरिग्रहके विचारने उनके मनको इतना जकड़ा कि उन्होंने अपनी बीमाकी पॉलिसी रद कर दी। उन्होंने निश्चय किया अबसे उनके पास जो बचेगा जनताकी सेवामें खर्च होगा। इस निर्णयसे उनके बड़े भाई श्री लक्ष्मीदास और उनके बीच गम्भीर गलतफहमी पैदा हो गई जो श्री लक्ष्मीदासकी मृत्युके कुछ ही पहले मिटी।

जोहानिसबर्गमें प्लेग फैलनेपर फिर सार्वजनिक सेवाका अवसर आया। सहयोगियोंके एक छोटे-से दलके साथ नगरपालिकाकी ओरसे प्रबन्ध होने तक वे स्वभावके अनुसार जोखिम उठाकर बीमारोंकी सेवामें लग गये। भारतीय बस्तीसे गिरमिटिया मजदूरोंको हटाकर क्लिप्सप्रूट फार्मके तम्बुओंमें कर दिया गया था। गांधीजी रोज वहां जाते थे और उनकी विपत्तिमें उन्हें धीरज बंधाते थे। प्लेगके बारेमें उन्होंने समाचारपत्रोंमें एक चिट्ठी लिखी और इसके कारण वे दो यूरोपीयोंके सम्पर्कमें आये पादरी जोसफ डोक और हेनरी पोलक। बादमें ये उनके मित्र और सहयोगी बन गये। अल्बर्ट वेस्टसे उनकी पहचान नयी-नयी हुई थी इस पत्रके कारण वे भी और पास आये।

गांधीजीकी प्रेरणा से जून १९ ३ में डर्बनसे *इंडियन ओपीनियन*का प्रकाशन शुरू हुआ। दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके आन्दोलनमें इससे नवजीवन आया। भारतीय समाजको "उसकी भावनाएँ प्रकट करनेवाला और विशेष रूपसे उसके हितमें संलग्न मुखपत्र मिल गया।

यद्यपि सम्पादककी जगह इस पत्रमें कभी गांधीजीका नाम नहीं रहा फिर भी यह जानना आवश्यक और दिलचस्प होगा कि उन्होंने *इंडियन ओपीनियन*की जिम्मेदारी अपनी मानी थी। उन्होंने इस पत्रके बारेमें आत्मकथामें लिखा है

> सम्पादकत्व का सच्चा भार मुझ पर ही पड़ा। बहुत हद तक, मेरे भाग्य में हमेशा दूरसे ही अखबार चलाना रहा है। मनसुखलाल नाजर [प्रथम सम्पादक] तन्त्र चला

नहीं सकते थे यह बात नहीं है। किन्तु दक्षिण आफ्रिकाके सदपर प्रश्नोंपर मेरे रहते हुए स्वतन्त्र लेख लिखनेका उन्होंने साहस ही नहीं किया। मेरी विवेकशक्तिपर उन्हें अतिशय विश्वास था इसलिए लिखनेके सारे विषयोंपर सम्पादकीय लिखनेका बोझ मुझपर डाल देते थे। मैं पत्रका सम्पादक नहीं था फिर भी उसकी सामग्री की सारी जिम्मेवारी मेरी थी। (गुजराती आत्मकथा १९५२ पृष्ठ २८२)।

इसके बाद गांधीजी हमें *इंडियन ओपिनियन*का महत्त्व बताते हैं

जबतक [यह पत्र] मेरे हाथमें रहा तबतक इसमें होनेवाले फेरफार मेरी जिन्दगी के फेरफारोंको सूचित करते थे। जैसे अब *यंग इंडिया* और *नवजीवन* मेरे जीवनके कितने ही अंशोंका निचोड़ हैं इसी प्रकार उस समय *इंडियन ओपिनियन* था। मैं प्रति सप्ताह उसमें अपनी आत्मा उँडेलता और जिसे सत्याग्रह मानता उसे समझानेका प्रयत्न करता। जेलके समयको छोड़कर दस वर्षों तक, अर्थात् १९१४ तक *इंडियन ओपिनियन*का कदाचित् ही कोई ऐसा अंक होगा जिसमें मैंने कुछ न लिखा हो। इसमें एक भी शब्द मैंने बिना विचारे बिना तौले लिखा हो या किसीको केवल खुश ही करनेके लिए लिखा हो या जान-बूझकर अतिशयोक्ति की हो ऐसा मुझे याद नहीं है। मेरे लिए यह पत्र संयमकी तालीम बन गया और मित्रोंके लिए मेरे विचारोंको जाननेका साधन। (गुजराती आत्मकथा १९५२; पृष्ठ २८३-८४)।

इस अवधिमें दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके मसले और गांधीजी द्वारा उन्हें हल करनेके प्रयत्नकी पद्धति पहले वर्षोंके अनुसार रही। नये भारतीय विरोधी कानून, या जो थे उनमें जाति भेद पर आधारित प्रतिक्रियावादी संशोधन पास किये जाते रहे या लागू किये जाते रहे और उनका विरोध करना पड़ा। इन कानूनोंका प्रभाव-परवानों बस्तियों और बाजारों गिरमिटिया मजदूरों अनुमतिपत्रों और मताधिकार पर असर पड़ा। ये सब बातें दक्षिण आफ्रिकी भार तीयोंके सामाजिक और आर्थिक जीवनको छूती थीं। इन मसलोंपर गांधीजीने अपने उस समयके तरीकेके मुताबिक नगरपरिषदों अनुमतिपत्र कार्यालयों प्रवास-विभाग एशियाई विभाग स्थानीय विधानसभाओं गवर्नर उच्चायुक्त और उपनिवेश-कार्यालयके अधिकारियों का प्रार्थनापत्र भजनेकी पद्धतिका अनुसरण किया। अपेक्षाकृत बड़ी जिन नीतिगत बातोंका सम्बन्ध शाही सरकारसे होता था उनको लेकर उपनिवेश मन्त्रिको प्रार्थनापत्र भेजते थे अथवा उनतक शिष्टमण्डलका नेतृत्व करते थे। जिस अवसरपर वे भारत सरकारका हस्तक्षेप चाहते थे भारतके वाइसराय के पास मामला ले जाते थे।

जिस दूसरे मोर्चेपर गांधीजी भारतीयोंकी तकलीफें दूर करनेकी लड़ाई लड़ते रहे वह था स्थानीय समाचारपत्रों का। इन्हें वे पत्र लिखते और मुलाकातें देते थे। जब वे समाजोंमें बोलते और विशेषतः जब *इंडियन ओपिनियन* मुखपत्रकी तरह उनके पास था वे अपने देशवासियोंको अपना सुधारने-सँवारनेके लिए आत्मनिरीक्षणकी प्ररणा देते जिससे वे अपने प्रश्नको शक्तिशाली बनाकर न्याय पा सकें। भारत और इंग्लैंडमें मित्रों और समाचारपत्रोंको वे प्राय दक्षिण आफ्रिकाकी परिस्थितिके उतार-चढ़ावोंपर पत्र विवरण और वक्तव्य भेजते रहते थे। गांधीजीके सार्वजनिक कार्यका सामान्य स्वरूप ऐसा था।

जब सन् १८९७ का विक्रेता-परवाना अधिनियम पास हुआ तब १८९८ के अन्त-अन्तमें गांधीजीने उसके हानिकारक प्रभावको स्पष्ट करते हुए एक अच्छा तथ्यमान स्मरणपत्र श्री चेम्बरलनके

सामने पेश किया। सोमनाथ महाराज और दादा उस्मानको परवाना देनेसे इनकार करने वाले दो प्रमुख मामलोंकी उन्होंने खुद पैरवी की किन्तु वे दोनोंमें असफल हुए।

अधिकारियोंके सामने प्रायः मामले पेश करनेके अतिरिक्त गांधीजीने *इंडियन ओपिनियन*के स्तम्भोंमें दक्षिण आफ्रिकी उपनिवेशोंमें परवाना देनेकी नीतिकी आलोचना करते हुए अनेक लेख लिखे। उन्होंने थी चेम्बरलेनकी आलोचना की कि वे दक्षिण आफ्रिकामें औपनिवेशिक नीतिका चाहे वह ब्रिटिश परम्पराओंका स्पष्ट भंग भी करे, विरोध करना नहीं चाहते (१०–९–१९ ३)। विक्रेता-परवाना अधिनियम पास होनेके छ वर्ष बाद तब और विशेषत ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीके ब्रिटिश-सत्ताके अन्तर्गत आनेके बाद उसके दुरुपयोग से उनकी यह धारणा हुई कि यह नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंके लिए दूसरे जीवन-संघर्षका शायद आरम्भ-मात्र हो।

प्रवास भारतीयोंके सामने दूसरी बड़ी समस्या थी। बहाज-यात्राका पास और भारतीय आगन्तुकोंपर लगाये जानेवाले शुल्क जैसे कुछ अपेक्षाकृत छोटे प्रतिबन्धोंको गांधीजी जिन दिखाकर दूर करा सके थे या उनमें सुधार करा सके थे। किन्तु तत्कालीन प्रवासी कानूनोंमें संशोधनोंके द्वारा भारतीय प्रवासियों पर प्रायः गंभीर प्रतिबन्ध लादे जाते थे। केप उपनिवेशके प्रवास-कानून अपेक्षाकृत ज्यादा उदारतापूर्ण थे और गांधीजी नेटालमें ऐसे ही कानून मंजूर करनेके लिए तैयार थे।

ट्रान्सवाल सरकारकी पृथक्करण-नीति जिसने भारतीयोंको बस्तियों और *बाजारों*में सीमित करनेके आग्रहपूर्ण प्रयत्नका रूप ले लिया था भारतीयोंकी अन्य गंभीर समस्या थी। ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयके इस फैसले ने कि कानून ३ १८८५ के अन्तर्गत सरकार भारतीयोंको बस्तियोंमें रहने और व्यापार करने पर बाध्य कर सकती है, गांधीजीको बहुत बेचैन कर दिया और इस विषयको लेकर उन्होंने अधिकारियों ब्रिटिश मित्रों *इंडिया* और वाइसरायको भी तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको अनेक निवेदन भेजे। चेम्बरलेन और जोहानिसबर्गके ब्रिटिश एजेंट को लिखे गये पत्रोंके अतिरिक्त ये प्रार्थनापत्र इस खण्डमें हैं। यूरोपीयों द्वारा प्रार्थनापत्र (अप्रैल १९ ३) इस बातका उदाहरण है कि बस्ती-सूचनाके विरुद्ध गांधीजीने समझदार यूरोपीय-मत को किस प्रकार गति दी थी।

कर्जनके महापौरने जब ट्रान्सवाल बस्ती-कानून और *बाजार*-सूचनाके अनुसरणपर कानूनको भारतीयोंके खिलाफ सख्त बनाना चाहा तब गांधीजीने इसे नेटालमें पुराने घृणित कानूनोंको दाखिल करनेका एक असामयिक प्रयत्न कहकर इसकी निन्दा की (*इंडियन ओपिनियन* ४–६–१९ ३)। केप कालोनीके ऐसे ही एक कानूनकी गांधीजीने विरोधपूर्ण टीका की किन्तु साथ ही उपनिवेशके भारतीयोंसे भीड़भाड़ और गन्दगीसे बचनेकी प्रार्थना की (*इंडियन ओपिनियन* १६–७–१९ ३)।

इस अवधिमें भारतीय गिरमिटिया मजदूर बड़ी संख्यामें अनेक अड़चनें और प्रतिबन्ध सहते रहे। गांधीजीने घोषित किया कि यूरोपीयोंकी इच्छाके विरुद्ध गिरमिटिया मजदूरोंका प्रवास नहीं होना चाहिए, किन्तु अनिवार्य वापसीकी शर्तके साथ गिरमिटिया मजदूरोंकी कोई भी प्रवास-योजना स्वीकार नहीं की जानी चाहिए (*इंडियन ओपिनियन* ९–८–१९ ३)। जब ट्रान्सवालके बड़े-बड़े खान-मालिकोंने २ चीनी मजदूरोंके आयातका प्रस्ताव रखा तब गांधीजीने मानवताके आधार पर इस प्रस्तावका विरोध किया और माँग की कि पृथक बाड़ोंमें निवास जैसी अमानवीय शर्तें लगाकर दक्षिण आफ्रिकाकी गोरी कौम चीनियोंका अध-पतन न होने दे (*इंडियन ओपिनियन* २४–९–१९ ३)।

मताधिकारपर प्रतिबन्ध दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय परिस्थितिका एक स्थायी अंग था। जब ट्रान्सवाल-सरकारने निर्वाचित नगर-परिषदोंके अध्यादेशके मसविदेमें भारतीयोंको मतदानके अधिकारसे वंचित करनेका संशोधन करना चाहा तब गांधीजीने विधान-सभाको रंगके आधारपर इस भेदभावका विरोध करते हुए प्रार्थनापत्र भेजा (जून १   १९ १)।

दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके सामने उपस्थित इन प्रमुख समस्याओंके अतिरिक्त गांधीजीने गिरमिटिया मजदूरोंके बच्चोंपर व्यक्ति-कर, भारतीय शिक्षा-बालकोंपर रोक, हाइडलबर्गमें भारतीय व्यापारियोंपर पुलिसके अत्याचार, और अमतकामें भारतीय व्यापारियोंके विरुद्ध जारी जनताकी उत्तेजना जैसी अनेक दूसरे स्तरकी समस्याओंको भी हाथमें लिया।

गांधीजीके इस कालके सार्वजनिक अथवा व्यक्तिगत कथन अथवा लेखनका प्रधान लक्षण ब्रिटिश विधानमें उनका अविच्छिन्न विश्वास, ब्रिटिश नागरिकताके दावों और राष्ट्रोंके परिवारके रूपमें साम्राज्यपर निष्ठा था। उनका सम्राज्ञीके जन्म-दिवसोंपर बधाइयाँ भेजना, सम्राज्ञीके देहावसानपर शोक-सभाओंका आयोजन करना, ब्रिटिश प्रजाके समान नागरिकताके अधिकारों और व्यक्तिगत स्वतन्त्रताका अपने पत्रों और निवेदनोंमें बारंबार उल्लेख, सम्राज्ञीकी घोषणा १८५८ का निरन्तर उद्घोष, बोअर-युद्धमें भारतीय आहत-सहायक दलका प्रस्ताव और सेवा कार्य आदि सभी बातोंका प्रेरणा-बिन्दु उनकी साम्राज्य-भावना थी। अक्टूबर १९ १ में अपनी विदाईके समयके भाषणमें उन्होंने कहा   दक्षिण आफ्रिकामें आवश्यकता गोरे लोगोंके देशकी नहीं गोरे भ्रातृमण्डलकी भी नहीं बल्कि एक साम्राज्य भ्रातृमण्डल की है।

१९ १ के द्वितीयार्धमें घटनाओंने ब्रिटिश सद्भावके प्रति उनके मनमें सन्देह अंकुरित कर दिया। किन्तु धैर्यपूर्वक निवेदन करनेकी पद्धतिसे निष्क्रिय प्रतिरोध और सक्रिय सत्याग्रह अब भी दूर था।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखितके ऋणी हैं : गांधी स्मारक-निधि व संग्रहालय तथा अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका पुस्तकालय, नई दिल्ली; नवजीवन ट्रस्ट तथा साबरमती आश्रम संरक्षक व स्मारक ट्रस्ट, अहमदाबाद; कलोनियल आफिस पुस्तकालय तथा इंडिया आफिस पुस्तकालय, लन्दन; प्रिटोरिया तथा पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज़ और डर्बन नगर परिषद, दक्षिण आफ्रिका; भारत सेवक समिति, पूना; श्री छगनलाल गांधी; श्री डी० जी० तेंदुलकर तथा *महात्मा* के प्रकाशक; श्री प्रभुदास गांधी और *माई चाइल्डहुड विद् गांधीजी* के प्रकाशक; श्री बख्तावरसिंह, मॉरीशस; और समाचारपत्र *इंग्लिशमैन*, *इंडिया*, *स्टेट्समैन*, *स्टैंडर्ड*, *टाइम्स ऑफ इंडिया*, *वेजिटेरियन* और *वॉयस ऑफ इंडिया*।

अनुसंधान और संदर्भकी सुविधाएँ देनेके लिए गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय तथा *गुजरात समाचार* कार्यालय, अहमदाबाद; एशियाटिक पुस्तकालय तथा *बॉम्बे क्रॉनिकल* कार्यालय, *टाइम्स ऑफ इंडिया*, *मुंबई समाचार* तथा गुजराती प्रेस, बम्बई; राष्ट्रीय पुस्तकालय तथा *अमृत बाजार पत्रिका* कार्यालय, कलकत्ता; विधानसभा पुस्तकालय तथा इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय और ब्रिटिश म्यूज़ियम पुस्तकालय हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

विषय-सूची

स्रोत या प्रकाशनकी तिथिके साथ दिया गया है। संदर्भ पहले खण्डके अगस्त १९५८ के संस्करण और दूसरे खण्डके मार्च १९५९ के संस्करणसे लिये हैं। आत्मकथाके संदर्भ गांधीजीकी मूल गुजराती पुस्तक *सत्यना प्रयोगो* अथवा *आत्मकथा* की नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित १९५२ की मोटी आवृत्तिसे लिये हैं।

पुस्तकके अन्तमें सामग्रीके साधन-सूत्र खण्डके कालसे सम्बन्धित तारीखवार जीवन-वृत्तान्त और व्यक्तियों स्थानों कानूनों तथा महत्त्वपूर्ण संदर्भोंपर टिप्पणियाँ दी गयी हैं। अन्तमें एक विस्तृत सांकेतिका भी है।

साधन-सूत्रके तौर पर बतायी गई संस्थाओंके साथ एस० एन० संकेतका अर्थ है साबरमती संग्रहालय अहमदाबादमें उपलब्ध मूल कागज-पत्रोंकी क्रमसंख्या। इन कागज-पत्रोंकी फोटो-नकलें गांधी स्मारक-संग्रहालय नई दिल्लीमें सुरक्षित हैं। इसी प्रकार जी० एन० का अर्थ है वे मूल कागज जो नेशनल आर्काइव्ज नई दिल्लीमें उपलब्ध हैं। इनकी फोटो-नकलें भी गांधी स्मारक संग्रहालयमें सुरक्षित हैं। सी० डब्ल्यू० संकेत उन कागज-पत्रोंका है जिन्हें सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) ने प्राप्त किया है। इनकी फोटो-नकलें नेशनल आर्काइव्ज़में उपलब्ध हैं।

प्रस्तुत खण्ड आकारमें पहले दो खण्डोंसे बड़ा है। यह परिवर्तन ग्रन्थमालाकी खण्ड-संख्या घटाने और पाठकोंको एक ही खण्डमें अधिक पाठ्यसामग्री देनेके विचारसे किया गया है।

विषय-सूची

चित्र-सूची

श्री लाफ्लिनने कहा कि हम एक परिपाटी स्थापित कर रहे हैं, और मेरे ख्यालसे हम एक अनिष्ट परिपाटी स्थापित कर रहे हैं। इस मामलेमें जो-कुछ किया जा रहा है, वही उन मामलोंमें करना जरूरी होगा और ऐसी हालतमें मैं प्रस्तावके विरुद्ध मत देनेके लिए बाध्य हुआ।

मेयरने कहा कि परिषदने बहुमतसे निर्णय कर दिया है कि परवाना-अधिकारीसे कारण न पूछे जायें।

इसके बाद मूल प्रस्ताव मत लिये गये और वह पास हो गया और, इस तरह, परवाना-अधिकारीके निर्णयकी पुष्टि कर दी गई।

[मार्च ६, १८९८][1]

बाद की अपील

सोमनाथ महाराज नामके एक भारतीयने अपील की कि उसे नेटाल भारतीय कांग्रेसके उमगेनी रोड स्थित मकानमें व्यापार करनेका परवाना देनेसे इनकार कर दिया गया है।

श्री गांधीने अपील करनेवाले और मकान-मालिकोंकी ओरसे पैरवी की। उन्होंने कहा मैंने टाउन क्लार्कको लिखा था कि परवाना-अधिकारीने जिन कारणोंसे परवाना देनेसे इनकार किया है वे मुझे बता दिये जायें परन्तु मुझसे कहा गया कि कारण नहीं बताये जा सकते।

मेयरके एक प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने बताया कि उक्त जायदादके मालिक नटाल भारतीय कांग्रेसके ट्रस्टी हैं।

श्री गांधीने फिरसे बहस आरम्भ करते हुए कहा कि उन्होंने टाउन क्लार्कसे कागजातकी नकल भी मांगी थी परन्तु उन्हें बताया गया कि उन्हें नकल नहीं दी जा सकती। उन्होंने दावा किया कि कानूनन उन्हें नकल पानेका अधिकार है क्योंकि उस न्यायाधिकरणके सामने अपीली मामलोंके कानूनके साधारण नियम ही लागू होंगे। और, वे कारण जाननेके भी हकदार हैं। कानूनमें ऐसी कोई बात नहीं है जिससे मालूम होता हो कि कानूनके साधारण नियमोंको उलटा जा सकता है। अधिनियमके ग्यारहवें खण्डमें उसके अनुसार बनाये गये नियमोंका विधान है परन्तु मैं नहीं जानता कि वे बने हैं या नहीं। मैं नजीरें पढ़कर सुनाना नहीं चाहता क्योंकि मुझे लगता है, अगर अपील करनेका अधिकार दिया गया होता तो ऐसी अपीलोंकी कार्रवाई साधारण कानूनके अनुसार ही होती। अगर ऐसा न होता तो इसका मतलब होता कि कानूनने एक हाथसे अपील करनेवालेको अधिकार दिया और दूसरेसे छीन लिया क्योंकि अगर वह नगर-परिषदके सामने अपील करता और उसे यह मालूम न होता कि परवाना देनेसे इनकार क्यों किया गया और वह अपीलके कागजात न पा सकता तो उसे अपीलका कोई अधिकार व्यावहारिक रूपमें होता ही नहीं। अगर उसे अपील करनेका अधिकार दिया गया है तो निश्चय ही उसे कार्रवाईके पूरे कागजात पानेका हक है और अगर नहीं है, तो वह आदमी बाहरी है। क्या परिषद यह दावा करनेवाली है कि वह एक बाहरी आदमी है—हालांकि यहाँ उसका भारी हित दाँवपर है? उससे कहा गया था "तुम आ सकते हो तुम जो चाहो कह सकते हो पर यह बिना जाने कि मामलेकी भीतरी और बाहरी बात क्या है और वह अपना मामला लाया परन्तु अगर उसके कोई कारण हों तो वे उसे यथासमय बताये जायेंगे और अगर नगर-परिषदके पासमें कोई लिखी बात हो तो वह भी उसे यथासमय बताई जायगी। उन्होंने निवेदन किया कि अपील करनेवालेको परिषदकी कार्रवाईका लेखा प्राप्त करनेका और कारण जाननेका अधिकार है और अगर नहीं है तो उसे अपील करनेका अधिकार देनेसे इनकार किया गया है। मेरा मुवक्किल एक नागरिक है और उसे वे सब अधिकार पानेका अधिकार है जो दूसरे नागरिकोंको

१ नेटाल ऐडवर्टाइज़र, मार्च ७, १८९८ में कहा गया था कि अपीलकी सुनवाई कल हुई थी।

प्रधानमंत्रीके शब्दोंसे मार्गदर्शन ग्रहण करना चाहिए। उन्होंने कहा था : यह याद रखना चाहिए कि नगर-परिषदको दानवकी शक्ति प्रदान की गई है, परन्तु उसे सावधानी रखनी चाहिए कि उस शक्तिका प्रयोग दानवी तरीकेसे न हो। अर्जदार छः वर्ष तक मूई नदीके इलाकेमें दुकानदारी कर चुका है। वह पूर्णतः प्रतिष्ठित व्यक्ति है और उसके खरेपन तथा व्यापार-सामर्थ्यका प्रमाण नेटालकी चार यूरोपीय पेढ़ियोंने दिया है। मुझे आशा है कि परिषद उसे परवाना दे देगी।

श्री बेरलने प्रस्ताव किया कि परवाना-अधिकारीका फैसला कायम रखा जाये।

श्री ... ने प्रस्तावका समर्थन किया और वह प्रस्ताव बिना विरोधके पास हो गया।

[अंग्रेजीसे]

नेटाल मर्क्युरी, १–१–१८९८

२. अर्जी : जुर्मानेकी वापसीके लिए[1]

५३–ए फील्ड स्ट्रीट
डर्बन
मार्च ५, १८९८

श्री टाउन क्लार्क
डर्बन

महोदय

मूसा पता तथा अन्योंको सरकारसे पटरियोंपर दुकान लगानेका परवाना प्राप्त है। वे बन्दरगाहपर खुले स्थानपर रोटी आदि बेचते आ रहे हैं। उनपर भोजनालय चलानेका अभियोग लगाकर एक-एक पौंड जुर्माना किया गया था। परन्तु इन मामलोंमें न्यायाधीशका निर्णय डायर बनाम मूसा मुकदमेके अनुसार गलत ठहरेगा। डायर बनाम मूसा मुकदमेकी अपीलका फैसला उपर्युक्त मुकदमोंके फैसलेके बाद हुआ था। इन परिस्थितियोंमें क्या नगर-परिषद इन व्यक्तियोंको इन्होंने जो जुर्माना भरा है, वापस करनेकी कृपा करेगी?

आपका विश्वासपात्र
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

चूँकि सर्वोच्च न्यायालयने फैसलेको रद कर दिया है इसलिए, क्या मैं मूसापर किया गया और उसका भरा हुआ ५ शि० जुर्माना भी वापस माँग सकता हूँ?

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

डर्बन टाउन कौंसिल रेकर्ड्स : पत्र नं० २१५ ६ जिल्द ११४।

१. यह पत्र गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें है।

४. अभिनन्दनपत्र : जॉर्ज विन्सेंट गॉडफ्रेको

यह अभिनन्दनपत्र गांधीजीका लिखा हुआ है और मार्च १८, १८९८ को डर्बनके भारतीयोंकी एक सभामें श्री जॉ॰ वि॰ गॉडफ्रेको अर्पित किया गया था। गांधीजी उसपर हस्ताक्षर करनेवालोंमें भी शामिल थे।

[मार्च १८, १८९८के पूर्व]

श्रीमान् जॉर्ज विन्सेंट गॉडफ्रे
डर्बन

प्रिय श्री गॉडफ्रे,

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले भारतीय उपनिवेशवासी हाल ही की नागरिक सेवा (सिविल सर्विसेज) परीक्षामें आपकी सफलतापर इस पत्र द्वारा आपका अभिनन्दन करते हैं। उपनिवेशके भारतीयोंमें इस परीक्षामें बैठने और उत्तीर्ण होनेवाले आप पहले व्यक्ति हैं, इसलिए भारतीय समाज इस घटनाको बहुत महत्त्वपूर्ण मानता है। आप पहले असफल हो चुके हैं — यह हमारे खयालसे आपके लिए प्रशंसाकी वस्तु है। इससे मालूम होता है कि आपने कठिनाइयों और असफलताओंके बावजूद प्रयत्न नहीं छोड़ा। कठिनाइयाँ और असफलताएँ तो सफलताकी सीढ़ियाँ हैं। हम यहाँ यह उल्लेख करना भूल नहीं सकते कि श्री सुभान गॉडफ्रे भी भारतीय समाजके धन्यवादके पात्र हैं, क्योंकि उन्होंने आपको अध्ययन करनेका अवसर दिया। जैसे आपने यह दिखाया है कि अवसर मिलनेपर इस उपनिवेशका एक भारतीय युवक अध्ययनके क्षेत्रमें क्या कर सकता है, वैसे ही उन्होंने उपनिवेशके अन्य भारतीय माता-पिताओंके सामने वास्तवमें एक उदाहरण पेश कर दिया है कि अपने बच्चोंकी शिक्षा दिलानेके लिए पिताको क्या करना चाहिए। बच्चोंको शिक्षा देनेके सम्बन्धमें उनकी उदारताका एक और भी अधिक ज्वलन्त उदाहरण यह है कि उन्होंने आपके सबसे बड़े भाईको चिकित्साशास्त्रका अध्ययन करनेके लिए ग्लासगो भेजा है। हमें यह जानकर हर्ष है कि नागरिक सेवा-परीक्षा उत्तीर्ण कर लेनेसे ही आपकी महत्त्वाकांक्षाका अन्त नहीं हुआ, बल्कि आप अब भी बहुत आगे तक अपना अध्ययन जारी रखनेकी इच्छा कर रहे हैं। हमारी प्रार्थना है कि परमात्मा आपको दीर्घ जीवन और स्वास्थ्य प्रदान करे, जिससे आप अपनी अभिलाषाएँ पूर्ण कर सकें। हम आशा करते हैं कि उपनिवेशके अन्य भारतीय युवक आपकी लगन और परिश्रमशीलताका अनुकरण करेंगे और आपकी सफलता उन्हें प्रोत्साहित करनेवाली होगी।

आपके सच्चे शुभचिन्तक
और मित्र

[अंग्रेजीसे]

नेटाल ऐडवर्टाइज़र, १९-३-१८९८

५ पत्र : जॉर्ज विन्सेंट गॉडफ्रेको

[डर्बन
मार्च १८, १८९८ पूर्व]

प्रिय श्री गॉडफ्रे,

आप इस उपनिवेशकी नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) परीक्षा पास करनेवाले पहले भारतीय हैं। इस कारण अनेक भारतीयोंने जिनमें आपके मित्र और शुभचिन्तक भी शामिल हैं आपको अभिनन्दनपत्र अर्पित करनेका निश्चय किया है। मुझे भरोसा है कि आप आगामी शुक्रवार, तारीख १८ को सायंकाल ७.४५ बजे कांग्रेसके सभाभवन, ग्रे स्ट्रीटमें अभिनन्दन-पत्र ग्रहण करनेका यह निमन्त्रण स्वीकार करेंगे।

मैं बहुत हर्षपूर्वक इसके साथ आपके देखनेके लिए अभिनन्दनपत्रकी मुद्रित-नकल भेज रहा हूँ।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें लिखी अंग्रेजी दफ्तरी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० २७१३) से।

६. एक हिसाब

मार्च २५, १८९८

नेटाल भारतीय कांग्रेसके नामे
मो० क० गांधीका पावना — ११ दिसम्बर तक

		पौंड	शिलिंग	पेंस
२५- ४-९७	प्रार्थनापत्रोंकि रजिस्ट्रेशनकी टिकटोंके लिए चेक	२	२	४
१०-१२-९७	पिचरका बिल चुकता किया — बाबत करारनामा (बाड) की मंसूखी		९	९
२०-१०-९७	प्रार्थनापत्रोंके लिए टिकट		१४	
११-१ -९७	टिकट — नाजर[1]को पत्र			६½
६-१२-९७	दो चिमनियाँ		२	
९-१२-९७	बैंक ऑफ अफ्रिकाको चेक बाबत फरीदकी जमानत	१		
	शेष पावना पौंड	११	८	४½

अंग्रेजी दफ्तरी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० २७२१) से।

१. मनसुखलाल हीरालाल नाजर (१८६२-१९०६) जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीको समय समयपर सहायता दी थी। देखिए खण्ड १ पृष्ठ १९३।

७ टिप्पणियाँ : परीक्षात्मक मुकदमेपर

यह और इसके बादके नोटोंकी सामग्री गांधीजीने परीक्षात्मक मुकदमेमें तैयब हाजी खान मुहम्मदकी ओरसे पैरवी करनेवाले वकीलकी सहायताके लिए लिखी थी।

[अप्रैल ४, १८९८ के पूर्व][1]

प्रिटोरियामें मेरे सामने सरकारी वकीलने जो सम्मति प्रकट की थी उसका आदर करते हुए भी मेरा निवेदन है कि जिन भारतीयोंपर यह कानून लागू करनेका प्रयत्न किया जा रहा है वे अधिनियमकी उपधारा १[2] के अनुसार, इसके अन्तर्गत नहीं आते।

यह धारा है यह कानून एशियाके उन लोगोंपर लागू होगा जो किसी आदिम जातिके हों। तथाकथित कुली अरब मलायी और तुर्की साम्राज्यके मुस्लिम प्रजाजन भी उनमें ही गिने जायेंगे।

मैं मानता हूँ कि इस धारामें आये हुए विभिन्न शब्दोंका अर्थ अगर कानूनमें ही उनकी व्याख्या न हो तो अदालत वही मानेगी जो कि शब्द-कोश जैसे किसी प्रामाणिक ग्रन्थमें दिया होगा। आम लोग अज्ञान अथवा पक्षपातके कारण इनका जो अर्थ लगाते रहे हैं उसे अदालत नहीं मानेगी।

यदि यह ठीक हो तो एशियाकी आदिम जातियों का मतलब इतिहासका कोई ग्रन्थ देखनेसे ही ज्ञात हो सकता है। हंटरके इंडियन एम्पायर [भारतीय साम्राज्य] ग्रन्थका तीसरा और चौथा अध्याय देखते ही पता चल जाता है कि आदिम जातियाँ कौन-सी हैं और कौन-सी नहीं। वहाँ यह बात इतनी स्पष्टतासे बताई गई है कि दोनोंमें अन्तर करनेमें भूल किसीसे भी नहीं हो सकती। पुस्तकसे एकदम पता चल जायेगा कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय इंडो-जर्मन नस्लके अथवा अधिक ठीक शब्दका प्रयोग करें तो आर्य वंशके हैं। मैं जहाँतक जानता हूँ इस विचारका विरोध किसी अधिकारी विद्वानने नहीं किया। मॉरिस और मैक्स-मूलरकी पुस्तकोंमें भी इसी विचारका समर्थन किया गया है। ये पुस्तकें प्रिटोरियामें सरलतासे मिल सकती हैं। यदि इन शब्दोंका यह अर्थ नहीं माना जाता तो मैं नहीं समझता कि इनका और क्या अर्थ करना चाहिए।

ग्रीन बुक्स[3] [हरी किताबों] को देखनेसे पता चलेगा कि सर हर्क्यूलीज़ रॉबिन्सन ने भी (मुझे नामका निश्चय नहीं है) कुछ इसी प्रकारके कारणोंसे भारतीय व्यापारियोंको इस धाराका अपवाद माना है। और यदि गणराज्यके भारतीयों की गणना एशियाकी आदिम जातियों में नहीं की जाती तो उन्हें कुलियों अरबों मलायियों और तुर्की साम्राज्यके मुस्लिम प्रजाजनोंमें तो गिना ही नहीं जा सकता।

वे कुली या अरब हैं या नहीं? यदि पुस्तकों और नक्शोंपर भरोसा किया जाये तो वे इन दोनोंमें से कुछ भी नहीं हैं। यहाँ कोष्ठकमें इतना और बढ़ा देना चाहिए कि यदि यह कानून सचमुच भारतीयोंपर भी लागू करनेका इरादा होता तो उनका नाम भी इसमें

१ [illegible] अनुवाद।

२ १८८५ का कानून ३, जैसा १८८६ में संशोधित हुआ था।

३ [illegible] में दिया हुआ है। [illegible] नं० १, १८९४, पृष्ठ २८ [illegible] ० ५ ८ और पृष्ठ ११ भी

राजनीतिक अधिकारियोंके नियन्त्रणमें है और दूसरा रक्षित ब्रिटिश भारत जहाँ जनता और ब्रिटिश अफसरके बीच एक मध्यस्थ है। तथापि हमारे मतलबके लिए भारतके इन दोनों भागोंके निवासी समान रूपसे ब्रिटिश प्रजा हैं और भारतके बाहर उन्हें एक-ही विशेषाधिकार प्राप्त हैं। यह पहलू कोई भी नक्शा या प्रामाणिक भूगोल-पुस्तक पेश करके या ब्रिटिश एजेंटकी गवाही लेकर भी साबित किया जा सकता है। इसके अलावा वादीने अकसर ब्रिटिश भारतीय व्यापारीकी हैसियतसे ब्रिटिश एजेंटोंके साथ व्यापार किया है और उसकी यह हैसियत स्वीकार भी की गई है।

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे रानीको जो प्रशस्त अभिनन्दनपत्र[1] भेजा गया था उसमें दूसरे लोगोंके साथ वादीके भी हस्ताक्षर थे। यह भी ब्रिटिश एजेंट साबित कर सकता है। और यदि यह उपाय ठीक समझा जाये और मंजूर किया जाय तो और कुछ हो या न हो इससे मामलेको थोड़ा गौरव तो मिल ही सकता है।

मुझे बताया गया है कि एक बार एक मजिस्ट्रेटने वादीसे एक फार्म भरवाया था। उसमें वादीने अपना परिचय ब्रिटिश प्रजाके रूपमें दिया था। और यह उस अफसरने स्वीकार किया था।

बाबत (ख)

मालूम होता है कि १८८२ में वादी तैयब इस्माइलका साझेदार था। १८८३ में वह अबूबकर अमद और कंपनीमें शामिल हो गया और प्रिटोरियामें इस पेढ़ीके व्यापारका आधा सिक साझदार और व्यवस्थापक रहा। १८८८ में अबूबकर अमद और कम्पनी तैयब हाजी अब्दुल्ला और कम्पनीके रूपमें बदल गई और १८९२ से वादी तैयब हाजी खान मुहम्मद और कम्पनीके नामसे साझेदारोंके साथ या बिना साझेदारोंके व्यापार करता आ रहा है। ट्रान्सवालमें उसका दूसरा कारोबार भी था और है। बहुत-से गवाह इसे साबित कर सकते हैं। यह भी सम्भव है कि साझेदारीके कागजात या अमर परवाने दिये गये हों तो वे भी पेश किये जा सकें।

बाबत (ग)

वादी अपनी निजी या अपने कब्जेकी जायदादका कर नियमित रूपसे अदा करता रहा है। उसे कभी अपराधी नहीं ठहराया गया। करोंकी रसीदें पेश की जा सकती हैं। मैं मानता हूँ वादीने सैनिक कार्रवाई सम्बन्धी करमें भी अपना हिस्सा अदा किया ही होगा। उसने अपनी दूकानको अच्छी आरोग्यजनक अवस्थामें रखा है। डा वील इसकी गवाही दे सकेंगे।

बाबत (घ) (ङ) और (च)

यदि (क) को सिद्ध कर दिया गया अर्थात् अगर वादीका ब्रिटिश भारतीय होना साबित कर दिया गया तो (घ) (ङ) और (च) आप ही सिद्ध हो जाते हैं। क्योंकि यदि वादी भारतीय है तो वह न अरब हो सकता है न मलायी ही और अगर वह ब्रिटिश प्रजा है तो तुर्की प्रजा नहीं हो सकता। इससे इनकार नहीं किया गया कि वह मुसलमान है और उलझन इसी कारण पैदा हुई है। किसी भी तरह क्यों न हो दक्षिण आफ्रिकाके लोग भारतीय मुसलमानोंको अरब और तुर्की प्रजा समझने लगे हैं। वादी दोनोंमें से कोई भी नहीं है। वह न कभी अरब गया और न तुर्की। अरब वह तीर्थ-यात्रा करने भी नहीं गया। भारतीय अरब या भारतीय मलायी होना तो असम्भव ही है। मेरी जानकारी तो यह है कि मलायी लोग

1. देखिए खण्ड १, पृष्ठ १५८।

2. १८९४ में कर्नल मुरीस मसीकल रिस द्वारा बोअरोंकी नैतिक कार्रवाईके समय इसकी वसूली शुरू किया गया था।

पहले जावाके निवासी थे या शायद अब भी हैं और उन्हें दक्षिण आफ्रिकामें पहले-पहले डच लोग लाये थे।

बाबत (ख)

कुली शब्दका प्रयोग सरकारी तौरसे पहले-पहले नेटालके विधानमण्डलने तब किया था जब कि इस उपनिवेशमें यूरोपीय आबादकारोंके लिए असली कुली अर्थात् खेतोंमें काम करनेवाले मजदूर लाये गये थे। उस समय इस उपनिवेश अथवा दक्षिण आफ्रिकामें अन्य कोई भारतीय नहीं थे और १८७ से पहले एक भी भारतीय व्यापारी दक्षिण आफ्रिकामें नहीं आया था। तबतक खेतोंमें काम करनेवाले भारतीय मजदूरोंकी आबादी यहाँ काफी बड़ गुकी थी और तब गोरे लोग उन्हें कुली कहा करते थे। वैसा करते हुए उनका मतलब उनका जी दुखानेका नहीं होता था। जब भारतीय व्यापारी यहाँ आये तब गोरे लोग उन्हें भी कुली कहने लगे क्योंकि वे इन मजदूरोंके अतिरिक्त अन्य भारतीयोंको जानते ही नहीं थे। वे यह भूल गये कि इस शब्दका विशेष अर्थ क्या है और इसका प्रयोग मजदूरोंके एक विशेष वर्गके लिए किया जाता है किसी राष्ट्रके लिए नहीं। धीरे-धीरे व्यापारिक ईर्ष्याके अंकुर फूटे और यह शब्द भारतीय व्यापारियोंके प्रति तिरस्कार व्यक्त करनेका जरिया बन गया। इस रूपमें इसका प्रयोग जान-बूझकर और निर्दोष रूपसे किया जाने लगा। कुछ यूरोपीय लोग व्यापारियोंका थोड़ा-बहुत आदर करते थे। वे व्यापारियों-व्यापारियोंमें अन्तर प्रकट करनेके लिए भारतीय व्यापारियोंको अरब कहने लगे। इसके बाद भारतीय लोग दक्षिण आफ्रिकामें जहाँ-कहीं भी गये कुली शब्द भी उनके पीछे-पीछे गया। आम तौरसे यह घृणाका ही सूचक रहा। और आजतक यह वैसा ही बना हुआ है। इसका कानूनी अथवा कोशका अर्थ जाननेके लिए, वेब्स्टरके शब्दकोशको प्रामाणिक माना जा सकता है। और इस शब्दका व्यापारमें और बोलचालमें जो अर्थ समझा जाता है उसे बतलाने के लिए बहुत-से व्यापारी शपथपूर्वक यह गवाही देनेको तैयार हो जायेंगे कि वे चाकी और उस जैसे भारतीयोंको कुली कहनेके लिए कभी तैयार नहीं होंगे। उनका अपमान करना हो तो बात दूसरी है।

इस प्रसंगमें उस मामलेकी तरफ भी ध्यान देना चाहिए जो कि मैंने कुछ समय पूर्व कानूनकी साधारण व्याख्या करनेके लिए, और विशेष रूपसे कुली शब्दके प्रयोगके सम्बन्धमें लिखकर भेजी थी। *विलियम चकाम बनाम सेटेलिंग कारपोरेशन* का मुकदमा भी देखने योग्य है। उस इसके साथ भेज रहा हूँ। उसमें कुली शब्दके प्रयोगपर जो विचार सर वाल्टर रैगने व्यक्त किया है[1] वह भी सम्मिलित है।

मो० क० गांधी

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १७ ४) से। इस प्रतिमें गांधीजीके हस्ताक्षर हैं।

१ देखिए खण्ड ३ पृष्ठ "टिप्पणियाँ: कॉन्स्टेबल मुकदमा पर"।

१. पत्र : औपनिवेशिक सचिवको

५३–बी फील्ड स्ट्रीट
डर्बन
जुलाई २१, १८९८

सेवामें
माननीय औपनिवेशिक सचिव
पी० मै० बर्ग[1]

महोदय,

मैंने डर्बनके प्रवासी-अधिकारीको अमुक चार भारतीयोंके लिए अस्थायी परवानोंकी अर्जी दी थी। वे हरएक व्यक्तिके २५–२५ पौंड जमा करनेपर परवाने देनेको तैयार हैं। मेरे यह अर्जी देनेपर कि हर व्यक्तिसे १–१ पौंड जमा कराये जायें, उन्होंने मुझे सूचित किया है कि उन्हें ऐसी छोटी रकमें मंजूर करनेका अधिकार नहीं है।

मैं आपका ध्यान इस हकीकतकी ओर खींचना चाहता हूँ कि चार्ल्सटाउनमें १ पौंडकी रकम स्वीकार की जाती है। रकम जमा करानेकी प्रणाली बहुत बड़े सन्तोषका मूल है और मैं निवेदन करता हूँ कि रकम जमा करानेका मंशा पूरा करनेके लिए १ पौंड बहुत काफी है।

अगर अस्थायी परवाने रखनेवालोंकी जमा रकम जब्त हो जाये तो भी कानून तो उन तक पहुँच ही सकता है और उन्हें उपनिवेशसे निर्वासित किया जा सकता है। ऐसी स्थितिमें मुझे भरोसा है, आप डर्बनके प्रवासी-अधिकारीको अधिकार दे देंगे कि वे अस्थायी परवाना माँगनेवाले हर व्यक्तिसे १ पौंडकी रकम जमा कराना मंजूर कर लें।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

हाथसे लिखे हुए मूल अंग्रेजी पत्रसे जिसपर गांधीजीके हस्ताक्षर हैं: पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज़ स० नी० एस० ओ० /४०११/९८।

१. पीटरमैरित्सबर्ग

१० तार : भारतके वाइसरायको

जोहानिसबर्ग [illegible]
अगस्त १९, १८९८

प्रेषक
ब्रिटिश भारतीय
जोहानिसबर्ग

सेवामें
परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदय
शिमला

हम जोहानिसबर्गमें व्यापार करनेवाले ब्रिटिश भारतीय आदरपूर्वक महानुभावके सूचनार्थ निवेदन करना चाहते हैं कि यहाँ के उच्च न्यायालयने निर्णय दिया है कि तमाम भारतीयोंको पृथक बस्तियोंमें ही रहना और व्यापार करना होगा।

[अंग्रेजीसे]

परराष्ट्र विभाग विदेश मन्त्रालय भारत सरकार : कार्यवाहियाँ सितम्बर १८९८, सं ५५–५९।

११ प्रार्थनापत्र : भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको[1]

ट्रान्सवाल उच्च न्यायालयके इस फैसले पर कि भारतीयोंको पृथक बस्तियोंमें ही रहना और व्यापार करना होगा भारतीयोंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके नाम निम्नलिखित प्रार्थनापत्र भेजा था।

जोहानिसबर्ग
दक्षिण आफ्रिकी गणराज्य
अगस्त २८, १८९८

सेवामें
अध्यक्ष तथा सदस्यगण
भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस

महोदयो

दक्षिण-आफ्रिकी गणराज्यके जोहानिसबर्ग नगरमें रहनेवाले हम निम्न हस्ताक्षरकर्ता ब्रिटिश प्रजाजन आपकी कांग्रेसका ध्यान निम्न-लिखित तथ्योंकी ओर सादर आकृष्ट करना चाहते हैं

१. फौजदारी मुकदमेमें अदालतने निर्णय दिया था कि निवास और व्यापारके स्थानोंमें कोई भेद नहीं है और एशियाइयोंको जहाँ पृथक् बस्तियोंमें रहना तथा व्यापार करना होगा वी सरकारके करनेके लिए निश्चित कर दी है (पृष्ठ १)।

२. इसी तारकी प्रतिलिपियाँ उपनिवेश-मंत्री तथा भारत-मंत्रीको और एक लन्दन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश कमेटीको भी भेजी गई थीं।

१ हम ब्रिटिश प्रजाजन हैं, हमारा जन्म ब्रिटिश भारतमें हुआ है, और अब हम जोहानिसबर्गमें व्यापारियों और दूकानदारोंकी हैसियतसे व्यापार कर रहे हैं।

२ हममें से कुछ लोगोंको इस गणराज्यमें रहते बारह वर्ष और इससे भी अधिक समय बीत गया है। जोहानिसबर्गमें हमारी दूकानोंमें बहुतेरा कीमती सामान भरा है।

३ हमारा सादर निवेदन है कि ब्रिटिश प्रजाजनोंकी हैसियतसे हमें लंदन समझौता के नामसे प्रसिद्ध समझौतेका पूरा लाभ पानेका अधिकार है। यह समझौता सम्राज्ञीकी सरकार और दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यकी सरकारके बीच १८८४ में हुआ था। इसके चौदहवें अनुच्छेदमें विधान है कि सब ब्रिटिश प्रजाजनोंको दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यमें कहीं भी रहने और व्यापार करनेका अधिकार होगा।

४ हालमें इस गणराज्यके उच्च न्यायालयने निर्णय किया है कि सब भारतीयों और अन्य एशियाइयोंको उन खास बस्तियोंमें ही रहना और व्यापार करना पड़ेगा जो कि गणराज्यकी सरकार उनके लिए नियत कर देगी और कहीं नहीं।

५ उच्च न्यायालयका यह निर्णय इस गणराज्यकी लोकसभा (फोक्सराट) द्वारा पास किये हुए एक विधानके आधारपर है। यह विधान उपर्युक्त समझौतेके पश्चात् अर्थात् १८८५ में पास किया गया था और १८८५ का कानून ३ कहलाता है। यह कानून उक्त समझौतेकी स्पष्ट शर्तोंके प्रत्यक्ष विरुद्ध है।

६ यदि यह मान भी लिया जाये कि हम १८८५ के उक्त कानून ३ की शर्तोंके पाबन्द हैं जो कि हम नहीं मानते तो भी हमारा सादर निवेदन है कि इस गणराज्यके उच्च न्यायालयका उक्त निर्णय कानूनन गलत और उक्त कानूनके सच्चे अर्थों और उद्देश्योंके स्पष्ट विपरीत है। क्योंकि कानूनमें लिखा है कि इस गणराज्यकी सरकारको इस गणराज्यके एशियाइयोंके लिए बस्तियोंमें रहनेका स्थान निश्चित कर देनेका अधिकार होगा। इससे गणराज्यमें कहीं भी व्यापार करनेके एशियाइयोंके अधिकारपर कोई प्रतिबन्ध लागू नहीं होता।

७ उच्च न्यायालयका उक्त निर्णय अन्तिम है, उसके विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती।

८ हमें यह विश्वास नहीं होता कि सम्राज्ञी-सरकारका ऐसा कोई इरादा था या है कि जो अधिकार उक्त लंदन-समझौते द्वारा सब ब्रिटिश प्रजाजनोंके लिए विशेष रूपसे प्राप्त कर लिए गये हैं उनसे हमको वंचित कर दिया जाये और सन्धि द्वारा प्राप्त अधिकारोंके मामलेमें भारतीय ब्रिटिश प्रजाजनोंकी स्थिति यूरोपीय ब्रिटिश प्रजाजनोंकी अपेक्षा घटिया होती हो तो हो जाने दी जाये।

९ हमें सन्देह नहीं कि इस गणराज्यके उच्च न्यायालयके उक्त निर्णयपर तुरन्त ही अमल किया जायेगा और हमें जोहानिसबर्गमें और उसके अड़ोस-पड़ोसमें दूकानें और दफ्तर बन्द करके इस गणराज्यकी सरकार द्वारा मनचाहे ढंगसे कायम की गई बस्तियोंमें जाकर रहने और रोजगार करनेको विवश होना पड़ेगा। ये बस्तियाँ जोहानिसबर्गसे लगभग *तीन मील* परे, काफिरोंकी बस्तीसे लगी हुई होंगी। इसका परिणाम यह होगा कि हमारा व्यापार नष्ट हो जायेगा हम अपनी आजीविकाके साधनोंसे वंचित हो जायेंगे और हमें यह राज्य छोड़कर चले जानेको विवश होना पड़ेगा क्योंकि इस गणराज्यमें केवल जोहानिसबर्ग ही व्यापारका बड़ा केन्द्र और ऐसा स्थान है, जहाँ कि इस गणराज्यके अधिकतर भारतीय रहते तथा कारबार करते हैं।

इन सब कारणोंसे आपकी कांग्रेससे हमारी आदरपूर्वक प्रार्थना है कि वह हमारी शिकायतें दूर करानेके लिए हमारी तरफसे अपने प्रबल प्रभावका उपयोग करनेकी कृपा करे।

आपके अत्यन्त आज्ञाकारी सेवक,

(यहाँ अनेक व्यक्तियोंके हस्ताक्षर हैं)

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, ११-११-१८९८

१२. पत्र : लॉर्ड हैमिल्टनको

पो० ऑ० बॉक्स ११ २
जोहानिसबर्ग
मार्च १५, १८९८

परम माननीय लॉर्ड हैमिल्टन
सम्राज्ञीकी परिषद (प्रीवी कौंसिल) के सदस्य आदि
भारत-मन्त्री
लंदन, इंग्लैंड

परम माननीय महोदय,

हम अपनी और दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके जोहानिसबर्ग नगर-निवासी अन्य भारतीय ब्रिटिश प्रजाजनोंकी ओरसे आपकी सेवामें संलग्न प्रार्थनापत्र[1] अर्पित कर रहे हैं।

आपके अत्यन्त आज्ञाकारी सेवक,

ए० चेट्टी

ए० अप्पास्वामी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : मेमोरियल्स ऐंड पिटिशन्स, १८९८।

१. [illegible] औपनिवेशिक कार्यालय (कॉलोनियल ऑफिस) [illegible]

१३ तार 'मंचरजी भावनगरीको'[1]

जोहानिसबर्ग
अगस्त ३, १८९८

सर मंचरजी भावनगरी
लंदन

महामतने फैसला कर दिया कि सरकारको भारतीयोंको व्यापार तथा निवासके लिए पृथक् बस्तियोंमें हटानेका अधिकार है। न्यायाधीश कोटिसेन असहमत। भारी आतंक। हटाये जानेके भयसे व्यापार ठप्प हो रहा है। बड़े-बड़े हित खतरेमें। चेम्बरलेनके आश्वासनपर भरोसा कि परीक्षात्मक मुकदमेके बाद ट्रान्सवाल-सरकारसे लिखा-पढ़ी करेंगे। उन्होंने कहा था निश्चित मुद्दा प्राप्त करनेके लिए मुकदमा आवश्यक। कृपया सहायता करें।

ब्रिटिश भारतीय

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स मेमोरियल्स ऐण्ड पिटिशन्स १८९८।

१४ तार 'इंडिया' को[2]

जोहानिसबर्ग
[अगस्त ३, १८९८][3]

महामतने फैसला दे दिया है कि सरकारको अधिकार है कि वह ट्रान्सवालके भारतीयोंको व्यापार तथा निवास दोनोंके लिए पृथक बस्तियोंमें हटा दे। न्यायाधीश कोटिसेनने इस फैसलेसे मतभेद प्रकट किया। यहाँ भारी आतंक फैला हुआ है। डर है कि पृथक बस्तियोंमें हटाये जानेसे व्यापार ठप्प हो जायेगा। बड़े-बड़े हित खतरेमें पड़ गये हैं। हमें श्री चेम्बरलेनके इस वादेका ही आसरा है कि परीक्षात्मक मुकदमेके बाद वे ट्रान्सवाल-सरकारसे लिखा-पढ़ी करेंगे। उन्होंने कहा था कि लिखा पढ़ीके लिए निश्चित मुद्दा प्राप्त करनेके हेतु परीक्षात्मक मुकदमा जरूरी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ९-९-१८९८

१ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी लंदन-स्थित ब्रिटिश समितिके सदस्य, देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२।

२. इंडियाके यह तार जोहानिसबर्ग-स्थित संवाददाताने भेजा था, उसने प्रकाशित किया था। उस समय गांधीजी ही इंडियाके नाम, जोहानिसबर्ग तथा दक्षिण आफ्रिका-स्थित संवाददाताका काम कर रहे थे।

३ इस तारपर तारीख नहीं है और किसी तरहका है। लगता है कि यह भेजा भी उसी तारीखको गया होगा और इंडिया चूँकि एक साप्ताहिक पत्र था, इसलिए यह अगले अंकमें प्रकाशित हुआ।

१-२

उन्हें ठीक लगता था। मेरी अन्यत्र स्थित दूकानोंको माल भेजनेके लिए परवाना बिलकुल जरूरी नहीं है। फिर भी मैं परवाना चाहता हूँ ताकि मेरा डर्बनमें रहनेका खर्च पूरा हो सके। मुझे डर्बनमें मकान रखना ही पड़ता है, क्योंकि मुझे बार-बार अपने व्यापारिक सम्बन्धमें प्रिटोरिया तथा जर्मिस्टन जाना पड़ता है और मेरी पत्नी मेरे साथ इन स्थानोंकी यात्रा बहुत सहूलियतसे नहीं कर पाती। जर्मिस्टनमें मेरी दो दूकानें हैं। डर्बनमें दूकान खोलनेका परवाना मेरे पास कभी नहीं रहा। जर्मिस्टनकी दूकानें मेरे पास १५ वर्षसे अधिकसे हैं और इस बीच मैंने अपना सारा माल डर्बनमें खरीदा है। अगर परिषद परवाना देनेसे इनकार कर दे तो मुझे अपनी अन्यत्र स्थित दूकानें बन्द नहीं करनी पड़ेंगी। मेरी पत्नी पाँच महीनेसे डर्बनमें है। मेरा विवाह ८ वर्ष पूर्व भारतमें हुआ था और उसके बाद भी मैंने भारतकी यात्रा की है।

अब्दुल कादिरको गवाहीके लिए बुलाया गया। वे मुहम्मद कासिम ऐंड कम्पनी नामकी पेढ़ीके व्यवस्थापक-साझेदार हैं। यह कम्पनी उस मकानकी मालिक है, जिसके लिए परवानेकी अर्जी दी गई है। अब्दुल कादिरने कहा कि किराया १ पौंड तय किया गया है। घर इसके लायक है। इस दूकानके लिए पहले परवाना रह चुका है। डर्बनमें मेरी तीन या चार जायदादें हैं। उनकी कीमत १८ और २ पौंडके बीच है। इन जायदादोंका अधिकतर हिस्सा किरायेपर दिया जाता है। अगर अर्जदारको परवाना न मिला तो मुझे उस खास दूकानके किरायेकी हानि होगी। मैं अर्जदारको अनेक बरसोंसे जानता हूँ। मैं मानता हूँ कि वह एक अच्छा किरायेदार होगा।

इसके आगे अर्जदारकी प्रतिष्ठाके बारेमें एक अन्य भारतीय व्यापारीने गवाही दी।

श्री गांधीने कहा कि पिछली बार जब उन्होंने परिषदके सामने वकालत की थी तब दुर्भाग्यवश वे परिषदको यह नहीं जँचा सके थे कि मकान-मालिकके हितोंका खयाल किया जाना चाहिए। उस दिन मुहम्मद कासिम ऐंड कम्पनीके व्यवस्थापक-साझेदारने परिषदको बताया था कि उन्हें उस दूकानके लिए जो किरायेदार मिल सकते हैं उनमें वर्तमान अर्जदार सबसे अच्छा है। और यह कि उनके पास १८, पौंडकी जायदाद है, जिसका ज्यादातर हिस्सा अर्जदार जैसे लोगोंको किरायेपर दिया जाता है। उन्होंने आगे कहा था कि अगर अर्जदारको परवाना न दिया गया तो उन्हें अपनी दूकानके लिए कोई किरायेदार न मिल सकेगा। स्पष्ट है कि मकान-मालिकके हितोंका खयाल होना ही चाहिए। श्री अब्दुल कादिर मतदाता उतने ही अच्छे करदाता हैं जितना कि कोई भी दूसरा व्यक्ति। और उनकी आवाज परिषदको सुननी ही चाहिए। अब्दुल कादिरको अर्जदार एक ऐसा किरायेदार मिला है जिसे वे लम्बे अरसेसे जानते हैं। और अगर परवाना देनेसे इनकार किया गया तो मकान-मालिककी तकलीफ होगी। मकान केवल दूकानके लायक है और उसे किसी दूसरे प्रयोजनके लिए किरायेपर उठाना मकान-मालिकके लिए सम्भव न होगा। इस बातकी गवाही पेश की जा चुकी है कि पहले उस दूकानके लिए परवाना जारी रहा है। और श्री मैकविलियम ने जो एक बिलकुल बेलाग गवाह थे कहा है कि दूकान साफ-सुथरी और शोभास्पद है। इन परिस्थितियोंमें उन्होंने आशा व्यक्त की परिषद मकान-मालिकके हितोंको उचित महत्त्व देगी। जहाँतक स्वयं अर्जदारका सम्बन्ध है प्रमाण पेश किया जा चुका है कि उसकी सवारी यही है और वह डर्बनमें मकान रखनेका खर्च निकालनेके लिए यहाँ कुछ व्यापार करना चाहता है। अर्जदार खूब शिष्ट इज्जतदार और अपने व्यवहारमें सदा सर्वत्र है। वह अपनी बातें समझानेके लिए अंग्रेजीमें काफी बातचीत कर सकता है और अपना हिसाब अंग्रेजीमें रख सकता है। उसकी हिसाबकी किताबें पहले मंजूर की जा चुकी हैं और उनका [गांधीजीका] खयाल था कि परिषद मंजूर करेगी अर्जदार और भी बहुत सारा उसका है। दूकान या अर्जदार किसीके बारेमें रंच-मात्र भी आपत्ति नहीं हो सकती। परवाना-अधिकारीको अपने कारणोंमें जो-कुछ बताना अच्छा लगा है उसके अलावा अर्जदारमें और कुछ भी आपत्तिजनक नहीं है और, परिषदके प्रति पूरे सम्मानके साथ

उन्होंने निवेदन किया कि परवाना-अधिकारीका उन भाषणोंसे कोई वास्ता नहीं था जो अधिनियमके पास किये जाते समय विधान सभामें दिये गये थे। अधिनियमकी प्रस्तावनामें यह बतानेवाली कोई चीज नहीं है कि अधिनियमका मंशा यह है। उसमें तो सिर्फ यह कहा गया है कि थोक और फुटकर विक्रेताओंको परवाने देना विनियमित करना जरूरी है। वांछनीय या अवांछनीय व्यक्तियोंका कोई भेद उसमें नहीं किया गया। और, फिर भी परवाना अधिकारीने सरासर अपनी मर्यादाका उल्लंघन करके उन भाषणोंका हवाला दिया जो अधिनियमके पास होते समय दिये गये थे। वस्तुत उससे अपेक्षा तो यह थी कि अर्जीपर विचार करते समय वह न्यायान्यायकी भावनासे काम लेगा। परवाना-अधिकारीके लिए यह रास्ता अख्तियार करना बड़ी असाधारण बात थी और, श्री गांधीने आशा व्यक्त की कि चूँकि परवाना अधिकारीने दिये हुए कारणोंसे परवाना देना नामंजूर किया है, इसलिए परिषद उस निर्णयको उलट देगी। परवाना-अधिकारीने कहा है कि उसका विश्वास था उसका यह मानना ठीक था कि अर्जदार अवांछनीय वर्गमें शामिल किया जायेगा। परन्तु, उसे ऐसा माननेका क्या अधिकार था? श्री गांधीने कहा कि वे जानना चाहते हैं अवांछनीय कौन है और ऐसे व्यक्तिका वर्णन किस तरह किया जायेगा और वे इस मुद्देपर उपनिवेश-मन्त्रीकी राय पेश करना चाहते हैं। उन्होंने श्री चेम्बरलेनके एक भाषणके कुछ अंश पढ़कर सुनाये। श्री चेम्बरलेन ने यह भाषण उपनिवेशोंके प्रधानमन्त्रियोंके सम्मेलनमें दिया था। उसमें उन्होंने कहा था कि हमें साम्राज्यकी परम्पराओंका खयाल रखना चाहिए, जिनमें रंगके आधारपर किसी प्रजातिके पक्ष या विपक्षमें कोई भेदभाव नहीं किया जाता। उन्होंने भारतीयोंकी सम्पत्ति तथा सम्पन्नता और संकटके समय उन्होंने साम्राज्यकी जो सेवाएँ कीं उनका भी जिक्र किया था। श्री चेम्बरलेनके कहनेके अनुसार, आपको प्रवासियोंके आचरणका विचार करना है और यह कि कोई आदमी आपके रंगसे भिन्न रंगका होनेके कारण ही अवांछनीय नहीं बन जाता बल्कि इसलिए अवांछनीय होता है कि वह गन्दा है, या चरित्रहीन है, या कंगाल है, या उसमें कोई दूसरी आपत्तिजनक बात है। यह है, उपनिवेश-मन्त्रीके मतसे अवांछनीय प्रवासी और श्री गांधी के मुवक्किलके खिलाफ ऐसी कोई आपत्ति पेश नहीं की गई। अर्जदारके खिलाफ उठाई गई एक-मात्र आपत्ति यह है, और इसे उपनिवेश-मन्त्री ने अमान्य कर दिया है, कि वह एक भारतीय है और, इसलिए, वह अवांछनीय लोगोंके वर्गमें शामिल होता है। श्री गांधीने आशा व्यक्त की कि परिषद इस कारणको मंजूर नहीं करेगी। परवाना-अधिकारीने इन परवानोंके नामंजूर किये जानेका एकमात्र कारण बता कर भारतीय समाजको बहुत व्यग्र बना दिया है। इस परिषद-भवनमें कहा गया है कि भारतीयोंपर आपत्ति उनके रंगके कारण या उनके भारतीय होनेके कारण नहीं बल्कि इस कारण की जाती है कि वे साफ-सुथरे तरीकेसे नहीं रहते। यह आपत्ति श्री गांधीके मुवक्किलके विरुद्ध नहीं उठायी जा सकती। उन्होंने कहा कि वे बताना चाहते हैं अगर परिषदने यह परवाना देनेसे इनकार किया तो वह तमाम भारतीयोंको एक-बराबर करार दे देगी और उसके इस कामसे भारतीयोंको साफ-सुथरे तथा शोभास्पद मकानोंमें और हर तरहसे प्रतिष्ठित नागरिकोंकी भाँति रहनेका प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। इन परवानोंके बारेमें की जानेवाली प्रत्येक बात बाहर फैलती है और अगर मेरे मुवक्किल जैसे आदमीको परवाना देनेसे इनकार किया गया तो भारतीय कहेंगे कि नगर-परिषद यह नहीं चाहती कि वे साफ-सुथरे ढंगसे और ईमानदारीके साथ रहें बल्कि यह चाहती है कि वे किसी भी तरह रह लें। परिषदको भारतीय आबादीमें इस तरहकी भावना पैदा नहीं होने देनी चाहिए। पहले एक मौकेपर कहा गया था कि यह जरूरी है कि इन परवानोंको बढ़ावा न जाये। परन्तु प्रस्तुत मामलेमें

१६ सूचना: कांग्रेसकी बैठककी

[डर्बन]
सितम्बर १५, १८९८
गुरुवार

महाशय,

कल रातको ठीक ८ बजे कांग्रेसकी बैठक होगी। उसमें नीचेके मुताबिक काम होगा:

कांग्रेसकी रिपोर्ट — हिसाब — कर्जके बारेमें विचार — श्री नाज़रको भेजे गये पौंड दस की मंजूरी — सर मंचरजी भावनगरीको भेजे गये पौंड दसकी मंजूरी — श्री नाज़र जो कर्ज छोड़ आये हैं उसकी अदायगीके लिए माँग — अवैतनिक मन्त्रीका इस्तीफा — आदि काम किया जायेगा। श्री नाज़र बैठकमें हाजिर नहीं रहेंगे।

बैठक इतनी जरूरी है कि आशा है आप सब सदस्य हाजिर रहेंगे।

कल शामको ठीक ८ बजे अवैतनिक मन्त्रीकी रिपोर्ट आदि पर विचार करनेके लिए कांग्रेसकी बैठक होगी।[2]

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें लिखी गुजरातीकी मूल दफ्तरी प्रति (एस० एन० २८०७) से जो नेशनल आर्काइव्ज़, नई दिल्लीमें सुरक्षित है।

१७ तार: औपनिवेशिक सचिवको

डर्बन
अक्तूबर १, १८९८

प्रेषक
मुहम्मद कासिम कमरुद्दीन ऐंड कं०

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पी० मै० बर्ग

अभ्यागमों और प्रस्थान सम्बन्धी परवानोंके नियम गजटमें प्रकाशित। उनसे भारतीयोंमें बहुत असन्तोष उत्पन्न। गवर्नर महोदयके नाम प्रार्थनापत्र तैयार हो रहा है। भारतीय समाजकी ओरसे नम्र निवेदन है इस बीच नियम स्थगित रखें।

हस्तलिखित अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० २८०५) से। मूल प्रतिमें गांधीजीके हस्ताक्षर हैं।

१. सन् १८९७ में औपनिवेशिक प्रधानमन्त्रियोंका जो सम्मेलन हुआ था उसीके अवसरपर श्री नाजरको वहाँ भेजा गया था।

२. मूल प्रतिमें यह अनुच्छेद अंग्रेजीमें दिया हुआ है।

३. प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम १८९७ के अन्तर्गत जो अधिसूचना जारी हुई थी, उससे क्या क्या कठिनाइयाँ पैदा हो गई थीं, उनके लिए देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको," जुलाई २१, १८९८ और "प्रार्थनापत्र: चेम्बरलेनको," पृष्ठ ११।

४. देखिए पृष्ठ ११।

१८ प्रार्थनापत्र : भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको

जोहानिसबर्ग
दक्षिण आफ्रिकी गणराज्य
नवम्बर २८, १८९८

सेवामें
सभापति महोदय
भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस

श्रीमन्,

हम दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके जोहानिसबर्ग नगरवासी नीचे हस्ताक्षर करनेवाले ब्रिटिश भारतीय आपकी कांग्रेसका ध्यान आदरपूर्वक निम्न तथ्योंकी ओर आकृष्ट करना चाहते हैं :

१. इस गणराज्यके नवम्बर १९, १८९८ के स्टाट्स कूरेंट [सरकारी गजट] में प्रकाशित सरकारी सूचना नं० ६२१ के द्वारा सब भारतीयों और अन्य एशियाइयोंको आज्ञा दी गई है कि वे पहली जनवरी १८९९ से और उसके बाद केवल उन बस्तियोंमें रहें और व्यापार करें जिनका निर्देश इस राज्यकी सरकार करे। सूचनाकी नकल इस प्रार्थनापत्रके साथ संलग्न है।

२. हम आदरपूर्वक निवेदन करते हैं कि इस सरकारी सूचनाकी शर्तें "लंदन-समझौते" की शर्तोंके विरुद्ध हैं। समझौतेमें लिखा है कि सब ब्रिटिश प्रजाजनोंको बिना किसी भेदभावके दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यमें कहीं भी रहने और व्यापार करनेका पूरा अधिकार होगा।

३. यदि इस सरकारी सूचनाकी शर्तोंपर अमल किया गया तो हमारी भारी आर्थिक हानि हो जायेगी क्योंकि हममें से अनेकने अपना व्यापार जोहानिसबर्गमें और गणराज्यके अन्य कई स्थानोंमें जमा लिया है।

इसलिए हम आपकी कांग्रेससे सादर अनुरोध करते हैं कि हमें जो हानि पहुँचाई जा रही है उसका प्रतिकार करनेके लिए वह हमारी तरफ़ अपने प्रभावका उपयोग करे।

आपके आज्ञाकारी सेवक,
सी० ए० चेट्टी
ए० पिल्ले ऐंड क०
वी० मुरुस्वामी मुदलियार
ए० कृष्णस्वामी
ए० अप्पास्वामी

[संलग्न सूचना]

सरकारी सूचना नं० ६२१[1]

सर्वसाधारणकी जानकारीके लिए इसके द्वारा घोषित किया जाता है कि माननीय कार्यकारिणी परिषद्ने नवम्बर १५, १८९८ के अपने प्रस्ताव अनुच्छेद ११ १ के द्वारा निश्चय किया है कि

१. जो कुली और अन्य एशियाई वर्गमें शामिल किए जाते हैं, वे उन्हें ... बस्तियोंमें निवास और व्यापार नहीं करें, और जो कानूनके लिए किसी अन्य या ... या अन्य ... लगाये रखें तथा व्यापार

१. यह सूचना मूलत: डच भाषामें प्रकाशित हुई थी।

Copy No 4

NATAL GOVERNMENT TELEGRAPHS

FROM

Mahomed Cassim Camroodeen & Co

Please Write Distinctly

TO

Hon'ble Colonial Secretary
P. M. Burg.

Rules published Gazette re visitors' and embarkation passes have created great dissatisfaction among Indians Memorial to His Excellency being prepared. Humbly request behalf Indian Community suspension rules meanwhile.

3/11/98

Sd M K Gandhi

तार उपनिवेश-सचिवके नाम

२० मामलेका सार वकीलकी सलाहके लिए

मामलेके निम्नलिखित सारसे, जो गांधीजीने तैयार किया था, संकेत मिलता है कि विक्रेता-परवाना अधिनियमके मामलेसे सम्बन्धित कानूनी प्रश्नोंके बारेमें उनका क्या रुख था।

डर्बन
दिसम्बर २२, १८९८

थोक और फुटकर विक्रेताओंके परवाने सम्बन्धी कानून १८, १८९७ में संशोधनका प्रश्न वकीलकी सलाहके लिए मामलेका सार

एक नगर परिषद (टाउन कौंसिल) विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत परवाना देनवाले अधिकारीकी नियुक्ति करती है। वह उसे गुप्त अथवा सार्वजनिक रूपसे निर्देश देती है

(१) एशियाइयोंको परवाने न दिये जायें।
(२) अमुक व्यक्तियोंको परवाने न दिये जायें।
(३) अधिकतर एशियाई व्यापारियोंको परवाने न दिये जायें।

ऐसी हालतमें क्या परवानेका कोई उम्मीदवार सर्वोच्च न्यायालयसे फरियाद कर सकता है कि वह नगर-परिषदको दूसरा अधिकारी नियुक्त करने और ऐसे अधिकारीके विवेकाधिकारमें किसी तरहका दखल न देनेका आदेश दे?

एक नगर-परिषद अपने स्थायी कर्मचारियोंमें से किसी एकको — उदाहरणके लिए, नगर क्लार्क नगर-कोषाध्यक्ष या मुख्य रोकड़ियाको — परवाना-अधिकारी नियुक्त करती है।

ऐसी हालतमें क्या परवानेका कोई उम्मीदवार सर्वोच्च न्यायालयसे फरियाद कर सकता है कि वह नगर-परिषदको किसी बिलकुल स्वतंत्र व्यक्तिकी नियुक्ति करनेका आदेश दे? इस आवेदनका आधार यह हो कि स्थायी कर्मचारीपर नगर-परिषदका इतना अधिक प्रभाव रहेगा कि उससे नगर-परिषदके विचारोंसे प्रभावित हुए बिना निष्पक्ष निर्णय देनेकी अपेक्षा नहीं की जा सकती। साथ ही उम्मीदवार छोटी और बड़ी अदालतों — दोनों भिन्न अदालतोंके सामने फरियाद करनेके अधिकारसे अमली तौरपर वंचित रहेगा।

कानूनके अन्तर्गत एक परवाना अधिकारी किसी व्यक्तिको इस आधारपर परवाना देनेसे इनकार करता है कि वह भारतीय है तो क्या सर्वोच्च न्यायालयसे उस अधिकारीको यह आदेश देनेकी फरियाद की जा सकती है कि किसी आदमीका भारतीय होना परवाना देनेसे इनकार करनेका कोई कारण नहीं हो सकता और उसे अपने निर्णयपर इस निर्देशके अनुसार फिरसे विचार करना चाहिए?

अगर एक परवाना-अधिकारी तमाम भारतीयों या उनकी अधिकांश संख्याको परवाने देनेसे मनमाने तौरपर इनकार करता है तो क्या यह कहा जा सकता है कि उसने किसी एक या दोनों मामलोंमें विवेकाधिकारका प्रयोग किया है?

एक भारतीयने व्यापार करनेके परवानेकी अर्जी दी। उसकी अर्जी नामंजूर हो गई। फिर भी वह बिना परवानेके ही व्यापार करता रहता है। उसपर कानूनकी धारा की अवहेलना करनेका मुकदमा चलाया जाता है और उसे सजा दे दी जाती है। वह सजा भोग लेता है और व्यापार जारी रखता है। तो क्या सजाके बाद परन्तु कानूनी वर्षके अन्दर यह व्यापार नया व्यापार माना जायगा?

क्या कोई आदमी जितने दिनों तक बिना परवानेके व्यापार करता है उसके अपराध भी कानूनके अनुसार, उतने ही होते हैं?

जुर्माना वसूल करनेका तरीका क्या होगा?

अगर सजा पाये हुए व्यक्तिका माल किसीके पास गिरवी है और अगर गिरवीदारका उसपर कब्जा है तो क्या उस मालसे जुर्माना वसूल करनेका हक पहला माना जायेगा? याद रहे, इस अधिनियमके अन्तर्गत किसी बस्तीके व्यापारपर वसूल किया गया सारा जुर्माना उस बस्तीके कोषमें ही जमा किया जायेगा।

क्या सपरिषद गवर्नरको कानूनकी अन्तिम धाराके अन्तर्गत ऐसे नियम बनानेका अधिकार होगा जिनसे परवाना-अधिकारीके विवेकाधिकारपर अंकुश रहे और परवाना-अधिकारीके लिए अमुक परिस्थितियोंमें परवाने देना अनिवार्य हो?

मो० क० गांधी

हस्तलिखित अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० २९४) से।

२१ प्रार्थनापत्र चेम्बरलेनको

विक्रेता-परवाना अधिनियम (डीलर्स लाइसेंसिंग ऐक्ट) का अमल जिस ढंगसे भारतीयोंके अधिकारोंका भंग करके किया जा रहा था उसके बारेमें उपनिवेश-सरकारको एक प्रार्थनापत्र भेजा गया था। वह प्रार्थनापत्र नीचे दिया जा रहा है। गांधीजीने इसे नेटालके गवर्नरके नाम एक पत्रके साथ (देखिए पृष्ठ ५९) भेजा था।

डर्बन
सितम्बर १६, १८९८

सेवामें
परम माननीय जोजेफ चेम्बरलेन
मुख्य उपनिवेश-मन्त्री सम्राज्ञी-सरकार
लंदन

नेटाल उपनिवेशवासी ब्रिटिश भारतीयोंके नीचे हस्ताक्षर करनेवाले प्रतिनिधियोंका नम्र प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि

आपके प्रार्थी इसके द्वारा विक्रेता-परवाना अधिनियमके बारेमें सम्राज्ञी-सरकारकी सेवामें उपस्थित हो रहे हैं। पिछले वर्ष प्रार्थियोंने इसका विरोध किया था जो सफल नहीं हुआ।

प्रार्थी सम्राज्ञी-सरकारकी सेवामें इससे पहले ही यह प्रार्थनापत्र भेज देते परन्तु उनका इरादा एक तो यह था कि वे कुछ समय तक धीरजके साथ अधिनियमका अमल देखें और जान लें कि उन्होंने सम्राज्ञी-सरकारकी सेवामें उपर्युक्त विरोध प्रकट करते हुए जो प्रार्थनापत्र भेजा था उसमें अनुमानित आशंकाएँ आधार भी था नहीं। दूसरे, वे चाहते थे कि उपनिवेशके अन्दर ही सारी कोशिशें करके देख लें और अधिनियमकी समुचित न्यायिक व्याख्या भी करा ली जाये।

प्रार्थियोंको बहुत ही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि उपर्युक्त प्रार्थनापत्रमें व्यक्त की गई आशंकाएँ अनुमानसे भी ज्यादा सही साबित हुई हैं और यह भी कि अधिनियमकी

न्यायिक व्याख्या उपनिवेशवासी ब्रिटिश भारतीयोंके खिलाफ की गई है। भाग उल्लिखित एक मामलेमें सम्राज्ञीकी न्याय-परिषद (प्रीवी कौंसिल) के न्यायाधीशोंने यही निर्णय दिया है कि उपर्युक्त कानूनके अनुसार नगर-परिषद (टाउन कौंसिल) या नगर-निकाय (टाउन बोर्ड) के फैसलेके खिलाफ उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयमें अपील नहीं की जा सकती। इस निर्णयसे तमाम भारतीय व्यापारियोंका कारोबार ठप्प हो गया है। वे आतंकसे जकड़ गये हैं और उनमें असुरक्षाकी भावना और एक घबराहट प्रबल हो उठी है कि न जाने अगले वर्ष क्या होनेवाला है।

भारतीय समाज जिन मुसीबतोंसे गुजर रहा है वे बहुत-सी हैं। प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके अमलके बारेमें भी प्रार्थियोंने विरोध व्यक्त किया था जो निष्फल रहा। वह बहुत कष्ट और सन्तापका कारण बन रहा है। हालमें सरकारने इस कानूनके अधीन कुछ नियम बनाये हैं। उनके अनुसार ऐसे हर व्यक्तिसे एक पौंड शुल्क माँगा जाता है जो उक्त कानून द्वारा नहीं गई परीक्षाओंको उत्तीर्ण नहीं करता और जो एक दिनसे लेकर छः हफ्ते तक उपनिवेशमें रुकना चाहता है, या जो जहाजपर सवार होनेके लिए उपनिवेशसे गुजरना चाहता है। जबकि इन नियमों और उपर्युक्त कानूनसे निकलनेवाली दूसरी बातोंके सम्बन्धमें एक प्रार्थना-पत्र तैयार किया जा रहा था ठीक उसी समय सम्राज्ञीकी न्याय-परिषदका निर्णय वज्रमोलेकी तरह भारतीय समाजपर आ पड़ा। उसने भारतीय व्यापारियोंके भविष्यको इतना भयानक बना दिया कि उसके मुकाबलेमें और सब मुसीबतें फीकी पड़ गईं। इसलिए विक्रेता-परवाना अधिनियमको उससे पहले हाथमें लेना बिलकुल जरूरी हो गया है।

अब तो सम्राज्ञी-सरकारके हस्तक्षेपसे जो-कुछ राहत मिल पाये उसमें ही नेटालवासी भारतीय व्यापारियोंकी आशा रह गई है। प्रार्थी सम्राज्ञीके सब देशोंमें वही अधिकार और विशेषाधिकार पानेका दावा करते हैं जिनका उपभोग सम्राज्ञीके अन्य प्रजाजन करते हैं। इसका आधार १८५८ की घोषणा है। और नेटाल-उपनिवेशमें तो प्रार्थियोंके इस दावेका यह भी खास आधार है कि उन्होंने पहले जो प्रार्थनापत्र भेज थे उनसे सम्बन्धित खरीतेमें आपके पूर्वाधिकारीने कहा था सम्राज्ञी-सरकारकी इच्छा है कि सम्राज्ञीकी भारतीय प्रजाओंके साथ उनकी अन्य प्रजाओंकी बराबरीका व्यवहार किया जाये।"[1] इसके अलावा प्रार्थियोंको भरोसा है, सम्राज्ञी-सरकार नेटाल-उपनिवेशसे जिसकी वर्तमान समृद्धिका श्रेय गिरमिटिया भारतीयोंको है उपनिवेशवासी स्वतन्त्र भारतीयोंके साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करानेकी कृपा करेगी।

सारे संसारमें जहाँ-कहीं भी जरूरत हुई है भारतीय सिपाही ग्रेट ब्रिटेनकी लड़ाई लड़ते आ रहे हैं। इसी तरह भारतीय मजदूर उपनिवेश बसानेके लिए नये-नये क्षेत्र खोलते जा रहे हैं। अभी हालमें ही रायटरके एक तारमें बताया गया था कि रोडेशियाके बतनियोंको तालीम देनेके लिए भारतीय सैनिकोंको लाया जायेगा। क्या यह हो सकता है कि उन्हीं सैनिकों और मजदूरोंके देशभाइयोंको सम्राज्ञीके साम्राज्यके एक भागमें ईमानदारीके साथ जीविका कमानेकी इजाजत न हो?[2]

और फिर भी जैसाकि आगे बताई हुई बातोंसे स्पष्ट हो जायेगा नेटाल-उपनिवेशमें भारतीय व्यापारियोंको ईमानदारीके साथ जीविका उपार्जित करनेका अधिकार न देनेका संगठित प्रयत्न किया जा रहा है। इतना ही नहीं उन्हें उन अधिकारोंसे भी वंचित करनेका सान्दि प्रयत्न किया जा रहा है जिनका उपभोग वे वर्षोंसे करते आ रहे हैं। और जिस अस्त्रसे नेटालके यूरोपीय उपनिवेशी अपने इस ध्येयको पूरा करनेकी आशा करते हैं वह है उपर्युक्त कानून।

१. देखिए पृष्ठ ३८।
२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ २४।

हुई।[1] वहाँ यह साबित कर दिया गया कि अर्जदारने पाँच वर्ष तक गिरमिटियाके तौरपर उपनिवेशकी सेवा की है। वह तेरह वर्षसे स्वतंत्र भारतीयके रूपमें उपनिवेशमें रह रहा है। उसने अपने परिश्रमके बलपर ही व्यापारीकी हस्ती हासिल की है। उसके पास इसी उपनिवेशकी मुई नदीके क्षेत्रमें छः वर्ष तक व्यापार करनेका परवाना रह चुका है। उसके पास ५ पौंड नकद पूँजी है। नगरमें उसके पास माफीकी जमीनका एक टुकड़ा है। उसका रहनेका मकान अलग और दूकानकी इच्छित जगहसे कुछ दूर है और उसने कानूनकी माँग पूरी करनेके लिए एक यूरोपीय हिसाब-नवीसको नियुक्त कर लिया है। तीन यूरोपीय व्यापारियोंने प्रमाणित किया कि वह इज्जतदार और ईमानदारीसे कारोबार करनेवाला व्यक्ति है। अर्जदारके वकीलने माँग की कि परवाना-अधिकारीने जिन कारणोंसे परवाना देनेसे इनकार किया है वे बताये जायें और अर्जी-सम्बन्धी कागजातकी नकल दी जाये। नगर-परिषदने इन दोनों अर्जियोंको नामंजूर कर दिया और परवाना-अधिकारीके निर्णयको बहाल रखा। इस निर्णयके खिलाफ सर्वोच्च न्यायालयमें अपील दायर की गई। यह अपील फैसलेके न्याय-अन्यायके आधारपर नहीं की गई, क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय इसके पहले ही बहुमतसे फैसला कर चुका था कि विक्रेता-परवाना विधेयकके कारण उसे न्याय-अन्यायके आधारपर अपीलें सुननेका हक नहीं है। बल्कि यह इन अनियमितताओंके आधारपर की गई कि परवाना न देनेके कारण बतानेसे इनकार किया गया। अर्जदारके वकीलको कागजातकी नकल नहीं दी गई और जबकि अपीलकी सुनाई हो रही थी उस समय परिषदके सदस्य टाउन-सॉलिसिटर, टाउन-क्लार्क तथा परवाना-अधिकारीके साथ एक एकान्त कमरेमें गुप्त मन्त्रणाके लिए चले गये। सर्वोच्च न्यायालयने अपील सुनना मंजूर कर लिया। अपील करनेवालेके पक्षको मंजूर करके नगर-परिषदकी कार्रवाईको रद कर दिया और नगर-परिषदको फरियादीका खर्च भरने तथा मामलेकी सुनवाई फिरसे करनेका आदेश दिया। फैसला देते हुए स्थानापन्न मुख्य न्यायाधीशने कहा :

> इस मामलेमें जो बात साफ गलत महसूस होती है वह है कि कागजातकी नकल नहीं दी गई। फरियादीने परिषदको अर्जी देकर कागजातकी नकल देने और परवाना देनेसे इनकार करनेके कारण बतानेकी माँग की थी। अर्जी अनुचित बिलकुल नहीं थी। न्यायके हकमें उसे मंजूर कर लिया जाना चाहिए था। परन्तु उसे नामंजूर कर दिया गया। और जब फरियादीका वकील परिषदके सामने आया, वह कागजातके बारेमें बिलकुल अनभिज्ञ था और उसे पता नहीं था कि परवाना-अधिकारीके मनमें क्या बात चल रही है। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि इस मामलेमें नगर-परिषदकी कार्रवाई अत्याचारपूर्ण थी। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि दोनों अर्जियोंको नामंजूर करनेकी कार्रवाई अन्यायमूलक और अनुचित थी। (टाइम्स ऑफ़ नेटाल मार्च १, १८९८)।

न्यायाधीश श्री मेसनने कहा :

> जिस कार्रवाईके खिलाफ अपील की गई है, वह नगर-परिषदके लिए लज्जाजनक है। और मुझे इस तरहकी कड़ी भाषाका प्रयोग करनेमें कोई संकोच नहीं है। इन परिस्थितियोंमें तो मैं मानता हूँ यह कहना कि नगर-परिषदके सामने अपीलकी सुनवाई हुई थी, शब्दोंका दुरुपयोग करना है। (टाइम्स ऑफ़ नेटाल १ मार्च १८९८)।

१ देखिए "सोमनाथ महाराजका मुकदमा", मार्च ५, १८९८।

नगर-परिषदके सामने अपीलकी सुनवाई फिरसे हुई। इस बार कामकाजकी नकल दे दी गई। और जब परवाना-अधिकारीसे पूछा गया कि परवाना देनेसे इनकार करनेके और कारण क्या हैं तो उसने कहा "अर्जदार जिस तरहका व्यापार कर रहा है उसकी पर्याप्त व्यवस्था उपनगरों और बस्तियोंमें मौजूद है। उसे डर्बनमें व्यापार करनेका कोई अधिकार नहीं है।" परवाना-अधिकारीका निर्णय बहाल रखा गया। इसके लिए एक परिषद-सदस्यने प्रस्ताव किया कि "जो परवाने अबतक दिये जा चुके हैं उनका शतमान आबादीकी जरूरत से ज्यादा है। इस दृष्टिसे परवाना देना अवांछनीय है।" परिषदने इन बातोंका कोई खयाल नहीं किया कि जिस स्थानके लिए परवाना माँगा गया था वहाँ कुछ ही महीने पहले एक दूकानदार मौजूद था। वह डर्बनसे चला गया था इसलिए परवानोंकी संख्या बढ़ानेका कोई प्रश्न नहीं था। साथ ही मकान-मालिक भारतीय हैं उनके भी प्रतिनिधि परिषदमें हैं और उन्हें भी हक है कि परिषद उनके हितोंका खयाल करे। सम्बद्ध मकान सिर्फ दूकानके लिए उपयुक्त है। वह आज तक करीब-करीब खाली पड़ा है और इससे उसके मालिकको अबतक १५ पौंडकी हानि हो चुकी है। प्रार्थी इसके साथ परिषदकी पहली कार्रवाईकी नकल नत्थी कर रहे हैं (परिशिष्ट क)। इससे कार्रवाई-सम्बन्धी भावना स्पष्ट हो जाती है।

मुहम्मद मजम ऐंड कम्पनीने परवाना-अधिकारीको एक ऐसे मकानमें व्यापार करनेके लिए परवानेकी अर्जी दी जिसके मालिक एक भारतीय सज्जन हैं। इन सज्जनकी डर्बनमें बहुत-सी मिल्क मुतवल्ला जायदाद है और इनकी आमदनीका मुख्य जरिया ही व्यापारियोंको अपने मकान किरायेपर देना है। परवाना-अधिकारीने परवाना देनेसे इनकार कर दिया। इसके कारण वैसे ही दिये जैसे ऊपर बताये गये हैं। इसपर मकान-मालिकने परवाना-अधिकारीके निर्णयके खिलाफ नगर-परिषदके सामने अपील की। नगर-परिषदने अपील खारिज कर दी। फलतः मकान-मालिकको अपने मकानका किराया घटा देना पड़ा। और मुहम्मद मजम ऐंड कम्पनी तो बिलकुल बरबाद हो गई है। उसके सब साझेदारोंको पूरी तरह अपने एक साझे दारके कामपर निर्भर करना पड़ता है। वह साझेदार टीनसाज है।

हाशम मुहम्मदका पेशा फेरी लगाना है। वह पहले भी डर्बनमें फेरीवाला रह चुका है। वह परवाना अधिकारीके पास और वहाँसे नगर-परिषदके पास गया परन्तु उसे फेरी लगानेका विशेषाधिकार देनेसे इनकार कर दिया गया। उसने परिषदको बताया कि उसे यह विशेषाधिकार देनेसे इनकार करनेका अर्थ उसे भुखमरीका वरण करनेको कहनेके बराबर होगा। वह दूसरे उपायोंसे रोटी कमानेकी कोशिश कर चुका है परन्तु सफल नहीं हुआ। कोई दूसरा काम करनेके लिए उसके पास पूँजी नहीं है। उसने परिषदको यह भी बताया कि किसी यूरो-पीयके साथ उसकी कोई स्पर्धा नहीं है फेरीका काम करना तो करीब-करीब भारतीयोंकी ही विशेषता है और वे उसके यह काम करने पर कोई आपत्ति नहीं करते। परन्तु ये सब मिन्नतें बेकार हुईं।

श्री दादा उस्मान पन्द्रह वर्षसे ज्यादा ही समय इस उपनिवेशमें हैं। उन्होंने काफी अच्छी अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त की है। पहले वे दक्षिण आफ्रिकाकी तत्कालीन प्रमुख व्यापारिक पेढ़ीसे सम्बन्ध रखते थे। अब इस उपनिवेशके वर्मासिगा और ट्रान्सवालके फ्राईहाइड नामक स्थानोंमें उनका व्यापार चलता है। इस वर्ष उन्होंने भारतसे अपनी पत्नी और बच्चोंको बुलवाया। परन्तु ऊपरकी दोनों जगहोंमें उनकी पत्नीको उपयुक्त संगी-साथी नहीं मिले। फिर परिवारके आ जानेसे उनका खर्च भी बढ़ गया। इन दोनों दृष्टियोंसे उन्होंने डर्बनमें बसनेका इरादा किया।

१ "दादा उस्मानका मुकदमा" सितम्बर १४ १८९८।

खयाल यह था कि वे अपने उन स्थानोंके कारोबारके लिए खुद माल भेज दिया करेंगे और डर्बनमें भी कुछ व्यापार कर लेंगे। उन्हें परवाना पानेका इतना दृढ़ विश्वास था कि उन्होंने भारतीय व्यापारियोंकी एक पेढ़ीसे डर्बनकी एक मुख्य सड़कपर ११ पौंड मासिक किरायेका एक भारी मकान ले लिया। इतना ही नहीं उन्होंने करीब १ पौंड मूल्यका साज-सामान भी खरीद लिया। बादमें उन्होंने परवाना-अधिकारीको परवानेके लिए अर्जी दी। परवाना अधिकारीने दस्तूरके मुताबिक उनके काम-काजकी बारीकीके साथ छान-बीन की उनके अंग्रेजी और हिसाब-किताब रखनेके ज्ञानकी जाँच की और उन्हें तीन बार अपने सामने पेशीपर बुलानेके बाद उनकी अर्जी मंजूर करनेसे इनकार कर दिया। उन्होंने और मकान-मालिक दोनोंने फैसलेके खिलाफ अपील की। नगर-परिषदके पूछनेपर परवाना अधिकारीने निम्नलिखित कारण बताये

> मैं समझता हूँ, १८९७ का १८वाँ कानून अमुक वर्गोंके लोगोंके जिन्हें आम तौरपर अवांछनीय माना जाता है व्यापारके परवाने पानेपर कुछ रोक लगानेके लिए बनाया गया था। और मैं मानता हूँ कि अर्जदार एक ऐसा आदमी है जो उसी वर्गमें शामिल किया जायेगा। इसके अलावा उसको डर्बनमें व्यापार करनेका परवाना कभी प्राप्त नहीं था। इसलिए उसे परवाना न देना मैंने अपना कर्तव्य समझा है।

इस तरह, इतने-सारे परवाने देनेसे इनकार करनेका सच्चा कारण इस मामलेमें पहली बार नग्न रूपमें प्रकट किया गया। डर्बनके एक प्रमुख व्यापारी श्री अलेक्जैंडर मैकविलियम ने इस विषयमें परिषदके सामने गवाही देते हुए कहा था

> मैं बहुत वर्षोंसे अर्जदारको जानता हूँ — १२ या १४ वर्षोंसे। मैंने उसके साथ बहुत कारोबार किया है। कभी-कभी उसपर मेरा पाँच-पाँच सौ पौंड तक कर्ज रहा है। उसके साथ मेरा कारोबार पूरी तरहसे सन्तोषजनक रहा है। मैंने उसे बहुत अच्छा और इज्जतदार व्यापारी पाया है। मैं हमेशा ही उसकी बातपर विश्वास कर सका हूँ। करदाताकी हैसियतसे मुझे उसके परवाना पानेपर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। वह अंग्रेजीमें हिसाब-किताब रख सकता है या नहीं यह मैं नहीं जानता। हाँ वह अंग्रेजी में लिखकर अपने विचार भली भाँति व्यक्त कर सकता है। परन्तु जिस ढंगसे उसने इस पत्रमें लिखा है और जिस ढंगसे वह अपना कारोबार चलाता है उससे मैं अनुमान करता हूँ कि वह हिसाब-किताब रख सकेगा (अर्जदारका लिखा हुआ एक पत्र पेश किया)।

अर्जदारकी स्थितिके बारेमें जो बातें ऊपर कही गई हैं उनके अलावा उसकी अंग्रेजीमें दी हुई गवाहीसे नीचे लिखी बातें भी प्रकट हुईं

> मेरा निजी पारिवारिक खर्च लगभग २ पौंड माहवार है। दूकानका खर्च इससे अलग है। दूकानके अलावा मेरे पास एक मकान है। मेरे मकान और दूकानमें बिजली की रोशनी है। मेरा कारोबार एस बुचर ऐंड सन्स रैंडल्स ब्रदर ऐंड हडसन एच ऐंड डी मैक-कविन एल कैरमान ए फाल ऐंड को एम लारी तथा अन्योंके साथ है। मैं अंग्रेजीमें सारे पत्र लिख सकता हूँ। मैं हिसाब रखना जानता हूँ। डाईहाउसमें मैंने अपना हिसाब-किताब खुद रखा है। मैं खाता रोजनामचा रकमी बही रोकड़ बही

मानक हिसाब और रोकड़-बही रखता हूँ। मैं हिसाबकी सिंगल और डबल ऐंट्रीकी पद्धति जानता हूँ।

मकान-मालिक श्री अब्दुल कादिरने कहा

मैं एम सी कमरुद्दीन ऐंड कम्पनीका प्रबन्धक हूँ। (जिसकी बात चल रही है) उस दूकानके लिए पहले परवाना जारी था। परवाना डिमोकको मिला था। डर्बन में मेरे ३ या ४ मकान हैं। मूल्यांकन-सूची में उनकी कुल कीमत १८, या २ पौंड है। इस जायदादका ज्यादातर हिस्सा मैं किरायेदारोंको किराये पर देता हूँ। अगर दादा अब्दुल्लाको परवाना नहीं मिलता तो मुझे किरायेकी हानि उठानी पड़ेगी। वे बहुत अच्छे किरायेदार हैं। मैं उन्हें लम्बे अरसे से जानता हूँ। उनका रहन-सहन अच्छा है। उनके घरमें साज-सामान बहुत है। मैं परवाना-अधिकारीके फैसलेसे सन्तुष्ट नहीं हूँ।

आपने उपनिवेशोंके प्रधानमंत्रियोंके सामने अवांछित व्यक्ति की जो व्याख्या की थी[1] उसकी परिषदको याद दिलाई गई। व्याख्या यह थी इसलिए कि कोई आदमी हमसे भिन्न रंगका है वह जरूरी तौरपर अवांछनीय प्रवासी नहीं है। अवांछनीय तो वह है जो गन्दा है या दुराचारी है, या कंगाल है, या जिसके बारेमें कोई अन्य आपत्ति है जिसकी व्याख्या संसद के कानून द्वारा की जा सकती है। परन्तु यह सब केवल अरण्य-रोदन सिद्ध हुआ। जिस परिषद-सदस्य ने १८९७ में प्रदर्शन-समितिका झण्डा उठाया था और जो कूरलैंड तथा नादरीने भारतीय यात्रियोंको जरूरत होनेपर बल प्रयोग द्वारा लौटानेके लिए तैयार था वह कायल नहीं हुआ कि परवाना-अधिकारीकी कार्रवाई गलत है। और उसने प्रस्ताव किया कि उसके निर्णयकी पुष्टि कर दी जाये। प्रस्तावका समर्थन करनेके लिए खड़ा होनेको कोई तैयार नहीं था और थोड़ी देरके लिए ऐसा मालूम हुआ कि परिषद न्याय करनेको तैयार है। परन्तु आखिर एक अन्य सदस्य श्री कालिन्स सहायताको बढ़े और उन्होंने निम्नलिखित भाषणके द्वारा प्रस्तावका समर्थन किया

> उन्हें आश्चर्य नहीं कि परिषद परवाना देनेसे इनकार करनेको बहुत अनिच्छुक है। परन्तु उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि परवाना देनेसे इनकार कर दिया जायेगा। [उनके कथनानुसार] कारण यह नहीं है कि अर्जदार या व्यापारका प्रस्तावित स्थान अयोग्य है बल्कि यह है कि अर्जदार एक भारतीय है। श्री गांधीने जो-कुछ कहा है वह बिलकुल सच है और उन्हें (श्री कालिन्सको) यह कहनेमें कुछ राहत महसूस हुई कि अधिकतर परवाने देनेसे इस आधारपर इनकार किया गया है कि अर्जदार भारतीय हैं। परिषदको एक ऐसी नीति अमलमें लानी पड़ रही है जिसे संसदने जरूरी समझा है। इससे परिषद बड़ी अप्रिय स्थितिमें पड़ गई है। नेटालकी जनताके प्रतिनिधिके रूपमें संसद इस निर्णयपर पहुँची है कि भारतीयोंका डर्बनके व्यापारपर अपना प्रभुत्व बढ़ाना अवांछनीय है। इसलिए परिषदको ये परवाने देनेसे इनकार करनेके लिये लगभग बाध्य हो जाना पड़ा है, जो अन्यथा आपत्तिजनक नहीं है। उन्होंने कहा, व्यक्तिगत रूपसे मैं मानता हूँ कि परिषदके सामने उपस्थित होकर परवाना माँगनेके लिए अर्जदार एक

1. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३११।

नगर-परिषद एक ब्रिटिश उपनिवेशकी है। और यह एक न्यायालयके रूपमें अपील सुननेके लिए बैठी थी। इसने अस्वच्छताको और बेईमानीके व्यापारको प्रोत्साहन दिया है। अब प्रार्थी भारतीय समाजके ज्यादा कमजोर सदस्योंको क्या उत्साह दिखाएँ? वे ज्यादा कमजोर सदस्य कह सकते हैं आप हमसे स्वच्छताके आधुनिक तरीके अपनाने और ज्यादा अच्छी तरह रहनेको कहते हैं। और आप आश्वासन देते हैं कि सरकार हमारे साथ न्यायका व्यवहार करेगी। हम इसपर विश्वास नहीं करते। क्या आपके दादा उस्मानका रहन-सहन उनके ही स्तरके किसी भी यूरोपीयके बराबर नहीं है? क्या नगर-परिषदने इसका कोई खयाल किया है? नहीं। हम अच्छे रहें या बुरे रहें हमारी हालत न अच्छी होगी न बुरी होगी। यूरोपीय उपनिवेशी पुकार-पुकार कर कहते आ रहे हैं कि उन्हें आधुनिक ढंगसे रहनेवाले इज्जतदार भारतीयोंके बारेमें कोई आपत्ति नहीं होगी। प्रार्थियोंने हमेशा ही यह कहा है कि कथित अस्वच्छताके आधारपर जो आपत्तियाँ की जाती हैं वे झूठी हैं। और साफ है कि डर्बन नगर-परिषदने हमारा यह दावा सही साबित कर दिया है।

तथापि न्यूकैसिल नगर-परिषद डर्बनकी परिषदसे भी कुछ आगे बढ़ गई है। उसके परवाना-अधिकारीने पिछले साल परवाना पाये हुए आठ भारतीय दूकानदारोंमें से हर एकको इस वर्ष कानूनके अनुसार परवाने देनेसे इनकार कर दिया है। दीख पड़ता है कि उसे ऐसा करनेका आदेश दिया गया था। इस तरह तमाम लोगोंको परवाने न देनेसे उपनिवेशके भारतीय व्यापारियोंके दिलोंमें आतंक छा गया है। इन दूकानदारोंका कारबार स्थगित होनेसे न केवल ये और इनके आश्रित ही मारे जायेंगे बल्कि डर्बनकी कुछ पेढ़ियाँ भी जो उनका पोषण करती हैं बैठ जायेंगी। इन लोगोंकी पूँजी उस समय दस हजार पौंडसे अधिक कूती गई थी। और उनपर सीधे आश्रित रहनेवाले लोगोंकी संख्या चालीससे अधिक थी। इसलिए नगर-परिषदके सामने अपील करनेके लिए भारी खर्च उठाकर एक प्रमुख वकील श्री लॉटनको नियुक्त किया गया। फलतः (आठ दूकानदारोंके) नामोंमें से ५ परवाने मंजूर किये गये। शेष तीन व्यक्तियोंने जिन्हें परवाने देनेसे इनकार किया गया सर्वोच्च न्यायालयमें अपील की। परन्तु उसने बहुमतसे अपील नामंजूर कर दी। कारण यह बताया गया कि कानूनकी पाँचवीं धाराके अनुसार सर्वोच्च न्यायालयको उसपर विचार करनेका अधिकार नहीं है। चूँकि बात बहुत महत्त्वकी थी और चूँकि मुख्य न्यायाधीशने शेष दो न्यायाधीशोंसे मतभेद व्यक्त करते हुए वादियोंके पक्षमें राय दी थी इसलिए मामलेको सम्राज्ञीकी न्याय-परिषद (प्रीवी कौंसिल) के सामने ले जाया गया। वादियोंके वकीलोंके पाससे लन्दनसे आये हुए एक तारमें बताया गया है कि अपील खारिज हो गई है। न्यायके नाते कहना ही होगा कि न्यूकैसिल नगर परिषदने कृपा करके तीनों वादियोंको अपीलके दौरानमें अपना कारबार जारी रखने दिया है। परन्तु उसकी नीति स्पष्ट है। अगर यह शिष्टताके साथ तथा आन्दोलन खड़ा किये बिना न्यूकैसिलसे भारतीयोंका सफाया कर सकती तो उसने पीड़ित पक्षपर होनेवाले परिणामोंका खयाल किये बिना वैसा कर डाला होता। परवाना-अधिकारीने परवाने देनेसे इनकार करनेके जो कारण बताये थे वे उपर्युक्त सभी मामलोंमें एक ही थे — अर्थात् इस अर्जीके सम्बन्धमें सफाई-दारोगाने १८९७ के कानून १८ के नियमोंके खण्ड ४ की शर्तके अनुसार जो रिपोर्ट तैयार की है वह प्रतिकूल है और सम्बद्ध मकान कानूनके खण्ड ८ के अनुसार इच्छित व्यापारके योग्य नहीं है। इसलिए मैंने अर्जीको नामंजूर कर दिया। परवाना देनेसे इनकार होनेके पहले किसी भी अर्जदारको सफाई-दारोगाकी रिपोर्ट या परवाना-अधिकारीके कारणोंका कोई ज्ञान नहीं था। उनसे अपने मकानोंमें किसी तरहका सुधार या फेरफार करनेको भी

नहीं कहा गया था। परवाना-अधिकारीने अपने कारण सिर्फ तब बताये जब कि मामलेकी अपील परिषदके सामने गई और परिषदने उससे कारण बतानेको कहा। उपर्युक्त तीन अर्जदारोंको जब परवाना देनेसे इनकार किया जा चुका और उन्हें मालूम हुआ कि इनकार क्यों किया गया है, तब उन्होंने तुरन्त कहा कि वे अपने मकानोंमें सफाई-आरोग्यके सुझाये हुए सब सुधार या फेरफार करनेको तैयार हैं। परन्तु परवाना-अधिकारी यह सब सुननेको तैयार नहीं था। उसने उनकी अर्जियोंपर विचार करनेसे इस आधारपर इनकार कर दिया कि नगर-परिषदने उसका पहला निर्णय बहाल कर दिया है (परिशिष्ट च)। यहाँ यह देना अनुचित न होगा कि अर्जदारोंने यह कभी नहीं माना कि उनके मकान अस्वच्छ हैं। और उन्होंने साबित करनेके लिए डाक्टरी प्रमाण भी पेश किये थे कि मकानोंकी हालत सन्तोषजनक है। प्रार्थी इसके साथ एक उद्धरण नत्थी कर रहे हैं (परिशिष्ट छ)। यह नगर-परिषदके सामने हुई कार्रवाईका एक अंश है। इससे तीनों वादियोंका मामला अधिक पूर्ण रूपमें स्पष्ट हो जायेगा। न्यूकैसिल नगर-परिषदमें आठ सदस्य हैं — एक डाक्टर, एक वकील, एक बढ़ई, एक जल-पानकी दुकानका मालिक, एक बाल-कर्मचारी, एक पुस्तक-विक्रेता और दो वस्तु-भण्डार मालिक। परवाना-अधिकारी नगर-परिषदका क्लार्क भी है। फलतः जब नगर-परिषद परवाना अधिकारीके फैसलेके खिलाफ अपील सुननेको बैठती है तब वही उसका क्लार्क भी होता है।

परन्तु डंडीका स्थानिक निकाय (लोकल बोर्ड) तो डर्बन और न्यूकैसिल दोनोंकी नगर परिषदोंको मात देना चाहता है। पिछले नवम्बरमें परवाना-अधिकारीने एक चीनीको व्यापारका परवाना दिया था। और अधिकतर करदाताओंने उस अधिकारीके निर्णयके खिलाफ अपील की। स्थानिक निकायने दोके विरुद्ध तीनके बहुमतसे एक-मात्र इस आधारपर परवाना रद कर दिया कि अर्जदार चीनी राष्ट्रीयताका था। अर्जदारके सॉलिसिटरने स्थानिक निकायको उसके निर्णयके विरुद्ध अपीलकी सूचनामें अपीलके ये आधार बताये थे

(१) कि, आपके निकाय के कुछ सदस्य व्यापारी और दुकानदार और फुटकर व्यापारके परवानेदार हैं। इसलिए वह होर्ई-ली ऐंड कम्पनी के हितोंको हानि पहुँचाये बिना अपीलके विषयका निपटारा करनेमें असमर्थ था — सम्भवतः उसे निपटारा करनेका अधिकार ही नहीं था।

(२) कि, आपके निकायकी रचना ऐसी है कि होर्ई-ली ऐंड कम्पनीको फुटकर व्यापारका परवाना न दिया जानेमें निकायके कई सदस्योंका व्यक्तिगत और सीधा आर्थिक स्वार्थ है। इसलिए उन्हें चाहिए था कि न तो वे निकायकी बैठकमें उपस्थित होते और न इस मामलेपर अपनी राय ही देते।

(३) कि आपके निकायके कुछ सदस्यों ने जो बैठकमें शामिल हुए थे होर्ई-ली एंड कम्पनीकी पेढ़ीके खिलाफ व्यक्तिगत द्वेष और पक्षपात प्रकट किया। कारण यह था कि पेढ़ीके सदस्य चीनके निवासी हैं। और, खास तौरसे एकने तो यहाँतक कहा "मैं किसी चीनीको कुत्तेके बराबर भी मौका नहीं दूँगा।"

(४) कि, अपील करनेवाले करदाताओंने कोई गवाही या कानूनी सबूत पेश नहीं किया कि होर्ई-ली ऐंड कम्पनीके लोग उपनिवेशमें रहने योग्य नहीं हैं।

(५) कि अपील करनेवाले करदाताओंने कोई गवाही या कानूनी सबूत पेश नहीं किया कि परवाना-अधिकारीने जिस मकानके लिए परवाना दिया था वह तबतक

व्यापारके लिए बिलकुल अयोग्य और अनुपयुक्त है जबतक कि मकान-मालिक कोई-सी ऐंड कम्पनीके साथ अपने पट्टेमें किये हुए इकरारके अनुसार नया मकान नहीं बना देता।

(५) कि, निकायका निर्णय और प्रस्ताव न्यायके सिद्धान्तों तथा कानून दोनोंकी दृष्टिसे भी अयोग्य और अन्यायपूर्ण है।

मामलेके कागजात देखनेसे मालूम होता है कि यह चीनी एक ब्रिटिश प्रजाजन है। फिर भी उसकी जो गति हुई वही भारतीयोंकी भी होना असम्भव नहीं है। इस मामलेमें सर्वोच्च न्यायालयने अपील सुननेसे इनकार कर दिया। इसका कारण ऊपर बताये हुए न्यू कैसिलके मामलेका फैसला ही था।

गत नवम्बरमें करदाताओंके अनुरोधपर डंडीके स्थानिक निकायके अध्यक्षने एक सभा बुलाई थी। उसका उद्देश्य एशियाइयोंका नगरमें व्यापार करने देनेके औचित्यपर विचार विमर्श करना था। इस समय डंडीमें लगभग दस भारतीय वस्तु-भण्डार हैं। सभाकी कार्रवाईके निम्नलिखित अंशोंसे मालूम होगा कि स्थानिक निकाय अगले वर्ष उनके साथ कैसा बरताव करना चाहता है

श्री सी० जी० विल्सन (स्थानिक निकायके अध्यक्ष) ने अपने मंतव्यसे बहुत अच्छा असर पैदा किया। उन्होंने सभी विषयोंमें निकायकी कार्रवाईका पोषण किया और कहा कि हमारा प्रयत्न अगर सम्भव हो तो, नगरको एशियाई अभिशापसे मुक्त कर देनेका है। वे सिर्फ यहीं नहीं, बल्कि सारे नेटाल उपनिवेशके लिए एक अभिशाप हैं। उन्होंने सभाको आश्वासन दिया कि चीनी व्यापारीके सम्बन्धमें हमारी कार्रवाइयाँ स्वार्थ-रहित और पक्षपातहीन थीं और परवानेको रद करके हमने ईमानदारीके साथ वही किया है जिसे हम नगरके प्रति अपना कर्तव्य समझते थे। उन्होंने आशा व्यक्त की कि करदाता अपनी राय जोरोंसे व्यक्त करके बता देंगे कि उनका इरादा इस अभिशापको नामशेष कर देनेका है।

श्री डब्ल्यू० एल० ओल्डएकर (निकायके एक सदस्य) ने कहा कि उन्होंने और निकायके अन्य सदस्योंने जो-कुछ ठीक समझा वही किया है। उन्होंने सभाको आश्वासन दिया कि उनकी कार्रवाइयोंमें पक्षपातका कोई भाव नहीं था और सभासद भरोसा कर सकते हैं कि वे निकायके सदस्यकी हैसियतसे अपने कर्तव्यका पालन अवश्य करेंगे।

श्री एल० जोन्सने इसके बाद प्रस्ताव पेश किया कि, स्थानिक निकाय अवांछनीय लोगोंको परवाने देना रोकनेके लिए जो-कुछ भी उसकी शक्तिमें हो सब करे; कि, परवाना-अधिकारीको भी इस आशयका निर्देश दिया जाये; और यह कि इनमें से जिनके परवाने रद किये जा सकें उनमेंको रद करनेकी कार्रवाई की जाये। यह प्रस्ताव सर्व सम्मतिसे हर्ष-ध्वनिके साथ मंजूर हो गया।

श्री सी० जी० विल्सनने इस निर्णयपर सभाको यह कहकर धन्यवाद दिया कि इससे निकायके हाथ बहुत मजबूत हो गये हैं और वह सभाके निर्णयपर अमल करेगा।

और भी कई सज्जनोंके भाषण हो जानेके बाद श्री हेस्टिंग्सने प्रस्ताव किया कि टाउन-क्लार्क और परवाना-अधिकारी दो भिन्न व्यक्ति हों।

श्री विल्सनने कहा कि अधिकारियोंको अभीकी तरह ही रहने देना बहुत बेहतर होगा। बादमें अगर परवाना-अधिकारीने इस प्रकारके मामलोंमें वैसी ही कार्रवाई न की

जैसी कि निकायने की है तो हमारे हाथमें इलाज है ही। (*नेटाल विटनैस* २१ नवम्बर, १८९८)।

ऊपरके उद्धरणोंमें जिन लोगोंको अवांछनीय कहा गया है वे निस्सन्देह डंडीके ब्रिटिश भारतीय व्यापारी हैं। डंडीका स्थानिक निकाय जो नीति बरतना चाहता है उसे इन उद्धरणोंमें स्पष्ट रूपसे स्वीकार कर लिया गया है। कानूनने अपील सुननेका अधिकार जिस संस्थाको दिया है उसकी ओरसे परवाना-अधिकारीको हिदायतें मिल चुकी हैं — और आगे भी मिलेंगी — कि उसे क्या करना है। और, इस तरह दो न्यायाधिकरणों — अर्थात् परवाना-अधिकारी और नगर-परिषद या स्थानिक निकायके यहाँ जो हो सामने कानूनके मंशाके अनुसार पीड़ित पक्षोंको अपना मामला पेश करनेका जो अधिकार था वह छिन जायेगा। प्रार्थियोंकी नजरमें जो उदाहरण आये हैं उनमें से ये केवल थोड़े-से हैं। इनसे बिलकुल साफ मालूम होता है कि यदि विभिन्न नगर-परिषदों और स्थानिक निकायोंपर अंकुश न लगाया गया तो वे किस नीतिका अनुसरण करेंगे।

प्रार्थियोंको यह स्वीकार करनेमें संकोच नहीं है कि अबतक दूसरी नगर-परिषदों और स्थानिक निकायोंने ऐसी कोई इच्छा नहीं दिखाई है कि वे जुल्मी तरीकेपर व्यवहार करेंगे हालाँकि वहाँ भी नये परवाने प्राप्त कर लेना लगभग असम्भव है। यहाँ तक कि पुराने जमे हुए भारतीयोंको भी नये परवाने नहीं मिल सकते फिर, कानूनके अनुसार जो अधिकार — प्रार्थी तो कहना चाहते थे अत्याचारी अधिकार — उन्हें दिया गया है वह मौजूद है ही और इसका कोई ठिकाना नहीं कि वे डर्बन न्यूकैसिल और डंडी द्वारा पेश किये गये उदाहरणोंका अनुकरण नहीं करेंगे।

जिन सॉलिसिटरोंका इस कानूनके अमलसे कुछ सम्बन्ध रहा है उनके विचार जाननेकी दृष्टिसे उन्हें एक पत्र लिख कर निवेदन किया गया था कि वे कानूनके अमलके सम्बन्धमें अपने अनुभव बतानेकी कृपा करें। यह पत्र चार सॉलिसिटरोंके पास भेजा गया था। उनमें से तीनने अपने उत्तर भेजे हैं जो इसके साथ नत्थी हैं (परिशिष्ट ग, घ, ङ)। श्री लॉटन जिन्होंने न्यूकैसिल चीनी व्यापारी और उपर्युक्त सोमनाथ महाराजके मामलोंकी पैरवी की थी कहते हैं

> मैं विक्रेता परवाना अधिनियमको बहुत लज्जाजनक और बेईमानी-भरा विधान मानता हूँ। बेईमानी-भरा और लज्जाजनक — क्योंकि इस मंशाको जरा भी छिपाया नहीं गया कि उसे भारतीयोंपर, और सिर्फ उनपर ही लागू किया जायेगा। वास्तवमें यह स्वीकार तो संसदके एक ऐसे अधिवेशनमें किया गया जो भारतीय-विरोधी समुदाय को तुष्ट करनेके लिए साधारण समयसे एक महीने पहले ही कर लिया गया था; फिर भी उपनिवेश-मन्त्रीकी स्वीकृति प्राप्त करनेके लिए उसे रूप ऐसा दिया गया मानो वह सबपर लागू होता हो।
>
> अधिनियमका असर है — व्यापारके परवाने देने या न देनेका अधिकार भारतीय व्यापारियोंके माने हुए शत्रुओंके हाथोंमें सौंप देना। नतीजा वही है जिसकी अपेक्षा की जा सकती थी। और हम सब जो-कुछ देखते हैं उससे लज्जित हैं भले ही हम इसे मंजूर करें या न करें।

१ यह उपलब्ध नहीं है।

एक और सज्जन हैं श्री ओ'हीं। वे औपनिवेशिक देशभक्त संघ (कलोनियल पैट्रिऑटिक यूनियन) के अवैतनिक मन्त्री भी हैं। उनका स्पष्ट स्वीकृत लक्ष्य एशियाइयोंकी और अधिक भरमारको रोकना है। वे कहते हैं

> मैं नहीं समझता कि इस कानूनका अमल विधानमण्डलकी भावनाके अनुसार किया जा रहा है। उस समयके प्रधानमन्त्रीने जिन्होंने विधेयक पेश किया था कहा था इसका मुख्य उद्देश्य उन लोगोंपर असर करनेका है, जिनका निस्तारा प्रवासी विधेयकके अन्तर्गत किया जाता है। जहाजवालोंको अगर मालूम हो कि इन्हें उतारने नहीं दिया जायेगा तो वे इन्हें नहीं लायेंगे। और अगर लोगोंको मालूम हो कि उन्हें परवाने नहीं मिल सकेंगे तो वे व्यापार करने के लिए यहाँ आयेंगे ही नहीं।
>
> बहुत दिन नहीं हुए कि मेरे पास इसी तरहका एक मामला उपस्थित हुआ था। एक चीनी राष्ट्रिक उपनिवेशमें तेरह वर्षोंसे रह रहा था। उसे परवाना देनेसे इनकार कर दिया गया। मुझे निश्चय है कि इसका कारण और कुछ नहीं सिर्फ यह था कि वह चीनी राष्ट्रिक था। डर्बन-सम्बन्धी आँकड़ोंसे मालूम होता है कि गत दस वर्षोंके अन्दर इस शहरका फैलाव और आबादी दूनीसे ज्यादा हो गई है। और फिर भी इस आदमीको जिसने अपना भाग्य उपनिवेशके साथ जोड़ दिया था — एक ऐसे आदमीको जिसका चरित्र निष्कलंक था, जो उस समय इस उपनिवेशमें आया था जबकि यहाँ आजके १ मनुष्योंकी जगह केवल ४ मनुष्य निवास करते थे — डर्बनमें ईमानदारीके साथ जीविका उपार्जित करनेका साधन देनेसे इनकार कर दिया गया उसके चरित्रका और इस बातका कोई खयाल नहीं किया गया कि वह लम्बे अरसेसे उपनिवेशमें रह रहा है। इसी तरह मैंने देखा है कि न्यूकैसिलमें एक भारतीयको परवाना देनेसे इनकार कर दिया गया। वह १५ वर्षोंसे नेटालमें रह रहा था। अगर किसी यूरोपीयने उसी परवानेकी अर्जी दी होती तो उसे वह दे दिया जाता। यह उचित नहीं है।

श्री रेनॉड ऐंड रॉबिन्सनकी पेढ़ीवाले दूसरी बातोंके साथ-साथ कहते हैं

> परन्तु, हमारी रायमें प्रस्तुत अधिनियमका मुख्य दोष यह है कि उसमें नगर परिषदके निर्णयकी अपील करनेकी गुंजाइश नहीं रखी गई। इससे परवानोंके अर्जदारों-पर अन्याय हुआ है और आगे भी हो सकता है।

जब यह छप रहा था श्री जी ए डी 'आर' लैबिस्टरकी राय प्राप्त हुई। वह इसके साथ संलग्न है (परिशिष्ट ख)।

कान्सिस्टेन्सी ['सुसंगत'] ने *टाइम्स आफ नेटाल*में (जिसे सरकारका मुखपत्र माना जाता है) एक पत्र लिखा है। उनके पत्र (परिशिष्ट ग) से मालूम होगा कि वे २ वर्ष से अधिक हुए, उपनिवेशमें रह रहे हैं और एक व्यापारी हैं। उन्होंने कहा है

> केवल आप उनसे (भारतीय व्यापारियोंसे) सख्तीके साथ कड़ेसे कड़े नियमोंका पालन कराइए, उनका हिसाब-किताब अंग्रेजीमें रखवाइए और अन्य काम भी वैसे ही करवा-इए, जैसे कि अंग्रेज व्यापारी करते हैं; परन्तु जब वे इन सब माँगोंको पूरा कर दें तब

१ देखिए पृष्ठ ४९।

उन्हें न्याय दीजिए। नया विधेयक इन लोगोंको या सारे समाजको न्याय देता है यह ईमानदारीसे विचार करनेवाला कोई व्यक्ति नहीं कह सकता। क्योंकि, विधेयक जन साधारणको लाभ पहुँचानेवाली होड़को दूर कर देनेका अधिकार स्वार्थी लोगोंके हाथोंमें सौंप देता है और इन स्वार्थी लोगोंको अपनी जेबें भरनेमें समर्थ बनाता है। मैंने हाल ही आपके एक सहयोगी पत्रमें पढ़ा था कि डंडीके स्थानिक निकायने अगले वर्षके लिए किसी भी अरब व्यापारीका परवाना नया न करनेका निश्चय किया है और पर वाना-अधिकारीको तदनुसार निर्देश दे दिया है। ये लोग [स्थानिक निकायके सदस्य] अंग्रेज व्यापारी हैं और चाहते हैं कि साराका सारा व्यापार इनके ही हाथोंमें रहे जबकि जनता इन्हें मुँहमाँगे भाव चुकाती रहे। निश्चय ही अब समय आ गया है जबकि सरकारको चाहिए कि वह इन लोगोंको उनकी सीमा बता दे।

टाइम्स ऑफ़ नेटालने अपने २१ दिसम्बर, १८९८ के अंकमें उपर्युक्त पत्रपर टीका करते बाद भारतीय व्यापारियोंके प्रति विरोधको आत्म-रक्षणके आधारपर उचित बताते हुए कहा है

साथ ही, हमारी यह इच्छा बिलकुल नहीं है कि इन भारतीय व्यापारियोंके साथ सख्तीका व्यवहार किया जाये। फिर भी हम नहीं मानते कि उपनिवेशी किसी भी बड़ी संख्यामें यह चाहते होंगे कि इन कानूनोंके अनुसार दिये गये अधिकारोंका उपयोग अत्याचारी ढंगसे किया जाये। यदि यह समाचार सही है कि डंडीके स्थानिक निकायने अगले वर्षके लिए भारतीयोंके किसी भी परवानेको नया न करनेका निश्चय किया है तो हम निकायसे जोरोंके साथ आग्रह करेंगे कि वह अपने ही करदाताओंके हितमें और आम तौरपर उपनिवेशके हितमें भी, उस निश्चयको तुरन्त रद कर दे। निकायको परवाने नये करनेसे इनकार करनेका अधिकार जरूर है, परन्तु यह अधिकार देते समय कभी क्षण-भर के लिए भी सोचा नहीं गया था कि इसका उपयोग इस तरह सर्वग्राही रूपमें किया जायेगा। विक्रेता-परवाना कानूनके लिए जिम्मेदार श्री एस्कम्ब थे और उन्होंने कभी स्वप्नमें भी खयाल नहीं किया था कि उसके द्वारा दिये गये अधिकारका उपयोग इस तरह किया जायेगा। अधिनियम स्वीकार करनेमें यह खयाल उतना नहीं था कि परवाना-अधिकारियोंको उपनिवेशमें पहलेसे ही व्यापार करते आनेवाले भारतीयोंसे छीननेका अधिकार दिया जाये जितना कि यह था कि और भारतीयोंको व्यापार करनेके लिए यहाँ आनेसे रोका जाये। विधेयकका दूसरा वाचन प्रारम्भ करते हुए श्री एस्कम्बने बताया कि इसे नगर-परिषदोंके अनुरोधपर पेश किया गया है। उन्होंने कहा उनका उद्देश्य क्या है, यह बतानेमें उन्हें कोई संकोच नहीं है; और सरकारको भी उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लेनेमें कोई आपत्ति नहीं है। प्रस्ताव यह है कि कतिपय लोगोंको इस देशमें आकर यूरोपीयोंके साथ गैर-बराबर हालतोंमें होड़ करने और व्यापारके लिए परवाने प्राप्त करनेसे जो यूरोपीयोंके लिए ही जरूरी है रोका जाये। और फिर, अगर लोगोंको शंका रही कि उन्हें परवाना मिलेगा या नहीं तो यहाँ व्यापार करनेके लिए कोई आयेगा ही नहीं। इसलिए यदि कानूनकी किताबमें यह कानून मौजूद रहे तो वह बगैर ज्यादा अमलके भी अपना काम पूरा करता रहेगा। इस तरह स्पष्ट

है कि कानून तो व्यापक अधिकार प्रदान करता है फिर भी जिम्मेदार मन्त्रीने अपना उद्देश्य पूरा करनेके लिए उसकी व्यवस्थाओंके अमलपर नहीं बल्कि उसके अस्तित्वसे पैदा होनेवाले नैतिक असरपर भरोसा किया था। यह उद्देश्य पहलेसे ही यहाँ रहनेवाले व्यापारियोंको उनके परवानोंसे वंचित करना नहीं बल्कि दूसरोंको यहाँ आने और परवाने प्राप्त करनेसे रोकना था। यह अपेक्षा नहीं की गई थी कि वे निकाय और परिषदें जिन्हें इस कानूनके अन्तर्गत अपीली न्यायालय नियुक्त किया गया है अपने अधिकारोंका वैसा दुरुपयोग करेंगी जैसा कि डंडीका निकाय करनेकी धमकी दे रहा है। दूसरे वाचनकी बहसका जवाब देते हुए भी एस्कम्बने कहा मुझे कोई सन्देह नहीं है कि इस विधेयककी आवश्यकता केवल उस गम्भीर खतरेके कारण हो सकती है जो इस देशके सामने मुँह बाये खड़ा है। परन्तु मुझे नगरपालिकाओंके अधिकारियों और उपनिवेशकी न्यायशीलतापर इतना विश्वास है कि, मैं मानता हूँ इस विधेयकका प्रयोग जिसे मैं न्याय और नरमी कहता हूँ उसके साथ किया जायेगा। अच्छा हो कि डंडीका निकाय इन शब्दोंको याद रखे; क्योंकि यह भी सोचे हुए सर्वग्राही तरीकेपर अपनी सत्ताका उपयोग जितने असन्दिग्ध रूपमें करेगा, उतने ही असन्दिग्ध रूपमें वह उद्देश्य विफल होगा जो हम सबके सामने है। बेशक, अवांछनीय लोगोंका मूलोच्छेद होने दीजिए, परन्तु यह काम क्रमशः होना चाहिए, ताकि उद्देश्यकी पूर्ति कोई भारी अन्याय किये बिना ही हो जाये। कहा जा सकता है कानून तो है हम उसको अमलमें लायेंगे। हाँ कानून जरूर है, मगर उससे अन्याय ढाया गया तो वह कितने दिनों तक टिकेगा? उपनिवेशमें ऐसे मतदाताओंकी संख्या बहुत बड़ी है जिन्हें अपने मजदूर भारतसे ही लाने पड़ते हैं। यह बात भुलानी नहीं चाहिए; क्योंकि यह भारत-सरकारके हाथमें एक ऐसा शस्त्र है, जिसके द्वारा वह इस उपनिवेशसे जितना बहुत-से लोग समझते हैं उससे बहुत ज्यादा ऐंठ सकती है। मान लीजिए, भारत-सरकार कह देती है, आपको तबतक और मजदूर नहीं मिल सकते जबतक कि आप उस कानूनको रद नहीं कर देते जिसके अधीन हमारे लोगोंके साथ घोर दुर्व्यवहार किया गया है तो परिणाम क्या होगा? हम इसका अनुमान नहीं लगायेंगे। अगर स्थानिक निकाय नगर-परिषदें और परवाने देनेवाले निकाय बुद्धिमान हैं तो वे भारतीय मजदूरोंके मालिकोंको ऐसी अग्नि-परीक्षासे गुजारनेकी कभी कोई कोशिश नहीं करेंगे।

इस लम्बे उद्धरणके लिए हम क्षमा-याचना नहीं करते क्योंकि यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसका महत्त्व केवल इसके स्रोतके कारण नहीं बल्कि जिस ढंगसे इसमें विषयका निरूपण किया गया है उसके कारण भी है। विधानमण्डलके अच्छे इरादे कानूनमें निहित नहीं हैं यद्यपि उन्हें उसमें उतारा जरूर जा सकता था। यदि ऐसा किया गया होता तो भारतीय व्यापारी इस चिन्तासे बच जाते कि उनकी रोजी कभी भी एकाएक उनके मुँहसे छीनी जा सकती है। सरकारी मुखपत्र एक ऐसी बात मंजूर कर गया है जो डंडीके निकायको बताई हुई उसकी अपनी ही फटकारसे मेल नहीं खाती। वह निकायोंको एक छिपा हुआ इशारा मालूम होती है कि वे लोगोंका ध्यान खींचे बिना किस तरह अपना उद्देश्य पूरा कर सकते हैं। क्योंकि वह भी यही चाहता है कि अवांछनीय लोगोंका एक बहुत क्रमिक तरीकेसे मूलोच्छेद कर दिया जाय। इस प्रकार अब जो लोग पहलेसे ही जमे हुए हैं उनको न छेड़नेकी इच्छाके साथ

कैसे बैठ सकता है? तत्कालीन प्रधानमन्त्रीके शब्दोंका उपयोग किया जाये तो संघीका निकाय अपने भोंड़े मुँहफटपने" के कारण जिस कार्यको पूर्ण करनेमें विफल हो सकता है उसको व्यवस्था चाहता है ऐसे अप्रत्यक्ष रूपमें और कूटनीतिक तरीकेसे पूर्ण किया जाये कि उसका असली उद्देश्य प्रकट न हो।

नेटाल मर्क्युरी (१४ दिसम्बर, १८९८) में एक पत्र-लेखकने "लगभग बीस वर्षसे उपनिवेशका निवासी" के नामसे लिखा है

> महोदय — आपके आजके अंकमें मैंने न्यूकैसिलका एक पत्र देखा है। उसमें कहा गया है कि उस नगरके प्रतिनिधि निगम (कारपोरेशन) ने दादा नामक व्यक्तिके खिलाफ, जिसे उसने परवाना देनेसे इनकार कर दिया था, दायर किया हुआ मुकदमा जीत लिया है। पत्रमें यह खबर भी दी गई है कि इस नतीजेका सारे उपनिवेशमें स्वागत किया जायेगा। दादा एक भारतीय है जो न्यूकैसिलमें गत १५ वर्षोंसे व्यापार करता आ रहा है। इस दौरानमें वह एक अच्छा नागरिक रहा है। परन्तु, दुर्भाग्यसे वह एक सफल व्यापारी भी रहा है। स्पष्टतः, यह हकीकत न्यूकैसिलके परवाना-निकायके सदस्योंको, जो खुद व्यापारी हैं पसन्द नहीं है। निगमको अपने अधिकारोंकी ऐसी दयनीय विडम्बनापर कहाँतक बधाई दी जा सकती है या यह कि सम्राज्ञीकी न्याय-परिषद (प्रीवी कौंसिल) के निर्णयका नेटालके न्यायशील व्यक्ति स्वागत करेंगे — इसमें शंका है।
>
> — आपका, आदि
>
> लगभग बीस वर्षसे उपनिवेशका निवासी।

ट्रान्सवाल-सरकार भारतीयोंको पृथक बस्तियोंमें हटानेका प्रयत्न करती आ रही है। परन्तु वह भी भारतीयोंको कुछ समय देनेको तैयार है — चाहे वह समय कितना ही नाकाफी क्यों न हो — ताकि वे सरकारकी दृष्टिमें हानि उठाये बिना अपना कारबार हटा सकें। स्वभावतः ही सम्राज्ञी-सरकार ऐसी स्वल्प रियायतसे संतुष्ट नहीं है। और प्रार्थी जानते हैं कि जो लोग पहलेसे ही जमे हुए हैं उनसे छेड़छाड़ न करनेके लिए ट्रान्सवाल-सरकारको समझानेका प्रयत्न किया जा रहा है। आरंज फ्री स्टेटकी सरकारने यद्यपि वह बिलकुल स्वतन्त्र है भारतीय व्यापारियोंको अपना व्यापार बन्द कर देनेके लिए एक सालका समय दिया था। परन्तु नेटाल-उपनिवेशने जो दक्षिण आफ्रिकाका सबसे अधिक ब्रिटिश उपनिवेश होनेका दम भरता है भारतीय व्यापारियोंको व्यापार करनेके अधिकारसे एकाएक वंचित कर देनेका अधिकार प्राप्त कर लिया है। उसने उसे कायम रखनेका प्रयत्न भी किया है और यह खतरा पैदा कर दिया है कि उसे अक्सर काममें लाया जायगा। *नेटाल ऐडवर्टाइज़र* (तारीख ११ सितम्बर, १८९८) इस विसंगतिके बारेमें लिखता है

> हम इतना ही कह सकते हैं कि (सम्राज्ञीकी न्याय-परिषदके) निर्णयपर हमें सख्त अफसोस है। यह तो ऐसा काम है जिसकी अपेक्षा ट्रान्सवालकी संसदसे की जा सकती थी। उस संसदने अपने परदेशी निष्कासन कानून (एलियन्स एक्सपल्शन लॉ) को उच्च न्यायालयके अधिकार-क्षेत्रसे ऊपर कर दिया है; और इसके बारेमें उपनिवेशोंमें जो शोरगुल मचा था वह पाठकोंको याद होगा। परन्तु अब इस कानूनसे रत्ती-भर भी ज्यादा खराब नहीं है। हाँ, अगर दोनोंमें कोई फर्क है तो हमारा कानून ज्यादा खराब है क्योंकि उसका अमल अधिक बारबार किया जानेकी सम्भावना है। पर इतना कहना

है कि अगर सर्वोच्च न्यायालयको अपील सुननेका अधिकार दिया गया होता तो कानून कारगर न होता। उस संस्थासे इतनी अपेक्षा तो निश्चय ही की जा सकती थी कि वह साधारण समझदारीसे काम लेगी। अपना राज्य प्रातिनिधिक संस्थाओंके द्वारा स्वयं चलानेवाले समाजमें इस सिद्धान्तके प्रतिपादित किये जानेकी अपेक्षा कि नागरिकके अधिकारोंपर आघात करनेवाले किसी भी मामलेमें सर्वोच्च न्यायाधिकारीकी शरण जानेके मार्गको जान-मानकर बन्द कर दिया जाये बहुत बेहतर तो यह होता कि एक दो मामलोंमें बादवाली बात (म्यूनिसिपैलिटियोंकी इच्छा) को बाध दिया जाता।

आपके प्रार्थियोंको बहुत भय है कि उपनिवेशकी सरकार प्रार्थियोंकी मदद करनेवाली नहीं है। इस कानूनके अनुसार परवाने प्राप्त करने और परवाना-अधिकारीके निर्णयके खिलाफ अपील करनेके तरीकेको नियन्त्रित करनेके लिए जो नियम (परिशिष्ट ग) स्वीकार किये गये हैं वे प्रार्थियोंकी नम्र रायमें ऐसे ढंगसे बनाये गये हैं कि उनसे परवाना-अधिकारी और अपील-संस्थाको दिये गये मनमाने अधिकार दृढ़ होते हैं। यहाँ यह बता देना उचित ही होगा कि वे सितम्बर १८९७ में ही स्वीकार कर लिये गये थे। तथापि प्रार्थियोंको आशा थी कि चूँकि उपनिवेशको असाधारण सख्ती करनेका अधिकार दे दिया गया है इसलिए अब भारतीय समाजको कुछ आरामकी साँस लेने दी जायेगी। और यह भी कि सख्तीके इक्के-दुक्के मामलोंमें वे यहीं राहत प्राप्त कर सकेंगे — उन्हें सम्राज्ञी-सरकारके पास फरियाद करनेकी जरूरत न होगी। भूतपूर्व प्रधानमन्त्रीने लन्दनसे लौटनेपर जो भाषण दिया था उससे हमारा यह विश्वास और भी दृढ़ हो गया था। उन्होंने आशा प्रकट की थी कि इन अधिकारोंका अमल बहुत सोच-समझकर और नरमीके साथ किया जायेगा। दुर्भाग्यवश ऐसा हुआ नहीं। इसीलिए प्रार्थी निवेदन करते हैं कि नियमोंमें जो ऐसी कोई व्यवस्था नहीं की गई है कि परवाना अधिकारीको अपने निर्णयके कारण अर्जदारको बताने चाहिए, उससे बहुत अनर्थ हुआ है। श्री कॉलिन्सको भी ऐसा ही लगा है (परिशिष्ट क)।

प्रार्थियोंको सबसे ज्यादा भय तो नगर-परिषदकी उस प्रक्रियासे है, जिसका जिक्र ऊपर किया गया है। यहाँ मौजूद लोग उस प्रक्रियाको भलीभाँति समझते हैं। इस वर्ष अनेक छोटे-छोटे दुकानदारोंको उजाड़ दिया गया है। कुछको तो इसलिए उजाड़ा गया कि उनका कारोबार मुश्किलसे १ पौंड माहवार है। वे नकद खरीदते हैं और नकद ही बेचते हैं, इसलिए वे हिसाब-किताब नहीं रख सके। आखिर, छोटे-छोटे यूरोपीय दुकानदार भी तो प्रायः नहीं रखते हैं। कुछ अन्य लोगोंको इसलिए उजाड़ दिया गया कि वे सफाई-आरोग्यकी शर्तोंको पूरा नहीं कर सके। इन शर्तोंका सम्बन्ध मकानोंकी सफाईसे नहीं बल्कि उनकी बनावटसे था। अगर परवाना-अधिकारी साल-ब-साल कुछ छोटे-छोटे भारतीय दुकानदारोंको मिटाते रहे तो परवाने देनेसे इनकार किये बिना ही बड़ी-बड़ी दुकानोंको बैठा देनेके लिए बहुत वर्षोंकी जरूरत नहीं होगी। उदाहरणके लिए, इस प्रार्थनापत्रपर प्रथम पहला हस्ताक्षर करनेवाले श्री मुहम्मद कासिम कमरुद्दीन एंड कम्पनीका डर्बनके लगभग ४ भारतीय दुकानदारों और फेरीवालों-पर २५, पौंड ज्यादाका कर्ज फैला हुआ है। डर्बनमें उनकी जायदाद भी है जो भारतीय दुकानदारोंने किरायेपर ले रखी है। यदि इन दुकानदारोंमें आठवें हिस्सेको भी परवाने देनेसे इनकार कर दिया गया तो इस पेढ़ीकी स्थिति बिगड़ जायेगी। कुछ क्षति तो उसे पहुँच ही चुकी है। यह क्षति भी दादा उस्मानको परवाना न दिया जानेके कारण हुई है। (इसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है।) श्री अमद जीवाकी जायदाद एस्टकोर्ट, डर्बी, न्यूकैसिल और डंडीमें है। यह करीब-करीब पूरीकी पूरी भारतीय दुकानदारोंने किरायेपर ले रखी है।

और उसमें से अधिकांशका उपयोग किसी दूसरे कामके लिए नहीं हो सकता। इनमें से अगर कुछ दूकानें भी बन्द हो गईं तो बरबादी हो जायेगी। ये तो सिर्फ नमूनेके उदाहरण हैं। ऐसे उदाहरण और भी बहुतसे दिये जा सकते हैं।

प्रार्थियोंको बचपनसे यह विश्वास करना सिखाया गया है कि सम्राज्ञीके सब राज्योंमें जान और मालकी पूरी सुरक्षा है। जहाँतक मालकी सुरक्षाका सम्बन्ध है इस विश्वासको इस उपनिवेशमें जबरदस्त धक्का पहुँचा है। क्योंकि आपके प्रार्थियोंका नम्र निवेदन है, किसीकी जायदादका एकमात्र सम्भव उपयोगके साधनसे वंचित किया जाना उस जायदादके बिलकुल छीन लिये जानेसे कम नहीं है।

कहा गया है कि स्वशासित उपनिवेशोंमें सम्राज्ञी-सरकारका हस्तक्षेप करनेका अधिकार बहुत सीमित है। आपके प्रार्थी तो मानते हैं कि वह कितना भी सीमित क्यों न हो ट्रान्सवालमें हस्तक्षेप करनेके लिए जितना है स्वशासित उपनिवेशोंमें हस्तक्षेप करनेके लिए उससे कम नहीं है। दुर्भाग्यवश प्रार्थियोंको एक ऐसे कानूनका सामना करना पड़ रहा है, जिसे सम्राज्ञी स्वीकृति प्रदान कर चुकी हैं। परन्तु प्रार्थियोंका खयाल है कि जब सम्राज्ञीको कानूनको अस्वीकार करनेके अधिकारका प्रयोग न करनेकी सलाह दी गई थी उस समय यह नहीं सोचा गया था कि उस कानून द्वारा दिये गये अधिकारोंका इतना दुरुपयोग किया जायेगा जितना कि निवेदन है किया गया है।

प्रार्थी अत्यन्त आदरके साथ निवेदन करते हैं कि ऊपर जो-कुछ कहा गया है वह इसके लिए काफी होगा कि सम्राज्ञी-सरकार उपनिवेशकी सरकारको एक जोरदार समझना और परामर्श दे कि वह कानूनमें ऐसे संशोधन करे जिनसे ऊपर वर्णन किये हुए अन्यायकी पुनरावृत्ति असम्भव हो जाये और वह कानून उदात्त ब्रिटिश परम्पराओंके अनुरूप भी बन जाये।

परन्तु, यह सम्भव न हो तो प्रार्थी नम्रतापूर्वक निवेदन करना चाहते हैं कि सभी मानते हैं कि उपनिवेशकी प्रगतिके लिए भारतीय मजदूर अनिवार्य हैं। उनके उपयोगके जिस विशेष अधिकारका उपभोग उपनिवेश कर रहा है, उसका उपभोग उसे तब न करने दिया जाये। यहाँके मर्क्युरीने ऊपर दिये हुए उद्धरणमें आशंका प्रकट की ही है कि यदि परवाना अधिकारियोंने अन्याय किया तो भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंको भेजना बन्द कर दिया जायेगा। स्थित (लन्दन) ईस्ट इंडिया असोसिएशन सर विलियम वेडरबर्न[1] और कस्ट भारतकी प्रमुख संस्थाओं और सारेके सारे भारतीय और आंग्ल-भारतीय पत्रोंने पहले ही यह उपाय सुझा रखा है। परन्तु अबतक मालूम होता है सम्राज्ञी-सरकारने उसे स्वीकार करनेकी कृपा नहीं की। प्रार्थियोंका नम्र निवेदन है कि जो दुखड़े सही माने जा चुके हैं उनको अगर दूर नहीं किया जाता तो इस तरह मजदूर भेजना बन्द करनेके पक्षमें इससे ज्यादा जोरदार कारण और क्या हो सकते हैं?

प्रार्थी जानते नहीं कि भारतीय व्यापारियोंके लिए आगामी वर्षका आरम्भ कैसे होगा। परन्तु हर दूकानदार चिन्तामग्न और बेचैन हो रहा है। दुविधा भयंकर है। बड़ी-बड़ी पेढ़ियोंको डर हो गया है कि उनके ग्राहकों (छोटे दूकानदारों) को परवाने नहीं दिये जायेंगे। इसके अलावा उनको परवाना अधिकारियोंपर अंकुश लगानेकी जो एक मात्र आशा थी वह भी सम्राज्ञीकी न्याय-परिषदने उनसे छीन ली है। इन कारणोंसे वे हताश हो गई हैं और अपना भाग्य निराशामें हिचकोले खा रहा है।

१ १८३८-१९१८; भारतीय असैनिक सेवाके एक हाकिम और न्यायाधीश। १८९१ में बेकर ... एक भारत संघ (इंडिया कमिटी) के अध्यक्ष।

२२. पत्र : प्रार्थनापत्र भेजते हुए

डर्बन
जनवरी ११, १८९९

सेवामें

परमश्रेष्ठ सर वाल्टर फ्रान्सिस हेली-हचिन्सन, सेंट माइकेल तथा सेंट जार्जके परम प्रतिष्ठित संघके नाइट-कमांडर, नेटाल उपनिवेशके गवर्नर, प्रधान सेनापति तथा उप-नौसेनापति और वतनी आबादीके सर्वोच्च अधिकारी, पीटरमैरित्सबर्ग

परमश्रेष्ठ ध्यान देनेकी कृपा करें

मुझे १८९७ के विक्रेता-परवाना-अधिनियम १८ के सम्बन्धमें एक प्रार्थनापत्रकी तीन नकलें आपकी सेवामें भेजनेका मान प्राप्त हुआ है। इस प्रार्थनापत्रपर मुहम्मद कासिम कमरुद्दीन ऐंड कंपनीके श्री अब्दुल कादिर तथा अन्य व्यक्तियोंके हस्ताक्षर हैं और यह सम्राज्ञीके मुख्य उपनिवेश-सचिवकी सेवामें भेजनेके लिए है। परमश्रेष्ठ जैसा उचित समझें वैसे मन्तव्यके साथ इसे भेज देनेकी कृपा करें।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सम्राज्ञीके मुख्य उपनिवेश-मन्त्री, लंदनके नाम नेटालके गवर्नरके खरीता नं० ६, ता० १४ जनवरी १८९९ का सहपत्र।

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : मेमोरियल्स ऐंड पिटिशन्स, १८९८–९९।

२३. पत्र : बलपतराम भवानजी शुक्लको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन, नेटाल
जनवरी १०, १८९९

श्री बलपतराम भवानजी शुक्ल[1]

प्रियवर शुक्ल,

मुझे काकाभाईके[2] पाससे महीनोंसे कोई खबर नहीं मिली। मैं बहुत चिन्तित हूँ कि उनके हाल-चाल क्या हैं, वे क्या कर रहे हैं और उनकी आर्थिक सम्भावनाएँ कैसी हैं। आप कृपया पता लगाकर मुझे सूचित करेंगे? मेहता[3]से मालूम हुआ कि आपका काम वहाँ बहुत अच्छा चल रहा है। मेरे बारेमें उन्होंने आपको सब-कुछ बता दिया होगा — इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं।

मैं अपनी खराब लिखावट सुधार नहीं सका इसलिए इधर कुछ दिनोंसे टाइप करने लगा हूँ।

आपका हृदयसे,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० २१२७) से।

१. राजकोटके एक वकील।
२. गांधीजीके बड़े भाई — लक्ष्मीदास गांधी।
३. डा० प्राणजीवन मेहता — लंदनके दिनोंके गांधीजीके मित्र।

२४ भारतके पत्रों और लोक-सेवकोंको

डर्बन
जनवरी २१, १८९९

महोदय

इसके साथ भेजा हुआ प्रार्थनापत्र[1] अपनी दुःखभरी कहानी आप ही सुना रहा है। इसमें जो शिकायत की गई है वह भावनात्मक नहीं, बल्कि बहुत गम्भीर और बहुत सच्ची है। अगर उसे तुरन्त दूर न किया गया तो आसार ये हैं कि उससे सैकड़ों भूखोंकी रोटी छिन जायेगी। नेटालके परवाना-अधिकारी प्रतिष्ठित भारतीयोंको उनके प्राप्त किये हुए अधिकारोंसे वंचित करना चाहते हैं। स्थितिका तकाजा है कि अखबार और लोक-सेवक इसपर तुरन्त उत्कण्ठाके साथ और लगातार ध्यान दें। गिरमिटिया भारतीयोंका नटाल जाना रोक देनेसे कम कोई कार्रवाई मामलेको निपटानेके लिए काफी नहीं होगी। हाँ नेटाल-सरकारको परवाना-कानूनमें ऐसा संशोधन करनेके लिए प्रेरित किया जा सके जिससे कि वह कानून ब्रिटिश संविधान द्वारा स्वीकृत न्याय-सिद्धान्तोंसे मेल खाने लगे तो बात दूसरी है।

दूसरी सब शिकायतें सैद्धान्तिक वाद-विवादके लिए ठहर सकती हैं परन्तु इसमें देरीकी कोई गुंजाइश नहीं है।

डर्बन नगरमें भारतीय १ पौंडसे भी अधिक मूल्यकी भूमिके मालिक हैं। सफाई दारोगाकी उत्तम रिपोर्टके बावजूद कुछ अच्छेसे अच्छे मकानोंके लिए, जिनके मालिक भारतीय हैं परवाने देनेसे इनकार कर दिया गया है।

एक व्यापारी अपना कारोबार बेच देना चाहता है। उसका सारा मुनाफा उसके मालमें ही है। वह ग्राहक पानेमें असमर्थ है, क्योंकि खरीदनेवालेको परवाना मिल सकता है, इसका कोई निश्चय नहीं है।

आपका आज्ञाकारी
मो० क० गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन २१४९) से।

१ श्री वेस्टबेनके नाम ११-१२-१८९८ का प्रार्थनापत्र।

२५. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड कर्जनको

डर्बन
जनवरी २७, १८९९

सेवामें
परम माननीय जार्ज नैथेनियल, केडल्स्टनके बैरन कर्जन
भारतके वाइसराय और गवर्नर-जनरल
कलकत्ता

नेटाल उपनिवेशवासी ब्रिटिश भारतीयोंके नीचे हस्ताक्षर
करनेवाले प्रतिनिधियोंका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि

प्रार्थी परमश्रेष्ठका ध्यान उस प्रार्थनापत्रकी प्रतिकी ओर आकृष्ट करनेका साहस करते हैं जो कि उन्होंने सम्राज्ञीके प्रधान उपनिवेश-मन्त्रीकी सेवामें नेटाल-विधानमण्डल द्वारा १८९७ में स्वीकृत विक्रेता-परवाना अधिनियमके विषयमें भेजा है।

परमश्रेष्ठको उस प्रार्थनापत्रसे विदित होगा कि

(क) जिस अधिनियमकी शिकायत की गई है वह एक प्रत्यक्ष वास्तविक तथा ठोस दुःख-दर्दका कारण बन रहा है और जिस प्रकार उसे अमलमें लाया जा रहा है उसका नेटाल उपनिवेशमें बसे हुए भारतीय व्यापारियोंके उपलब्ध अधिकारोंपर बहुत गम्भीर दुष्परिणाम होनेकी सम्भावना है
(ख) जो हित दाँव पर चढ़े हैं उनका मूल्य हजारों पौंड है
(ग) जैसा कि नेटालके कुछ पत्रकार भी मानते हैं दक्षिण आफ्रिकाके एकराज्यने जितनी दूरी तक जानेका साहस किया है नेटालका विधानमण्डल उससे भी बहुत आगे बढ़ गया है
(घ) अधिनियमका अमल परम माननीय हैरी एस्कम्बके जिन्होंने उसे पास कराया था और जो उस समय उपनिवेशके प्रधानमंत्री थे सार्वजनिक रूपसे दिये आश्वासनके प्रतिकूल सिद्ध हुआ है। उन्होंने कहा था कि उन्हें नगर-परिषदों और नगर-निकायों-पर पूरा विश्वास है कि वे व्यापारके वर्तमान परवानोंमें दस्तन्दाजी नहीं करेंगे।
(ङ) कई नगर-परिषदें और स्थानिक निकाय वर्तमान परवानोंमें पहले ही गम्भीर हस्तक्षेप कर चुके हैं और उन्होंने आगे और अधिक हस्तक्षेप करनेका भय दिखलाया है।

इन परिस्थितियोंमें आपके प्रार्थियोंने निवेदन किया है कि या तो इस अधिनियममें ऐसे संशोधन कर दिये जायें कि वह ब्रिटिश न्याय-सिद्धान्तोंसे मेल खाने लगे या फिर इस उपनिवेशमें गिरमिटिया मजदूरोंका भेजना बन्द कर दिया जाय।

आपके प्रार्थियोंका विचार है कि यदि ब्रिटिश भारतसे बाहर ब्रिटिश भारतीयोंके अधिकारोंको मिट जानेसे बचाना हो तो इस मामलेमें भारत-सरकारको सक्रिय और सतत हस्तक्षेप करना चाहिए। इस प्रार्थनापत्रके साथ परिशिष्टमें डंडीके स्थानिक निकायके एक प्रस्तावकी नकल

है कि जितने भी एशियाइयोंका सफाया किया जा सके उतनोंका कर देना चाहिए। आपके प्रार्थियोंको पता चला है कि इस प्रस्तावके अनुसार, वहाँके परवाना-अधिकारीने सोलहमें से सात या आठ भारतीय दूकानदारोंके परवानोंको फिर जारी करनेसे इनकार कर दिया है। जिन्हें इस प्रकार परवाना देनेसे इनकार किया गया है उनमें से एक डंडीका सबसे बड़ा भारतीय दूकानदार है और उसकी दूकानमें हजारों पौंडका माल भरा पड़ा है। न्यूकैसिलके परवाना अधिकारीने ऐसे तीन परवाने देनेसे इनकार कर दिया है जो कि गत वर्ष भी रोक लिये गये थे — इनका भी जिक्र परिशिष्टमें है। प्रार्थी परवाना पानेके लिए स्थानिक रूपसे जो कुछ कर सकते हैं सो सब भी कर रहे हैं। इसलिए यह परिणाम अन्तिम नहीं है। परन्तु इससे स्थितिकी गम्भीरताका तो पता भली भाँति चल ही जाता है। उपनिवेशके अन्य अनेक स्थानोंपर प्रार्थनापत्र अभी विचाराधीन पड़े हुए हैं।

इस वर्ष अन्तिम परिणाम चाहे जो हो आपके प्रार्थियोंकी नम्र सम्मतिमें इस अधिनियमसे बुराई होनेकी सम्भावना बहुत बड़ी है और आपके प्रार्थी हृदयसे आशा करते और नम्र निवेदन करते हैं कि संलग्न पत्रमें की हुई प्रार्थनापर परमश्रेष्ठ सहानुभूतिपूर्वक और शीघ्र विचार करनेकी कृपा करें।

और इस न्याय तथा दयाके कार्यके लिए, आपके प्रार्थी अपना कर्तव्य समझकर, सदा दुआ करेंगे।

(ह०) मुहम्मद कासिम कमरुद्दीन ऐंड कं०
और अन्य व्यक्ति

छपी हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० २९५५) से।

२६. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
जनवरी २, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय

सर्वश्री अमद मुहम्मद इस्माइल मुहम्मद गोरा और ईसा हाजी सुमार ट्रान्सवाल जानेका इरादा कर रहे हैं। पहले दो अपने व्यवसायके लिए ट्रान्सवाल जाते हैं उनके पास वापसी टिकट हैं। तीसरेका मैरित्सबर्गमें भारी व्यापार चलता है और वे अपने व्यापारका निरीक्षण करनेके लिए वहाँ जाना चाहते हैं। पहले दोनोंका सम्बन्ध हीडलबर्गमें चलनेवाले एक व्यापारसे है।

मैं आभारी हूँगा अगर आप इन सज्जनोंको ट्रान्सवाल जानेके परवाने दिला सकें।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी० एस० ओ० १५८४/९।

२७ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
फरवरी २८, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय

अमुक तीन भारतीयोंको ट्रान्सवाल जानेके परवाने दिलानेके सम्बन्धमें मुझे आपके इसी महीनेकी २५ और २७ तारीखोंके पत्रोंकी पहुँच स्वीकार करनेका मान प्राप्त हुआ है।

ट्रान्सवाल-सरकार द्वारा प्लेग-सम्बन्धी नियमोंकी घोषणा की जाने तकके अन्तरिम कालमें जो भारतीय सज्जन ट्रान्सवाल जाना चाहते हैं उनको परवाने दिलानेके बारेमें आपके इसी माहकी २५ तारीखके पत्रका भी प्राप्ति-स्वीकार निवेदन करता हूँ। इसके लिए मैं सरकारको नम्रतापूर्वक धन्यवाद देता हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १५८४/९९।

२८ तार उपनिवेश-सचिवको

पीटरमैरित्सबर्ग
फरवरी २८, १८९९

माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

डर्बन और केपटाउनकी डी कम्भेराम पेढ़ीके सात भारतीय चौदह जनवरीको भारतसे चले। अभी वे डेलागोआ-बेमें हैं। उनमें से पाँच केपटाउनके और दो डर्बनके लिए हैं। प्रवासी-अधिनियमकी कसौटीपर चढ़नेमें समर्थ हैं। जहाज-कम्पनियाँ सूतक (क्वारंटीन) के डरसे उन्हें सवार करनेसे इनकार करती हैं। क्या सरकार कृपाकर कम्पनियोंको आश्वासन देगी कि जबतक जहाजमें रोग प्रकट नहीं होता उन्हें सूतकका डर नहीं होना चाहिए? पाँच व्यक्ति सवारी पाते ही केपटाउन चले जायेंगे। सरकार उनपर देशके अन्दर जो भी सूतक जारी करना उचित समझे उसे सातों व्यक्ति पालेंगे।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १५८४/९९।

२९. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मार्च १, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय

अमुक सात भारतीयोंको डेलागोआ-बेसे इस उपनिवेशमें आने देनेकी बाबत अपनी अर्जीके सम्बन्धमें मुझे आपके कल और आजके तारोंकी प्राप्ति स्वीकार करनेका मान प्राप्त हुआ है।

आपके निर्देशके अनुसार मैंने स्वास्थ्य-अधिकारीसे पत्र-व्यवहार किया है। आपके आजके पत्रके उत्तरमें मेरा निवेदन है कि उक्त व्यक्ति हैदराबाद सिन्धके हैं, जहाँसे वे ४ जनवरीको निकले थे। वे १४ जनवरी या उसके आसपास हसनी जहाज द्वारा बम्बईसे रवाना हुए। जहाज लामू और मोम्बासा होता हुआ जंजीबार गया। जंजीबारमें वे पिछले माहकी ९ तारीखको या उसके आसपास जनरल जहाजपर सवार हुए। अब वे डेलागोआ-बेमें उतर गये हैं। उनमें से दो नेटालमें रहे हैं और वे अधिनियमके अर्थके अन्तर्गत वर्जित प्रवासी नहीं हैं। पाँच दर्शकोंके रूपमें उपनिवेशमें आना चाहते हैं। सरकार देशके अन्दर उनपर जैसा भी मुचलका जारी करना उचित समझे उसका वे पालन करेंगे। कम्पनियाँ सरकारसे यह आश्वासन पाये बिना उनका टिकट देनेको राजी नहीं है कि उनके जहाजोंसे सिर्फ भारतीय सवारियाँ होनेके कारण ही सूतकमें नहीं रखा जायेगा।

इन परिस्थितियोंमें मुझे भरोसा है, सरकार ऐसा आदेश दे देनेकी कृपा करेगी जिससे कि उक्त व्यक्ति उपनिवेशमें आ सकें।

सम्बद्ध पाँच व्यक्तियोंके लिए दस्तूरके अनुसार रकम जमा कर दी जायेगी।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज़ सी० एस० ओ० पत्र संख्या १७१२/९९।

३० पत्र नगर-परिषदको

गांधीजीने नीचे दिया हुआ पत्र पीटरमैरित्सबर्गकी नगर-परिषदको लिखा था। यह उस समय लिखा गया था, जब कि १८९९ में प्लेग फूट पड़नेका डर फैला था।

डर्बन
[मार्च ८, १८९९ के पूर्व]

इस देशमें गिरमिटियोंके प्लेगका प्रवेश रोकनेके लिए सफाईकी जो एहतियाती कार्रवाइयाँ की जा रही हैं उनके सम्बन्धमें क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूँ कि सफाईके नियमों, चूहोंकी पोलाई, कीटाणुओंके नाश आदिके बारेमें एक पुस्तिका निकालना बहुत उपयोगी हो सकता है? कुछ दिन पहले निगम (कारपोरेशन) की एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई थी। यह पुस्तिका उसका एक अच्छा पूरक होगी। अगर यह सुझाव स्वीकार कर लिया जाये तो मुझे उपनिवेशमें बोली जानेवाली भारतीय भाषाओंमें उस पुस्तिकाका अनुवाद करा देनेमें खुशी होगी। अगर जरूरत हो तो मैं उसका मुफ्त वितरण भी करा दूँगा। निगमको सिर्फ छपाई और कागजका खर्च देना होगा।

[अंग्रेजीसे]
नेटाल मर्क्युरी ८–३–१८९९

३१ रोडेशियाके भारतीय व्यापारी

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मार्च १८, १८९९

सेवामें
सम्पादक
टाइम्स ऑफ इंडिया
[बम्बई]

महोदय

मैं इसके साथ एक पत्रकी नकल भेज रहा हूँ। यह पत्र रोडेशियाके उमतली नामक स्थानके भारतीय व्यापारियोंकी ओरसे नेटालके भारतीय समाजके नाम प्राप्त हुआ है[1]। पत्र स्वयं स्पष्ट है। ऐसा मालूम होता है कि अधिकारियोंने भारतीयोंकी सहायता की है। परन्तु मेरे नम्र विचारसे समस्याको हल करनेके लिए अत्याचारियोंको पर्याप्त दण्ड देना ही चाहिए। साथ ही औपनिवेशिक कार्यालयको इस आशयकी जोरदार घोषणा भी करनी चाहिए कि दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश उपनिवेशी भारतीय प्रवासियोंकी स्वतंत्रतामें हस्तक्षेप करेंगे तो उन्हें क्षमा नहीं किया जायेगा। औपनिवेशिक कार्यालय इतना न करे तो काम नहीं चलेगा। पत्रसे यह बोध पड़ेगा कि हिंसा-कार्योंमें प्रमुख यूरोपीयों और शान्ति कायम करनेके लिए नियुक्त मजिस्ट्रेटोंने

१ देखिए अगला शीर्षक।
२. टाइम्स ऑफ इंडिया, [illegible]

५२ दक्षिण आफ्रिकामें प्लेगका आतंक[1]

डर्बन
मार्च २, १८९९

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी मुसीबतोंका प्याला अब तक भरा नहीं दिखलाई पड़ता और गिल्टीवाला प्लेग उसे लबालब भर देनेके आसार दिखा रहा है। एक अफवाह फैल गई थी कि लोरेंजो मार्क्विसमें एक व्यक्तिको प्लेग हो गया है। यह अब झूठी साबित हो गई है परन्तु इससे दक्षिण आफ्रिका भर बेचैन हो उठा था और इस महाद्वीपकी विभिन्न सरकारोंने सख्त उपाय करने शुरू कर दिये थे जो मुख्यतः भारतीयोंपर लागू होते थे। जब यह सब हो ही रहा था यह अफवाह फैली कि एक भारतीय लोरेंजो मार्क्विसमें कुछ समयतक रहनेके बाद ट्रान्सवालके मिडेलबर्ग नामक स्थानमें जा बसा था वह गिल्टीवाले प्लेगसे मर गया है। इसपर तुरन्त यह मान लिया गया कि बीमारीके पकड़कर प्रकट होनेकी कोई निश्चित अवधि बताई नहीं जा सकती। साथ ही भारतीयोंके आगमनका पूर्ण निषेध करनेके सुझाव भी दिये गये। ट्रान्सवाल-सरकारने एक घोषणा निकालकर अपने देशमें पड़ोसी राज्योंसे भी भारतीयोंके प्रवेशका निषेध कर दिया। ऐसा करते हुए इस बातकी भी परवाह नहीं की गई कि प्रवेशेच्छुक भारतीय इनमें से किसी राज्यका बहुत पुराना निवासी है, या भारतसे नया-नया आनेवाला कोई व्यक्ति है। हाँ अगर उसके पास राज्य-सचिवसे प्राप्त परवानेका जोर हो तो बात दूसरी। और, यह परवाना तो यहाँ कह दिया जाये हर-किसी भारतीयको आसानीसे मिलने वाली चीज है नहीं। भारतीयोंका देशके अन्दर यात्रा करना भी करीब-करीब स्थगित कर दिया गया। यह लिखते समय समाचारपत्रोंमें एक तार दिखलाई पड़ा है। उसमें कहा गया है कि उपर्युक्त घोषणामें इस हदतक संशोधन कर दिया गया है कि भारतीयोंके सीमा-स्थित अफसरको यह सन्तोष दिला देनेपर कि वे हालहीमें मारिशस मादागास्कर या भारतके किसी प्लेगग्रस्त जिलेसे नहीं आये हैं बिना परवानेके देशमें प्रवेश करने दिया जायगा।

जिन डाक्टरोंने उपर्युक्त रोगीकी मृत्यूपरान्त परीक्षा की थी उन्होंने कहा था कि बीमारी गिल्टीवाले प्लेगकी नहीं थी। तथापि जो-कुछ शरारत होनी थी वह तो हो ही चुकी और सारे दक्षिण आफ्रिकामें बेतहाशा भय फैला हुआ है। लोरेंजो मार्क्विस मलेरियासे भरा हुआ जिला है अपनी गन्दगीके लिए मशहूर है और वहाँ सफाई करनेवालोंका कोई प्रबन्ध नहीं है। फिर भी वहाँसे आये छोटे मोटे तार-समाचारोंसे ज्ञात होता है वहाँ प्लेग-सम्बन्धी नियम अत्यन्त कठोर और युक्तिहीन ही नहीं बल्कि उत्पीड़क और अव्यावहारिक हैं। ट्रान्सवालमें भारतीयोंके कारोबारको गम्भीर क्षति पहुँच रही है। अनेक अभागे फेरीवाले अपना माल खरीदनेके लिए नेटाल आये थे। अब उनमें से अधिकतर बाहर ही रोक दिये गये हैं। वे अपना माल और कर्ज छोड़ कर आये हैं। जैसी कि कल्पना की जा सकती है, उनमें परवाने प्राप्त करनेका सामर्थ्य नहीं है। न वे भारी कठिनाईके बिना ट्रान्सवालके कर्मचारियोंकी जाँच-पड़तालमें ही खरे उतर सकते हैं। कहा जाता है—यानी फेरीवाले खुद शिकायत करते हैं—कि ट्रान्सवालके

१ गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारपर टाइम्स ऑफ इंडियाके लिए एक लेख-माला लिखी थी। यह उसी मालाका अंश है। दूसरे अंशोंकी तारीखें हैं—मई १०, जुलाई १९, अगस्त २७, नवम्बर १८, १८९९ और मार्च १४, १९ के बाद।

बन्दर ही उन्हें अपने मालकी फेरी लगाने नहीं दी जाती। इसकी प्रतिक्रिया भारतीय पेढ़ियों-पर होती है जो इन फेरीवालोंपर निर्भर करती हैं।

केप-सरकार, ऐसा दीखता है सफलताकी नहीं हुई। परन्तु वहाँ सरकारसे यह माँग करनेका आन्दोलन चल रहा है कि केप-प्रदेशके किसी भी बन्दरगाहमें किसी भी भारतीयका उतरना निषिद्ध कर दिया जाये। कुछ दिन पहले पोर्ट एलिज़ाबेथमें एक सभा की गई थी। उसमें कम ज्यादा हिंसात्मक ढंगसे भाषण किये गये थे। कुछ भाषणकर्ताओंने तो यहाँतक कह डाला कि अगर सरकार पोर्ट एलिज़ाबेथकी जनताकी इच्छा पूरी नहीं करेगी तो उसे कानून अपने हाथोंमें ले लेना होगा। नेटाल-सरकार, स्पष्टतः उत्सुक है कि वह इस झूठे आतंकके चपेटेमें न आये। परन्तु, डर है कि वह बहुत दिनोंतक अपना धैर्य कायम नहीं रख सकेगी।

नेटालमें दो परस्पर-विरोधी हित काम कर रहे हैं। एक ओर तो खेतों और बागोंके मालिक हैं जो सारे उपनिवेशमें पूरी तरह भारतीय गिरमिटिया मजदूरोंपर निर्भर करते हैं और ऐसे मजदूरोंकी सतत उपलब्धिके बिना अपना काम नहीं चला सकते। दूसरी ओर, डर्बन तथा मैरित्सबर्ग जैसे कस्बों और नगरोंके लोग हैं जो ऐसे किन्हीं स्वार्थोंकी जोखिम न होनेके कारण भारतीयोंके आगमनका पूर्ण निषेध करा देनेमें खुश होंगे — चाहे वे भारतीय गिरमिटिया हों, चाहे अन्य। इस बातपर ध्यान देना बड़ा दिलचस्प है कि सारे विवादमें दक्षिण आफ्रिकाके लोगोंने एक बार भी भारतीय हितोंपर विचार करनेका कष्ट नहीं किया। मालूम होता है कि चुपचाप यह स्वीकार कर लिया गया है कि जो भारतीय इस समय दक्षिण आफ्रिकामें निवास कर रहे हैं उनका मत भी जमा करना जरूरी नहीं है। मालूम होता है उनको यह सूझा ही नहीं कि उन लोगोंको जिनमें से कुछ तो बहुत खुशहाल और इज्जतदार हैं भारतसे अपनी पत्नियों और बच्चोंको या नौकरोंको लाना ही पड़ता है। भारतके लोगोंको जानकर आश्चर्य होगा कि एक सुझाव गम्भीरताके साथ दिया गया है कि जब उपनिवेशमें चावलोंका वर्तमान संग्रह खत्म हो जाये तब भारतीयोंको मक्काके आहारपर रहनेके लिए बाध्य किया जाये। और, जहाँतक भारतसे लाई गई अन्य खाद्य-सामग्री और वस्त्रोंका सम्बन्ध है सो अलबत्ता सिर्फ एक तफसीलकी बात है। मैरित्सबर्ग नगर-परिषदने अपने क्षेत्रके भारतीय दुकानदारोंके नाम एक परिपत्र जारी किया है। उसके द्वारा उन्हें सूचना दी गई है कि उन्हें अपना माल कम करना शुरू कर देना चाहिए, क्योंकि प्लेग नजदीक होनेके कारण उनमें से हरएकको पृथक बस्तियोंमें चले जानेका आदेश दिया जा सकता है। जहाज-कम्पनियाँ — सबसे अच्छी कम्पनियाँ भी — भारतीय यात्रियोंको दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी बन्दरगाहको ले जानेसे बिलकुल इनकार करती हैं। अनेक भारतीय व्यापारियोंके कुटुम्बी या साझेदार लोरेंजो मार्क्विसमें हैं इसलिए उन्हें भारी असुविधा तथा भयानक चिन्ताकी स्थितिसे गुजरना पड़ रहा है। फिर भी उन लोगोंको नेटाल आने नहीं दिया जाता — इसलिए नहीं कि लोरेंजो मार्क्विसको प्लेग-ग्रस्त बन्दरगाह घोषित कर दिया गया है या वहाँ किसी भी हदतक प्लेग फैला हुआ है। नेटालने अब अपने प्रयोजनकी सिद्धिके लिए अप्रत्यक्ष और आपत्तिजनक तरीकोंका अवलम्बन किया है। उसके एशियाई-विरोधी कानूनसे यह स्पष्ट है। उसमें मौजूदा व्यक्तियोंको भारतीयोंका उल्लेख कहीं ढूँढ़े भी न मिलेगा। स्पष्टतः वही तरीका प्लेगके सम्बन्धमें भी अख्तियार किया गया है। किसी भी जहाजको जो किसी भारतीयको लेकर आता है स्वास्थ्य अधिकारी सरकारसे पूछे बिना सवारियाँ उतारनेकी इजाजत नहीं देता। पूछ-ताछकी इस प्रक्रिया-मात्रमें ही ऐसे जहाजोंका रुका रहना आवश्यक हो जाता है भले ही यह मान रखना जरूरी है कि जहाजमें कोई बीमारी न हो और जहाज किसी बिलकुल नीरोग बन्दरगाहसे ही

> किया। भारत-सरकार इस प्लेगके मामलेमें अपने छोटे-छोटे अफसरोंपर बिलकुल ही भरोसा नहीं कर सकती। भारत-सरकारका सारा-का-सारा निम्न-अधिकारी-मण्डल इस विषयमें धोखेबाजोंसे भरा हुआ है कि प्लेग कहाँ है।

अगर कोई भारतीय जहाज हो तो उसमें कोई गुप्त बात दिखलाई देनी ही चाहिए! दूसरे सब स्थानोंके विपरीत दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय होना ही रोगोंकी छूतका कारण माना जाता है। भारतीय और उनका माल-असबाब ही छूतको ला सकता है। दूसरे यात्रियोंके बारेमें कोई आपत्ति नहीं की जाती भले ही वे किन्हीं छूतके जिलोंसे क्यों न आये हों। मादागास्कर और मारिशसको छूत-ग्रस्त बन्दरगाह घोषित कर रखा गया है। फिर भी जहाज-कम्पनियाँ वहाँ यूरोपीय यात्रियोंको तो ला सकती हैं मगर, क्या मजाल कि वे भारतीयोंको ले आयें। यह तो मंजूर करना ही होगा कि नेटाल तथा केपकी सरकारें आतंकके समयमें अन्याय न होने देनेके लिए अधिकसे अधिक उत्सुक हैं। परन्तु वे उन मतदाताओंसे जिनके अपने पदोंके लिए, वर्तमान सदस्य ऋणी हैं इतनी डरती हैं कि भारतीयोंको अनजाने फिर भी निश्चित रूपसे बहुत-सी अनावश्यक असुविधाएँ पहुँचाई जाती रहती हैं। ईश्वर हमें प्लेगके वास्तविक आक्रमणसे बचाये। अगर वह आ ही गया तो भारतीय ऐसी स्थितिमें पड़ जायेंगे जिसकी भीषणताकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। ऐसे ही मौकोंपर श्री चेम्बरलेनकी यह शोचनीय कर्तव्य-च्युति अखरती है कि १८९७ के प्रारम्भमें डर्बनकी भीड़की गैरकानूनी कार्रवाइयोंका उन्होंने कोई खयाल नहीं किया। उस समय बारह दिनोंके लिए सरकारने अपने कर्तव्य व्यावहारिक रूपमें भीड़के हाथों सौंप दिये थे। इस जैसे महाखण्डमें जहाँ विभिन्न प्रजातियोंके विविध और परस्पर-विरोधी हित सन्निहित हैं ब्रिटिश-सरकारका प्रबल और शक्तिशाली प्रभाव सदैव आवश्यक है। एक बार विभिन्न प्रजातियोंकी आबादीके किसी अंग-विशेषको छूट दी गई कि कोई जान ही नहीं सकता कि क्या उपद्रव उमड़ पड़ेगा। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, पोर्ट एलिजाबेथके लोगोंने पहलेसे ही धमकी दे रखी है कि अगर सरकारने अपनी इच्छाको उनकी इच्छाके अनुसार मोड़नेसे इनकार किया तो वे कानूनको अपने हाथोंमें ले लेंगे। डर्बनके समाचारपत्रोंमें इसी नीतिकी हिमायत करनेवाले गुमनाम पत्र प्रकाशित हो रहे हैं और प्लेगके आतंकके जो अभी मिटा नहीं है, इतिहासके सिंहावलोकनकी परिसमाप्ति *नेटाल मर्क्युरी*में प्रकाशित पत्र-व्यवहारके निम्नलिखित उद्धरणसे बखूबी हो सकती है। यह उद्धरण दुनियाके इस हिस्सेमें जन-साधारणकी भावनाओंका खासा अच्छा नमूना है:

> यदि सरकार डरपोक और कार्रवाई करनेमें ढुलमुल है तो जनता खुद अपना काम कर ले और फिरसे सामूहिक रूपमें जहाज-घाटपर जाये और इस बार तमाम एशियाइयोंको उतरनेसे रोकनेके लिए वहाँ पड़ाव डाल दे। हम उन्हें यहाँ किसी भी कीमतपर नहीं चाहते। आपत्तिजनक भारतीयोंका प्रवास यहाँ सदा-सर्वदाके लिए बन्द हो जाने दीजिए; और, जो लोग यहाँ मौजूद हैं उनका रहना दूभर कर देनेके लिए अगर कोई जेहाद छेड़ी जाये तो मैं खुद उसमें शामिल हूँगा।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया (साप्ताहिक संस्करण) २२-४-१८९९।

१ देखिए खण्ड २, पृष्ठ १९०–९२।

९३. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मार्च २८, १८९९

माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय

भारतीय समाजको यह देखकर संतोष हुआ है कि प्रवासी प्रतिबन्धक-अधिनियमके अन्तर्गत प्रस्थान-सम्बन्धी परवानोंपर यात्रियोंसे वसूल किया जानेवाला १ पौंडका शुल्क उठा लिया गया है।

मैं बताना चाहता हूँ कि विक्रेता-परवाना अधिनियम-सम्बन्धी प्रार्थनापत्र में इस विषयके जिस प्रार्थनापत्रका उल्लेख किया गया है उसका मसविदा बनानेके पहले मुझसे कहा गया था कि मैं उपनिवेशके विशाल बस्तियोंकी राय एकत्र कर लूँ और यदि राय अनुकूल मिले तो उक्त नियमको उठानेका अनुरोध करनेकी दृष्टिसे सरकारकी सेवामें उपस्थित होऊँ। मैं यह भी बताना चाहता हूँ कि अबतक जो रायें मिली हैं वे इस मतके पक्षमें हैं कि उक्त नियम अनुचित था।

आपसे मेरा निवेदन है कि इस पत्रकी विषय-वस्तु परम माननीय उपनिवेश-मन्त्रीकी दृष्टिमें ला दें ताकि उन्हें पता चल जाये कि सरकारने कृपापूर्वक एक पौंडी शुल्कके सम्बन्धमें शिकायतका कारण दूर कर दिया है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

मुख्य उपनिवेश-मन्त्रीके नाम नेटालके गवर्नरके २५ मार्च १८९९के खरीता नम्बर २९ का सहपत्र नम्बर १।

१ देखिए पृष्ठ ३१

२४ प्रार्थनापत्र : श्री चेम्बरलेनको

प्रिटोरिया
मई १८, १८९९[1]

सेवामें
परम माननीय जोजेफ़ चेम्बरलेन
सम्राज्ञीके मुख्य उपनिवेश-मन्त्री

दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यवासी ब्रिटिश भारतीयोंके बीच हस्ताक्षर करनेवाले
प्रतिनिधियोंका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि

प्रार्थियोंको खेद है कि दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यमें ब्रिटिश भारतीय फिर दुर्भाग्यमय और परेशानीकी स्थितिमें फँस गये हैं। उसके कारण उन्हें सम्राज्ञी-सरकारको फिर कष्ट देना पड़ रहा है।

कुछ समय हुआ कि सरकार और सर विलियम वेडरबर्नमें हुए पत्र-व्यवहार[2]को देखकर आपके प्रार्थियोंको आशा हो गई थी कि ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंके कष्टोंका प्रायः अन्त हो जायेगा। परन्तु उसके तुरन्त पश्चात् दक्षिण आफ्रिकी गणराज्य-सरकारकी विज्ञप्तिसे इस गणराज्यके निवासी ब्रिटिश भारतीयोंका भ्रम दूर हो गया। यह विज्ञप्ति २१ अप्रैल १८९९के स्टाट्सकूरेंट (सरकारी गज़ट) में प्रकाशित हुई है (उसके अनुवादकी एक प्रति इस प्रार्थनापत्रके साथ संलग्न है)। उसके कारण ही फिरसे प्रार्थनापत्र देनेकी आवश्यकता पड़ी है। उससे प्रकट है कि इस बार गणराज्यकी सरकारने १८८६ में संशोधित १८८५ के कानून ३ को लागू करनेका इरादा पक्का कर लिया है। अध्यक्ष लोकसभा (फोक्सराट) के उद्घाटन-भाषणमें भी इसकी चर्चा की गई है।

आपके प्रार्थी आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकृष्ट करनेकी अनुमति चाहते हैं कि जबसे तैयब हाजी खान मुहम्मद बनाम एफ॰ डब्ल्यू॰ राइट्ज़ एन॰ ओ॰ के मुकदमे[3]का फैसला हुआ है तबसे इस गणराज्यमें भारतीय लोगोंको चैन नहीं है। भारतीयोंको सरसरी कार्रवाई द्वारा बस्तियोंमें हटा देनेके सम्बन्धमें कई विज्ञप्तियाँ निकल चुकी हैं। स्वभावतः इससे उनका व्यापार अस्त-व्यस्त हो गया है और उनमें बहुत बेचैनी फैल गई है।

१. यह तारीख कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्सके अनुसार दी गई है। प्रार्थनापत्रकी छपी प्रतिमें तारीखके स्थानपर केवल 'मई १८९९' दिया गया है। मई १० १८९९ को *टाइम्स ऑफ़ इंडिया*को भेजे गये समाचारसे स्पष्ट है कि यह इस तारीखके बहुत पहले तैयार हुआ था। परन्तु चेम्बरलेनके पास मई २० १८९९ के पत्रसे पता होता है कि यह प्रार्थनापत्र, जो प्रिटोरिया-स्थित ब्रिटिश एजेंटके पास भेजा गया था, २७ मई तक उपनिवेश-मन्त्रीको नहीं भेजा गया।

२. [illegible] जनवरी १३ १८९९ [illegible] [illegible] था। [illegible] कहा गया था कि ब्रिटिश [illegible] भारतीय व्यापारियोंके अनुकूल कोई समझौता करानेकी कोशिश [illegible] (*इंडिया* १०-२-१८९९)। किन्तु इस सम्बन्धमें [illegible] सफल नहीं हुए, क्योंकि [illegible]।

३ देखिए "[illegible]", [illegible] १६, १८९८।

यह प्रश्न आपके प्रार्थियोंके लिए बहुत महत्त्वका है और वे इस दुःखदायी अनिश्चित स्थितिको चलते रहने देनेकी अपेक्षा इसका शीघ्र ही कोई अन्तिम निर्णय हो जानेका स्वागत करेंगे। वे सादर निवेदन करते हैं कि उन्होंने अपने गत प्रार्थनापत्रमें ऊपर निर्दिष्ट मुकदमेमें, न्यायालयके जिस बहुमत-निर्णयका प्रश्न उठाया था उसके अतिरिक्त भी जिस कानून और विज्ञप्तिके विषयमें यह प्रार्थनापत्र दिया जा रहा है उनसे ऐसे कई प्रश्न खड़े हो गये हैं कि उनके कारण सम्राज्ञीकी सरकार द्वारा उनमें कारगर हस्तक्षेप किया जाना उचित होगा।

अपनी पहली विज्ञप्तियोंमें ट्रान्सवाल-सरकार १८८५ के कानून ३ का बारीकीसे अनुसरण नहीं किया करती थी। इसके विपरीत अपनी वर्तमान विज्ञप्तिमें उसने उस कानूनका बारीकीसे अनुसरण किया है। विज्ञप्तिकी प्रस्तावनाका प्रथम भाग यह है

> **चूँकि १८८५ के कानून ३ के अनुच्छेद ३ (घ) ने सरकारको अधिकार दिया है कि वह स्वास्थ्य-रक्षाके प्रयोजनसे एशियाकी मूल जातियोंमें से किसीके भी व्यक्तियोंको बसनेके लिए, कुछ खास गलियाँ, मुहल्ले और बस्तियाँ बतला सकती है और इन जातियोंमें कुली कहलानेवाले लोग अरब मलायी और तुर्की साम्राज्यके मुस्लिम प्रजाजन भी शामिल हैं।**

सम्राज्ञीकी सरकार इस कानूनको स्वीकृत कर चुकी है। दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके न्यायालयोंने निवास (हैबिटेशन) शब्दकी व्याख्या यह की है कि उसमें रहनेके स्थानके अतिरिक्त काम-काजका स्थान भी आ जाता है। इसलिए यहाँतक तो आपके प्रार्थियोंको अनिवार्यताके सामने सिर झुकाना पड़ रहा है। परन्तु वे यह बतलानेकी स्वतंत्रता चाहते हैं — जैसा कि उन्होंने पहले भी किया है — कि कानूनने सरकारको यह अधिकार कुछ खास अवस्थाओंमें और कुछ खास व्यक्तियोंके लिए ही दिया है। उसे सिद्ध करना चाहिए, और ऐसा सिद्ध करना चाहिए कि सम्राज्ञीकी सरकारको विश्वास हो जाये कि जिन लोगोंपर कानूनका प्रभाव पड़ता है उन्हें हटानेके लिए स्वास्थ्य-रक्षाके प्रयोजन सचमुच विद्यमान हैं उन्हें एकदम बस्तियोंमें हटाते हुए वह उन्हीं और एकमात्र उन्हीं प्रयोजनोंसे प्रेरित हो रही है। यह भी निवेदन है कि उसे यह भी सिद्ध करना चाहिए कि कानूनमें निर्दिष्ट व्यक्ति आपके प्रार्थी ही हैं।

आपके प्रार्थियोंका जो प्रार्थनापत्र १८९५ की सरकारी रिपोर्ट (ब्लू बुक) सी ७९११ के पृ १५-४४ पर छपा है उसमें उन्होंने दिखलानेका प्रयत्न किया है कि भारतीयोंको बस्तियोंमें हटानेके लिए सफाईका कोई भी आधार विद्यमान नहीं है और वस्तुतः भारतीयोंको उनकी तथाकथित अस्वच्छ आदतोंके कारण नहीं बल्कि व्यापारिक ईर्ष्याके कारण हटाया जा रहा है। गणराज्यके भारतीय लोगोंपर मैली आदतोंका जो आक्षेप किया गया है उसे मिथ्या सिद्ध करनेके लिए आपके प्रार्थियोंने उस समय जो प्रमाण उद्धृत किया था उसे ही पुनः उद्धृत कर देनेके लिए वे क्षमा-याचना नहीं करते। प्रिटोरियाके डॉ. वीलने जो बहुतसे भारतीयोंकी चिकित्सा करते हैं, १८९५में कहा था

> मैंने उनके शरीरोंको आम तौरसे स्वच्छ और उन लोगोंको गन्दगी तथा लापरवाहीसे उत्पन्न होनेवाले रोगोंसे मुक्त पाया है। उनके मकान साधारणतः साफ रहते हैं और सफाईका काम वे राजी-खुशीसे करते हैं। वर्गकी दृष्टिसे विचार किया जाये तो मेरा यह मत

१. देखिए पादटिप्पणी पृष्ठ १४।
२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ १८९-२११।

> है कि निम्नतम वर्गके भारतीय निम्नतम वर्गके यूरोपीयोंकी तुलनामें बहुत अच्छे ढंगसे रहते हैं। अर्थात् निम्नतम वर्गके भारतीय निम्नतम वर्गके यूरोपीयोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छे ढंगसे ज्यादा अच्छे मकानोंमें और सफाईकी व्यवस्थाका ज्यादा खयाल करके रहते हैं।
>
> मेरे खयालसे खास तौरपर भारतीयोंके विरुद्ध सफाईके आधारपर आपत्ति करना असम्भव है। शर्त हमेशा यह है कि, सफाई-अधिकारियोंका निरीक्षण भारतीयोंके यहाँ उतना ही सख्त और नियमित हो जितना कि यूरोपीयोंके यहाँ होता है।

जोहानिसबर्गके डॉ॰ स्पिकने लिखा था कि पत्रवाहकोंके निवास-स्थान स्वच्छ और स्वास्थ्यप्रद अवस्थामें हैं और इतने अच्छे हैं कि उनमें चाहे तो कोई यूरोपीय भी रह सकता है। इसी नगरके डॉ॰ नामेयरने लिखा था

> मुझे अपने धंधेके सिलसिलेमें जोहानिसबर्गके उच्चतर भारतीय वर्ग (बम्बईसे आये हुए व्यापारियों आदि) के घरोंमें जानेके मौके अक्सर मिलते हैं। इस आधारपर मैं यह मत देता हूँ कि वे अपनी आदतों और घरेलू जीवनमें अपने समकक्ष यूरोपीयोंके बराबर ही स्वच्छ हैं।

जोहानिसबर्गकी तीससे अधिक यूरोपीय पेढ़ियोंने कहा था

> उक्त भारतीय व्यापारी जिनमें से अधिकतर बम्बईसे आये हैं अपने व्यापारके स्थानों और मकानोंको स्वच्छ और समुचित आरोग्यजनक हालतमें — वास्तवमें ठीक यूरोपीयोंके बराबर ही अच्छी हालतमें — रखते हैं।

जो बात १८९५ में सत्य थी वह १८९९ में कुछ कम सत्य नहीं हो गई। जहाँतक आपके प्रार्थियोंको पता है हालके प्लेग-सम्बन्धी आतंकके समय भी उनके विरुद्ध किसी गम्भीर शिकायतका मौका नहीं आया था। आपके प्रार्थियोंका अभिप्राय यह नहीं कि ट्रान्सवालमें एक भी भारतीय ऐसा नहीं है जिसकी स्वास्थ्यकी दृष्टिसे निगरानी करनेकी आवश्यकता न हो परन्तु वे बिना किसी प्रतिवादके भयसे इतना निवेदन अवश्य करते हैं कि उनपर ऐसा कोई आक्षेप नहीं किया जा सकता जिससे कि सभी भारतीयोंको एक साथ बस्तियोंमें हटा देनेका औचित्य प्रतिपादित होता हो। आपके प्रार्थियोंका निवेदन है कि गन्दगीके एक-आध मामलेमें भुगतान सफाईके नियमोंके अनुसार सफलतापूर्वक किया जा सकता है और यदि इन नियमोंको और भी कठोर बना दिया जाये तो आपके प्रार्थी कोई आपत्ति नहीं कर सकते।

आपके प्रार्थी सदा सादर यह आग्रह करते आये हैं कि यह कानून उच्च वर्गके भारतीयों-पर लागू नहीं होता और व्यापारी कौम उस उसी वर्गकी है और यह सारा आन्दोलन भी वस्तुतः उनके ही विरुद्ध किया जा रहा है। तो क्या सम्राज्ञीकी सरकारसे यह प्रार्थना करनेमें भी कोई *ज्यादती है कि दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यकी सरकारको इस कानूनके शब्दोंकी सीमामें ही रहनेको कह* दिया जाये? यह कानून एशियाकी मूल जातियोंपर लागू होता है जिनमें कुली कहलानेवालों अरबों, मलायी और तुर्की साम्राज्यके मुस्लिम प्रजाजनोंकी गिनती होती है।" आपके प्रार्थियोंके लिए कुली शब्दका प्रयोग किया जाता है। इसपर प्रार्थी सादर किन्तु दृढ़तापूर्वक विरोध प्रकट करते हैं। वे हरगिज अरब नहीं हैं न मलायी या तुर्की साम्राज्यके प्रजाजन ही हैं। उनका दावा है कि वे महामहिम परम कृपालु सम्राज्ञीके राजभक्त शान्ति-प्रिय और विनम्र प्रजाजन हैं और व्यापारिक ईर्ष्याके विरुद्ध अपने संघर्षमें उन्हें उन्हींके संरक्षणका भरोसा है उनका विश्वास है कि यह संरक्षण उनको दिया जायेगा। सम्राज्ञीके शासनकी

हीरक-जयन्ती मनानेके लिए जब उपनिवेशोंके प्रधानमन्त्री लन्दनमें एकत्र हुए थे तब उनके सामने भाषण करते हुए आपने भारतीयोंका जिक्र बहुत प्रशंसापूर्ण शब्दोंमें किया था[1]। अब क्या आपके प्रार्थी यह आशा करें कि उस भाषणमें आपने जो विचार प्रकट किये थे वे दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके ब्रिटिश भारतीयोंपर भी क्रियात्मक रूपमें लागू किये जायेंगे? ऊपर जिन शब्दोंकी चर्चा हुई है उनसे होनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंके अपमानका यदि निवारण कर दिया गया और यदि उनकी स्थितिको १८५७[2] की दयालुतापूर्ण घोषणाके शब्दों और भावनाके अनुसार स्पष्ट कर दिया गया तो दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीय इस सम्राज्ञीके जन्म-दिनपर किया गया अपना परम सम्मान मानेंगे।

दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यकी सरकारको अधिकार है कि वह उन्हें (कुलियों अरबों आदि को) सफाईके प्रयोजनसे किन्हीं निश्चित गलियों मुहल्लों और बस्तियोंमें बसनेके लिए कह सकती है, अर्थात् विभिन्न नगरोंमें ही उसे यह अधिकार नहीं है कि वह जिस स्थानका उपयोग शहरका कूड़ा-करकट इकट्ठा करनेके लिए होता है और जहाँ शहर और बस्तीके बीचके नालेमें झिरझिरकर आनेवाले पानीके सिवा दूसरा पानी है ही नहीं उसपर बसी हुई छोटी-सी बस्तीमें लोगोंको ठूँस दे जिसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि उनके बीच भयानक किस्मके बुखार और दूसरे रोग फैल जायेंगे। इससे उनके प्राण और शहरमें रहनेवाले लोगोंका स्वास्थ्य भी खतरेमें पड़ जायेगा। और यदि भारतीय लोगोंको यूरोपीयोंसे पृथक करना आवश्यक ही हो तो भी यह समझमें नहीं आता कि उन्हें ऐसे स्थानपर क्यों धकेला जाय जहाँ वे न तो व्यापार कर सकते हैं न सफाईकी सुविधाएँ हैं और न पानी पहुँचनेका प्रबन्ध ही है। आपके प्रार्थी सादर निवेदन करते हैं कि यदि भारतीयोंको हटानेका कारण सफाईके अतिरिक्त और कुछ नहीं है तो नगरोंमें ही उनके लिए समान सुविधाओंसे सम्पन्न गलियों और मुहल्लोंका चुनाव अधिक सुगमतासे किया जा सकता है।

अन्तमें आपके प्रार्थी आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचना चाहते हैं कि भारतीय व्यापारियोंको हटानेकी इस प्रस्तावित कार्रवाईके कारण उनके अति मूल्यवान स्वार्थ संकटापन्न हो गये हैं और उनकी भारी हानि हो जायेगी। आपके प्रार्थियोंको पूर्ण आशा है कि यह मामला सम्राज्ञीकी सरकारके हाथोंमें सौंप देनेसे उस कठिनाईका कोई निश्चित और सन्तोषजनक हल निकल आयेगा जिसमें कि वे इस समय फँस गये हैं।

और दया तथा न्यायके इस कार्यके लिए आपके प्रार्थी अपना कर्तव्य समझकर, सदा दुआ करेंगे।

(ह०) तैयब हाजी खान मुहम्मद
और अन्य

१ देखिए खण्ड २, पृष्ठ १९० ।

२ यह या तो छपी प्रतिका पाठ है या मूल प्रतिसे ही नकल किया गया है। घोषणा १८५८ में की गई थी।

लगेत कीजिए) रहने और रोजगार करनेके लिए निश्चित गलियों मुहल्लों और बस्तियोंका निर्देश कर दे। यह शर्त उन लोगोंपर लागू नहीं होगी जो अपने मालिकोंके अहातोंमें रहते हैं।

२. ऊपरकी शर्तोंके अनुसार, १ जून १८९९ के पश्चात्, अरबों और अन्य एशियाइयोंको, केवल कानूनके अनुसार निर्दिष्ट गलियों मुहल्लों और बस्तियोंमें रोजगार करनेके लिए एक परवाना दिया जायेगा।

३ जो कुली अरब और अन्य एशियाई, अबतक इसी मतलबके लिए निर्दिष्ट गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंसे बाहर रोजगार करते हैं, उन्हें उसके लिए ३ जून १८९९ तकका एक परवाना लेना पड़ेगा और उस तारीखके बाद यह परवाना केवल कानूनके अनुसार इस मतलबके लिए निर्दिष्ट गलियों मुहल्लों और बस्तियोंमें रोजगार करनेके लिए दिया जायेगा।

४ जो कुली और एशियाई और अन्य फेरी लगानेवाले लोग इसी मतलबके लिए निर्दिष्ट गलियों मुहल्लों और बस्तियोंमें रहते हैं, उन्हें ३ जून १८९९ को समाप्त होनेवाली तिमाहीके लिए फेरीवालेका परवाना दिया जा सकता है।

५. जो कुली, अरब और अन्य एशियाई लोग गाँव या कस्बेसे बाहर किसी स्थानपर रहते और रोजगार करते हैं उन्हें १ जुलाई १८९९ तकका समय दिया जाता है कि वे अपने निवास और रोजगारका स्थान कानूनके अनुसार इसी मतलबके लिए निर्दिष्ट गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंमें हटा लें। किन्तु उनको ३ जून १८९९ तक अपने व्यापारका परवाना भी ले लेना चाहिए।

६ उपर्युक्त निश्चित तारीख जून ३ १८९९ के बाद कुलियों अरबों और अन्य समस्त एशियाइयोंको उस मतलबके लिए निर्दिष्ट गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंके बाहर व्यापारके लिए कोई परवाना नहीं दिया जायेगा। और जो लोग उस तारीखके बाद निर्दिष्ट गलियों मुहल्लों और बस्तियोंके बाहर बिना परवानेके व्यापार करते पाये जायेंगे उन्हें कानूनके अनुसार सजा दी जायेगी।

७ जो कुली अरब और अन्य एशियाई लोग यह समझते हों कि वे किसी समाप्त या असमाप्त पट्टेके आधारपर वाणिज्य सम्बन्ध बना कर सकते हैं उन्हें १ जुलाई १८९९ से कमसे-कम १ सप्ताह पहले अपनी दस्तावेजोंके साथ, भूमि-मकानदारों या वास-अनुबन्धकी प्रार्थनापत्र दे देना चाहिए। वह सरकारको सूचना देकर अवसर अपनी सम्पत्ति और कारण सिद्ध देगा।

८ इसी प्रकार जो कुली अरब और अन्य एशियाई समझते हों कि वे १८८५ के उक्त संशोधित कानून ३ से प्रभावित नहीं होते (क्योंकि वे १८९९ से पहले ही अपना बहुत माल कर चुके हैं और उनका समय अभी समाप्त नहीं हुआ अथवा उन्होंने उसे परवाना लिया है) उनको १ जुलाई १८९९ से कमसे-कम १ सप्ताह पहले भूमि-मकानदारों या वास-अनुबन्धकी अपनी दस्तावेजें सहित सूचना दे देनी चाहिए और वह, सरकारको इसकी सूचना देकर, अपनी सम्पत्ति और कारण सिद्ध देगा।

९. यह भूमि-मकानदारों और वास-अनुबन्धोंकी समझकर छोड़ दिया गया है कि यदि वे देख कि कुली और अरब आदि, निर्दिष्ट गलियों मुहल्लों और बस्तियोंमें निवासस्थान बनाकर कानूनका पालन करनेको तैयार हैं, परन्तु निश्चित समयमें उन्हें पूरा नहीं कर सकते, तो उक्त १ जुलाई १८९९ की तारीखके सम्बन्धमें वे कुछ रियायत कर दें।

१ जो कुली और अरब आदि व्यापार करते हैं वे यदि प्रार्थना करें तो सरकार उनसे मिलने और उन्हें निश्चित गलियों मुहल्लों और बस्तियोंमें व्यापार या दूकानोंकी उचित स्थान बनानेके लिए जमीन देनेकी बाबत अनुकूल विचार करनेके लिए तैयार है।

सरकारका दफ्तर, प्रिटोरिया
अप्रैल २५, १८९९

(ह०) एफ० डब्ल्यू० राइट्ज़
राज्य-सचिव

छपी हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३१९८, ११ १ तथा १२) से।

३५. ट्रान्सवालके भारतीय[1]

डर्बन
मई १०, [१८९९]

इस पत्रमें मैं उन भारी क्षतियोंके सिलसिलेका सिंहावलोकन कराना चाहता हूँ जो सम्राज्ञीके नामपर एकके बाद दूसरे उपनिवेश-मन्त्रीने बरपा की हैं, जिनके द्वारा उपनिवेश-मन्त्रीने दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यमें रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेका घुटकी-घुटकी करके परित्याग किया है और जिनका अन्त अब उस गणराज्य द्वारा निकाली गई एक भारी भरकम सूचनामें हुआ है, जिसमें भारतीयोंको आदेश दिया गया है कि वे पृथक बस्तियोंमें चले जायें अन्यथा उनके परवाने छीन लिये जायेंगे। अवन्स (लंदन) में "भारतीय मामलात" (इंडियन अफेयर्स) शीर्षक लेख-मालाके प्रतिष्ठित लेखकने इन बस्तियोंको कूड़ी बाड़ा" कहा है और सम्राज्ञीके एक प्रिटोरिया-स्थित प्रतिनिधिने इनका बखान यों किया है: जिस स्थानका उपयोग शहरका कूड़ा-करकट इकट्ठा करनेके लिए होता है और जहाँ शहर और बस्तीके बीचके नालेमें घिर घिर कर आनेवाले गन्दे पानीके सिवा दूसरा पानी है ही नहीं। समाचारपत्रके इस एक-अकेले लेखमें मुझे संक्षेपमें ही लिखना होगा और परिस्थितिका संक्षिप्त वर्णन करनेमें मैं लम्बे-लम्बे उद्धरण नहीं दे सकता। कुतूहली लोगों और उनके लिए, जो इस प्रश्नका पूरा इतिहास जाननेके इच्छुक हों, मुझे इस प्रश्नपर १८९५ में प्रकाशित एक सरकारी रिपोर्ट (पेपर्स रिलेटिंग टु द ग्रीवान्सेज आफ हर मैजेस्टीज इण्डियन सब्जेक्ट्स इन द साउथ आफ्रिकन रिपब्लिक — सी ७९११ १८९५) और ट्रान्सवाल-सरकारकी १८९४ में प्रकाशित दो हरी किताबें पढ़नेकी सलाह देनी होगी। इन पुस्तकों और इनके अन्य साहित्यसे मैंने निम्नलिखित सारांश निकाला है:

आजसे वर्षों पहले सन् १८८४ की बात है जबकि गणराज्यमें भारतीय व्यापारियोंकी संख्या अच्छी-खासी हो चुकी थी। इतनी संख्यामें उनकी उपस्थितिसे आम जनताका ध्यान उनकी ओर खिंचा और उनकी सफलताने उनके यूरोपीय प्रतिस्पर्धियोंकी ईर्ष्या जागृत की। कुछ स्वार्थी व्यापारियोंने अपने स्वार्थोंको सिद्ध करनेके उद्देश्यसे बिना विचारे सीधे-सादे भारतीयोंकी आदतों और चारित्र्यके बारेमें ऐसी बातें कहीं जिन्हें बखूबी जानबूझ कर की गई असत्यबया-नियाँ कहा जा सकता है। (यूरोपीयोंने ऑरेंज फ्री स्टेटकी संसदको एक अपमानकारी प्रार्थनापत्र दिया था और प्रिटोरियाके व्यापार-संघने उसे स्वीकार करते हुए ट्रान्सवालकी संसदको भेजा था। उसके इन अंशोंसे उपर्युक्त बात प्रमाणित हो जाती है: सारे समाजपर इन लोगोंकी गन्दी आदतों और अनैतिक आचारसे उत्पन्न कोढ़, उपदंश तथा इसी प्रकारके अन्य घृणित रोगोंके फैलनेका भी खतरा आ खड़ा हुआ है। चूँकि ये लोग पत्नियों या स्त्री-रिश्तेदारोंके बिना राज्यमें आते हैं, नतीजा साफ है। इनका धर्म सब स्त्रियोंको आत्मारहित और ईसाइयोंको स्वाभाविक शिकार मानना सिखाता है।)। उस समय ट्रान्सवाल-सरकारने उन थोड़ेसे स्वार्थी व्यापारियोंकी चीख-पुकार सुनकर भारतीयोंको ट्रान्सवालके बाहर खदेड़ देनेका विचार किया था। इसका तरीका यह तय किया गया था कि हरएक नये प्रवासीपर २५ पौंडका व्यक्ति-कर लगाया जाये और जो लोग ऐसी हालतोंमें भी बने रहें उन्हें तथा पुराने निवासियोंको भी पृथक बस्तियोंमें रहने और व्यापार करनेके लिए बाध्य किया जाये। साफ शब्दोंमें इसका

१. देखिए पादटिप्पणी पृष्ठ ९३।

मतलब था — उन्हें व्यापार करनेके अधिकारोंसे वंचित करना। परन्तु १८८५ का लन्दन-समझौता जो दूसरे कारणोंसे अब इतना प्रसिद्ध हो गया है उसके सामने चूकने लगा। यह समझौता दक्षिण आफ्रिकाके वतनियोंको छोड़कर अन्य सब लोगोंके व्यापार आदिके अधिकारोंका संरक्षण करता है। परन्तु सरकार किसी बातसे विचलित नहीं हुई और, बोअर-सरकारने ही योग्य एक तर्कसे उसने भारतीयोंको वतनी शब्दकी व्याख्यामें शामिल कर देनेका संकल्प किया। परन्तु यह कार्य उपकारशील उच्चायुक्त सर हर्क्यूलिस रॉबिन्सनको भी बहुत ज्यादा लगा। उन्होंने सरकारको सूचित किया कि ब्रिटिश भारतीयोंको "दक्षिण आफ्रिकाके वतनी परिभाषामें शामिल नहीं किया जा सकता। परन्तु (और यहाँ पहली भारी गलतीपर ध्यान दीजिए) भारतीयोंके खिलाफ जो आरोप उनकी नजरमें लाये गये थे उनकी छानबीन किये बिना ही वे सम्राज्ञी-सरकारको यह सलाह देनेके लिए तैयार हो गये कि वह समझौतेमें ऐसा संशोधन मंजूर कर ले जिससे बोअर-सरकार भारतीय-विरोधी कानून बना सके। तथापि लॉर्ड डर्बी ज्यादा चतुर निकले। वे उस सुझावको स्वीकार करनेके बदले ट्रान्सवाल-सरकारको लोक-स्वास्थ्यके हितमें वैसे कानून बनाने देनेको तैयार हो गये। शर्त यह थी कि २५ पौंडी कर घटा कर ३ पौंडका कर दिया जाये और यह एक धारा जोड़ दी जाये कि सफाईके कारणोंसे भारतीयोंको पृथक बस्तियोंमें रहनेके लिए बाध्य किया जा सकता है। इस तरह उन्होंने भी आरोपोंकी छानबीन करनेके बदले ट्रान्सवाल-सरकारने जो-कुछ कहा उसे सही मान लिया और सहज ही भारतीयोंके बचे हुए हितोंका सौदा कर डाला। वे मुख्ये आखिरतक उच्चायुक्तके भेजे हुए एक खरीतेसे उत्पन्न इस भ्रममें रहे कि जो कानून तथाकथित कुलियों आदि पर लागू होगा उससे इज्जतदार भारतीय व्यापारी अछूते रहेंगे।

परन्तु, कानूनके पास होते ही औपनिवेशिक कार्यालयका भ्रम टूट गया। जिन व्यक्तियोंके बारेमें समझा गया था कि वे बरी रखे गये हैं उन्हें भी बस्तियोंमें हट जानेका आदेश दिया गया। और उन्होंने अपने आपको अचल सम्पत्ति खरीदने और रेलगाड़ियोंके पहले या दूसरे दर्जेमें यात्रा करनेके अधिकारोंसे वंचित तथा आम तौरपर असभ्य जूलू लोगोंके वर्गमें शामिल पाया। यह बात कि ट्रान्सवाल-सरकारसे इन लोगोंको अछूता छोड़ रखनेका वादा करा लिया जाये न तो उच्चायुक्तको सूझी और न ब्रिटिश मन्त्रालयको ही। कानून बनानेकी अनुमति देते समय उन्होंने मनमें जो बात रख छोड़ी थी वह गणराज्य-सरकारके लिए बन्धन कारक नहीं हो सकती थी। और यह बिलकुल स्वाभाविक था। इसपर बातचीत और लिखा पढ़ीका एक सिलसिला चला — एक ओर भारतीयों व ब्रिटिश एजेंटके बीच और दूसरी ओर उच्चायुक्त व ट्रान्सवाल-सरकारके। इस सम्बन्धमें कहना ही होगा कि उच्चायुक्तने अधूरे उत्साहसे ही क्यों न हो खोई हुई बाजी फिर जीतनेकी कोशिश की। फिर भी बहुत स्वाभाविक है कि ट्रान्सवाल-सरकारने मुख्ये आखिरतक भारी शिकस्त दी है। लॉर्ड रिपन उस समय पदासीन हुए जबकि सारी चीज एक महा गड़बड़-घोटालेमें परिणत हो चुकी थी और उन्होंने कानूनोंकी व्याख्याके सम्बन्धमें पंच-फैसला कराने का सुझाव दिया। परन्तु, दुर्भाग्यवश तब भी असली प्रश्न अछूता छोड़ दिया गया। जो लोग निर्णय करनेके अधिकारी हैं उनका कहना है कि मामलेका अनुरोध-पत्र बड़ा ढीला लिखा गया और एक ऐसे सज्जनको — अर्थात् ऑरेंज फ्री स्टेटके मुख्य न्यायाधीशको — जो दूसरी दृष्टियोंसे कितने भी आदरणीय क्यों न हों भारतीयोंके विरुद्ध भारी पक्षपातक पोषक हैं पंच चुना गया। यहाँ प्रसंगवश तौरपर यह कहा जा सकता है कि इस पंच-फैसलेका उपयोग सम्भवतः भूतपूर्व दोनों सरकारोंके बीचके अन्य विवाद-ग्रस्त प्रश्नोंको पंचके सुपुर्द करनेके लिए उदाहरणके तौरपर किया

है और इस असमंजसकी स्थितिसे मुक्ति पानेके लिए श्री ग्रेम्बरलेनको अक्सर ही कई बार बरसों चिन्तामें बिताने पड़े होंगे। पंच बैठा और उसने भी इस प्रश्नपर विचार-विमर्श करना उचित नहीं समझा कि सारेके-सारे भारतीयोंपर गन्दगीके आरोपका कोई आधार है या नहीं। पंचको व्यापकतम अधिकार प्राप्त थे। अतः उन्होंने उनका पूरी खोलकर उपयोग किया और एक ऐसा निर्णय कर दिया जिससे भारतीय बिलकुल जैसेके-तैसे पड़े रह गये। उनसे कहा गया था कि दोनों सरकारोंके बीच जो करीते चले थे — वे करीते जिनपर कोई न्यायाधिकरण विचार नहीं कर सकता था परन्तु वे बहुत ठीक तरहसे कर सकते थे — उनकी दृष्टिसे वे कानूनोंकी व्याख्या कर दें यह बता दें कि वे किन लोगोंपर लागू होते हैं और निवास शब्दका अर्थ क्या है। (अगर पंचके सामने पेश किया गया आखिरी प्रश्न बम्बईमें हँसीका कारण बनता है तो मेरा जवाब यह है कि दक्षिण आफ्रिका बम्बई नहीं है।) परन्तु पंच महाशयने हालाँकि वे एक विद्वान वकील रहे हैं वैसा कुछ नहीं किया बल्कि अपना काम ट्रान्सवालकी अदालतोंको सौंप दिया। अर्थात् उन्होंने फैसला किया कि कानूनोंकी व्याख्या सिर्फ वे अदालतें ही कर सकती हैं।

जैसे ही वह बहुमूल्य निर्णय प्रकाशित हुआ भारतीयोंने उपनिवेश-मन्त्रीसे निवेदन किया कि उसे स्वीकार न किया जाये। उन्होंने विरोध भी व्यक्त किया कि इन सब कार्रवाइयोंमें — पंचके चुनावमें भी — उनकी कोई सुनवाई नहीं की गई। विषयकी बारीकियाँ न समझनेवालोंको ऐसा मालूम होगा कि श्री चेम्बरलेनने पंचसे जो यह आग्रह किया कि वह करीतोंकी दृष्टिसे कानूनोंकी व्याख्या कर दे उसमें कोई गलती नहीं थी। परन्तु भारतीयोंने यह साबित करनेके लिए राशिके-राशि प्रमाण पेश किये कि कानूनोंको गन्दगीके आधारपर मंजूर कराया गया है मन्दगीका आरोप निराधार है — ट्रान्सवालके तीन प्रतिष्ठित डॉक्टरोंने प्रमाणित किया है कि भारतीय उतने ही अच्छे ढंगसे रहते हैं, जितने कि यूरोपीय। एकने तो यहाँ तक कहा है कि वर्गोंकी तुलनामें वे यूरोपीयोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छे ढंगसे और ज्यादा अच्छे मकानोंमें रहते हैं — और सच्चा कारण जिसे बराबर दबाकर रखा गया है व्यापारिक ईर्ष्या है। इसका नतीजा श्री चेम्बरलेनसे यह प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेना हुआ कि भारतीय समुदाय शान्तिप्रेमी कानूनका पालन करनेवाले और पुण्यशील लोगोंका है। वे निस्सन्देह उद्यमी और बुद्धिमान तथा अवश्य समझके लोग हैं। परन्तु प्रमाणपत्र एक चीज है राहत दूसरी। पिछले वर्ष जो परीक्षात्मक मुकदमा[1] चला था उसकी याद अभी जनताके मनमें ताजी है। और, स्मरण किया जा सकेगा कि उसका नतीजा कानूनोंकी वही व्याख्या हुआ जिसका अनुमान भारतीयोंके उपर्युक्त प्रार्थना पत्रमें पहले ही किया जा चुका था। अर्थात् नतीजा यह था कि प्रिटोरियाके उच्च न्यायालयके न्यायाधीशोंके मतानुसार, निवासके लिए शब्दोंका अर्थ निवास और व्यापारके लिए है। अतएव ट्रान्सवालके जमाने भारतीयोंके लिए आशाकी जो अन्तिम किरण बच गई थी वह भी दुःखान्त नाटकके इस अन्तिम अंकके साथ विलुप्त हो गई। ट्रान्सवाल-सरकारने भारतीयोंको पृथक बस्तियोंमें हटानेकी धमकियाँ देते हुए सूचनाओंपर सूचनाएँ जारी की हैं। इससे उनका व्यापार अस्तव्यस्त हो गया है, उनके मन उद्विग्न हो उठे हैं और अब वे तलवारकी धारपर रह रहे हैं। उपनिवेश-मन्त्री और सर विलियम वेडरबर्नके बीच इस वर्षके आरम्भमें हुआ पत्र-व्यवहार अन्धकारमें एक उज्ज्वल चिनगारीके समान प्रतीत हुआ था परन्तु, अफसोस! वह चिनगारी ही था क्योंकि उपर्युक्त भारी-भरकम सूचनाने फिरसे आतंक पैदा कर दिया है और वे बेचारे जानते नहीं कि उनकी स्थिति क्या है और वे क्या करें। यह सूचना अन्तिम

१ देखिए "पत्र : ब्रिटिश एजेंटको", फरवरी २८, १८९८।

मानी जाती है। यह किसी पुराने ढंगके कानूनी प्रलेखसे ही ज्यादा मिलती-जुलती है — अनेक चूँकि-यों से युक्त इसमें भारतीयोंके विरुद्ध स्वीकार किये गये कानूनोंका खूब हवाला दिया गया है और "एशियाकी आदिम जातियोंको जिनमें तथाकथित कुली अरब मलायी और तुर्की साम्राज्यके मुसलमान प्रजाजन शामिल हैं" आदेश दिया गया है कि वे पहली जुलाईको या उसके पहले पृथक बस्तियोंमें हट जायें। तथापि व्यवस्था यह है कि सरकार चाहे तो लम्बी अवधिके पट्टेदारोंको अपने वर्तमान स्थानोंमें पट्टेकी अवधि बितानेका मौका दे सकती है। (देखिए, जब एक रियायत देनेका प्रसंग है, तब कैसी अनिश्चित बात कही जाती है)।

यह अड़चनकी स्थिति है जिसमें सम्राज्ञीके दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यवासी भारतीय प्रजाजन पड़नेवाले हैं। उनका एकमात्र अपराध यह है कि वे कमखर्च परिश्रमी स्वभावसे परहेज करने वाले और ईमानदारीके साधनोंसे अपनी जीविका कमानेके शौकीन हैं। उन्होंने हताश होकर आखिरी कोशिश की है और श्री चेम्बरलेनको फिरसे निवेदन-पत्र[1] भेजकर उनसे अनुरोध किया है कि वे उस स्वर्ण-उत्पादक देशमें उनकी हैसियतकी स्पष्ट व्याख्या कर दें और इस रूपमें उन्हें जन्मदिवस सम्बन्धी उपहार प्रदान करें। हम सब उत्कंठाके साथ उस निवेदनपत्रके परिणामकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। कभी न थकनेवाले उपनिवेश-मन्त्रीके प्रति न्यायकी दृष्टिसे यह स्वीकार करना ही होगा कि उन्होंने अपने पूर्वगामियोंकी भूलें विरासतमें ही पाई हैं और इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे खोई हुई बाजी फिरसे जीतनेके लिए अपने खयालके अनुसार अधिकसे अधिक प्रयत्न कर रहे हैं। वे अपने प्रयत्नोंमें सफल हों यही दक्षिण आफ्रिकाके प्रत्येक भारतीयकी प्रार्थना है।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया (साप्ताहिक संस्करण) १७-६-१८९९।

३६. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मई १८, १८९९

श्री सी० बर्ड
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं इस पत्र द्वारा कुछ हिचकके साथ आपका ध्यान भारतीय प्रवासी-अधिनियम संशोधन विधेयकके कतिपय पहलुओंकी ओर आकर्षित करनेकी धृष्टता करता हूँ। विधेयक इस समय विधान-सभाके विचाराधीन है।

मुझे मालूम हुआ है कि विधेयकका मसविदा गिरमिटिया भारतीयों द्वारा की जानेवाली शिकायतोंके बारेमें भारतीय प्रवासी न्यास-निकायकी शिकायतोंके जवाबमें बनाया गया है।

१ प्रार्थनापत्र चेम्बरलेनको, मई १६, १८९९।

कहा जाता है कि गिरमिटिया भारतीय ये शिकायतें बार-बार करते हैं और उन्हें अपना काम छोड़नेका बहाना बनाते रहते हैं।

विधेयकका मंशा उस कथित बुराईका इन उपायोंसे निवारण करना है

(१) संरक्षक सहायक संरक्षक या किसी मजिस्ट्रेट द्वारा शिकायती व्यक्तिका शिकायत दर्ज करानेके बाद उसके कामपर वापस भिजवा दिया जाना वैध करार देकर

(२) मालिकको कतिपय परिस्थितियोंमें यह अधिकार देकर कि वह शिकायती व्यक्तिके सकुशल वापस भेज दिये जानेका खर्च उसकी मजदूरीसे काट ले

(३) उन्हीं कतिपय परिस्थितियोंमें शिकायती व्यक्तिको ऐसा दण्डनीय करार देकर, मानो वह गैर-कानूनी तौरपर गैरहाजिर रहा हो।

सम्मानके साथ निवेदन है कि यह विधेयक गिरमिटिया-प्रथाके अधीन मजदूरी करनेवाले लोगोंकी डाँवाडोल स्थितिको और भी कठिन बना देगा। गिरमिटिया-प्रथाको तो साम्राज्य-सरकारने एक आवश्यक बुराई, और मजदूरीके इस स्वरूपसे परिचित लोगोंने अर्ध दासता या भयानक रूपमें दासताके निकटकी स्थिति माना है।

मेरी नम्र रायमें रामस्वामी और भारतीय प्रवासी-संरक्षकके मामलेमें सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयके साथ वर्तमान कानून ही मालिकोंकी जरूरत पूरी करनेके लिए काफी होगा — अलबत्ता अगर वह ईमानदार शिकायतियोंको भी रोकनेका काम नहीं करता। जो लोग काम करना ही नहीं चाहते और ईमानदारीसे काम करनेके बदले जेलमें सड़ते रहना पसन्द करते हैं उनके लिए तो कोई कानून काफी नहीं होगा — नहीं हो सकता। फिर भी अगर सरकार मालिकोंको राजी करना और वर्तमान कानूनको अधिक स्पष्ट बनाना जरूरी समझती है तो मैं महसूस करता हूँ कि जहाँतक पहले दो परिवर्तनोंका सम्बन्ध है भारतीयोंके दृष्टिकोणसे प्रस्तावित संशोधनके खिलाफ कुछ भी कहनेकी जरूरत नहीं है। परन्तु मैं कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि अन्तिम धारा अनावश्यक है और उसका मंशा १८९१ के कानून २५ के अन्तर्गत सुरक्षित शिकायती व्यक्तिके अधिकारमें — कि वह शिकायत दर्ज करानेके लिए अपना काम छोड़कर जा सकता है — हस्तक्षेप करना है। यह ऐसे शिकायतीपर गैरकानूनी तौरसे अनुपस्थित रहनेका अभियोग लगानेका अधिकार देती है जिसकी धारणा हो — चाहे वह सही हो या गलत — कि वह शिकायत करनेके लिए अपने कामको बिना दण्ड-भयके छोड़ सकता है। किसी भारतीयके मनमें यह बात उठ सकती है कि उसे वेतनके बदले भी नहीं मिलता यह उसके साथ अन्याय है जिसका निवारण होना चाहिए। यह शिकायत बिलकुल सम्भव है मजिस्ट्रेट या संरक्षक द्वारा निरर्थक ठहराई जाये। फिर भी मैं नहीं समझता कि निरर्थकता इतनी बड़ी है कि वह अभियोगात्मक अभियुक्तके रूपमें बदल दे। मेरा निवेदन है कि जो भी व्यक्ति ईमानदारीसे मानता हो कि उसे कोई शिकायत है, उसको वह शिकायत दर्ज करानेकी हरएक सुविधा दी जानी चाहिए। और, अगर यहाँ न मान लिया जाये कि औसत दर्जेके गिरमिटिया भारतीय कानूनी और नागरिक अधिकारोंके धनी हैं तो यह प्रस्ताव वैसी सुविधा देनेवाला नहीं है।

निरर्थक शिकायतोंके विरुद्ध जिन दोनोंकी व्यवस्था की गई है वे निवेदन है कि उसकी बाबत सोचे बिना ही स्वीकार किया गया है। कदाचित् गिरमिटिया भारतीयोंके लिए मजदूरीका कट जाना कारावाससे ज्यादा कष्टप्रद है।

अगर मैंने विधेयकको ठीक ठीक पढ़ा है तो मेरा नम्र मत है इस स्वीकारसे कि यह सिर्फ अनिवार्य देनेवाला विधेयक है उपर्युक्त दलील किसी भी तरह कमजोर नहीं हो जाती।

३७ पत्र उपनिवेश-सचिवको

मर्क्युरी लेन
डर्बन
मई १९, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं इसके साथ प्रतिनिधि भारतीयोंके एक सन्देशकी नकल भेज रहा हूँ, जिसमें उन्होंने महामहिमामयी सम्राज्ञीको उनके अस्सीवें जन्मदिनके उपलक्ष्यमें अपनी विनम्र तथा राज-भक्तिपूर्ण बधाई अर्पित की है। प्रतिनिधि भारतीय इसे इसी महीनेकी २४ तारीखको सम्राज्ञीके मुख्य उपनिवेश-मन्त्रीकी सेवामें तारसे भेजना चाहते हैं। उनकी इच्छा है, मैं आपसे निवेदन करूँ कि आप इसे आगे रवाना कर दें।

यह भी निवेदन है कि मुझे अधिकार दिया गया है, जो खर्च हो उसकी सूचना आपके पाससे मिलनेपर आपको चेक भेज दूँ।[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

सहपत्र संलग्न।

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १९ ३/९९।

३८ रानीको तार उनके जन्मदिनपर

डर्बन
मई १९, १८९९

नेटालके भारतीय सम्राज्ञीको उनके अस्सीवें जन्मदिनके उपलक्ष्यमें नम्रता और राजभक्तिपूर्वक बधाई देते हैं। हार्दिक प्रार्थना करते हैं कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर सर्वोत्तम सुख-समृद्धि की वर्षा करे।

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ११९९) से।

१. देखिए पृष्ठ ८१।
२. देखिए अगला शीर्षक।

गन्दगी बहकर आती है। वह बस्तीको शहरसे अलग करती है। बस्ती रास्तेसे अलग एक कोनेमें है और उसके नजदीक ही शहरका कूड़ा-कचरा इकट्ठा किया जाता है। अन्यत्र-गुफान आते ही रहते हैं परन्तु उनसे रक्षाकी वहाँ कोई व्यवस्था नहीं है। व्यापारीके नाते प्रार्थी कह सकता है कि वह स्थान व्यापारके लिए बिलकुल अयोग्य है। वहाँ न तो यूरोपीय आते हैं और न प्रिटोरियासे गुजरनेवाले काफिरोंके मारी दलें ही। और ये काफिर ही इन जमाने लोगोंके मुख्य ग्राहक हैं। कहना जरूरी नहीं कि वहाँ न तो मल-मूत्रकी सफाईका कोई कारगर प्रबन्ध है और न खाईके गन्दे पानीके अलावा दूसरे पानीका ही।

प्रार्थीने इन सब हकीकतोंका जिक्र यह बतानेके लिए किया है कि सम्राज्ञी-सरकारसे अपने हितोंकी रक्षाका निवेदन करनेमें वह ऐसी कोई माँग नहीं कर रहा है जो प्रिटोरियाकी आम आबादीके हितोंके प्रतिकूल हो। क्योंकि प्रार्थी यह स्वीकार करनेके लिए स्वतन्त्र है कि अगर अमाने भारतीय व्यापारियोंपर लगाये गये आरोपोंमें से एक-चौथाई भी सच होते तो प्रार्थीको साधारण समाजके हितोंके सामने अपने हितोंको दबा देना पड़ता। प्रसंगवश प्रार्थी यह भी कह दे कि और भी अगणित ब्रिटिश प्रजाजन ऐसे हैं जो लगभग उसी स्थितिमें पड़ गये हैं जिसमें प्रार्थी है।

यह वस्तुस्थिति कि सरकारने लम्बी अवधिके भारतीय पट्टेदारोंके मामलोंपर नरमीसे विचार करनेकी रजामन्दी जाहिर की है, इस पत्रमें अख्तियार किये हुए प्रार्थीके रुखको बदलती नहीं। प्रार्थी इन व्यापारियोंको बहुत लम्बे पट्टे नहीं दे सकता। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि अपेक्षाकृत छोटी अवधिके पट्टोंपर प्रार्थी जो किराया वसूल कर सकता है, लम्बी अवधिके पट्टोंपर वह उससे बहुत कम पा सकेगा।

प्रार्थीने अनेक बार माननीय ब्रिटिश एजेंटसे मुलाकात की है। वे जो जानकारी और सलाह दे सकते थे वह उन्होंने कृपापूर्वक दी। परन्तु, प्रार्थी नम्रतापूर्वक निवेदन करता है कि अब एक ऐसा समय आ गया है जब कि ज्यादा रस्मी और ज्यादा विस्तृत रूपमें फरियाद करना जरूरी है। प्रार्थी आदरपूर्वक प्रार्थना करता है कि इस मामलेपर उचित विचार किया जाये। और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी कर्तव्य समझकर, सदा दुआ करेगा आदि-आदि।

जॉ० फे० पार्कर

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स सी० ओ० ४१०–१८९९, *जिल्द २ पार्लमेंट।*

४० पत्र विलियम वेडरबर्नको[1]

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मई २७, १८९९

श्रीमन्,

मैं इसके साथ ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके एक प्रार्थनापत्रकी नकल भेजनेकी धृष्टता कर रहा हूँ। प्रार्थनापत्र ट्रान्सवाल-सरकार द्वारा निकाली गई नवीनतम सूचनासे उत्पन्न भारतीयोंकी स्थितिसे सम्बन्ध रखता है। सूचना द्वारा उस देशके भारतीयोंको आदेश दिया गया है कि वे इसी वर्ष १ जुलाईको या उसके पूर्व पृथक बस्तियोंमें हट जायें।

सूचनासे मालूम होगा कि सरकार भारतीयोंको जो पृथक बस्तियोंमें हटाना चाहती है उसका हेतु स्वच्छताकी रक्षा है। तो फिर, क्या उपनिवेश-सचिवसे यह माँग करना अनुचित होगा कि वे भारतीयोंके पृथक् बस्तियोंमें हटाये जानेके पहले यह देख लें कि स्वच्छता-सम्बन्धी कारण मौजूद है भी या नहीं? मेरी नम्र रायमें प्रार्थनापत्रमें यह साबित करनेके लिए काफी प्रमाण है कि सरकारने जो कार्रवाइयाँ करनेका विचार किया है उनके लिए स्वच्छता-सम्बन्धी कोई कारण मौजूद नहीं हो सकते।

वतनेतर यूरोपीयों (एटलांडर्स) की शिकायतें जिन्होंने सारी दुनियाका ध्यान आकर्षित किया है और जिनसे आजकल प्रमुख समाचारपत्रोंके कालमके कालम भरे रहते हैं मेरा निवेदन है, ट्रान्सवाल तथा दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंकी तुलनामें तुच्छ हैं। तो फिर, क्या इंग्लैंडवासी हमवतनियों और भारतीय जनतासे यह माँग करना बहुत ज्यादा होगा कि वे इस अतीव महत्त्वपूर्ण प्रश्नकी ओर (महत्त्वपूर्ण इसलिए कि यह जहाँतक भारतके बाहर प्रवासका सम्बन्ध है, सारे भारतके भविष्यपर असर डालनेवाला है) अधिकसे अधिक ध्यान दें?

इस पत्रमें जिस प्रार्थनापत्रका उल्लेख किया गया है, वह प्रिटोरिया-स्थित ब्रिटिश एजेंटके हाथोंमें है। परन्तु जबतक उच्चायुक्त और गणराज्यके अध्यक्षके बीच होनेवाली मन्त्रणाका जिसमें भारतीयोंके प्रश्नपर विचार-विमर्श होगा नतीजा न निकल जाये तबतकके लिए प्रार्थनापत्रको श्री चेम्बरलेनके पास भेजना रोक रखा गया है। यह भी हो सकता है कि वह उनके पास भेजा ही न जाये। परन्तु चूँकि इस मामलेमें समयका महत्त्व अधिकतम है इसलिए प्रार्थनापत्र भेज देनेमें ही बुद्धिमत्ता समझी गई। अन्यथा यह डर था कि कहीं उपर्युक्त वार्ताएँ निष्फल न हो जायें।

इसी विषयपर प्रिटोरियाके श्री पार्करके प्रार्थनापत्रकी एक नकल भी इसके साथ भेजी जा रही है। श्री पार्कर जन्मत ब्रिटिश प्रजा हैं। उनका प्रार्थनापत्र सम्बद्ध प्रश्नपर बहुत-कुछ प्रकाश डाल सकता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

दफ्तरीय ऑफिस रेकर्ड्स सी० ओ० ४१७—१८९९ जिल्द २ पार्लमेंट।

१ यह पत्र छपा हुआ था। और, इसकी [illegible] तथा भारतके प्रमुख लोकसेवकोंको भेजा गया था।

४१. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मई २९, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

महारानीके नाम नेटालवासी भारतीयोंके बधाईके तारके सम्बन्धमें मुझे आपके इसी मासकी २७ तारीखके पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनेका मान प्राप्त हुआ है। सूचनाके अनुसार इसके साथ पौं. ४-१५-० का चेक भेज रहा हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी. सी. ओ. १९ ३/९९।

४२. तार : उपनिवेश-सचिवको

[डर्बन]
जून १, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

क्या सरकार अनुपस्थित भूस्वामी विधेयक (एब्सेंटी लैंडलॉर्ड्स बिल) की यह धारा निष्कासनका इरादा रखती है जिसका प्रभाव परिणामस्वरूप भारतीयोंपर पड़ता है? चूँकि अन्यथा भारतीय प्रार्थनापत्र देना चाहते हैं इसलिए आप सूचित करेंगे तो मैं आभारी हूँगा।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस. एन. ३२१४) से।

४३. अभिनन्दनपत्र : सेवानिवृत्त होनेवाले मजिस्ट्रेटको

लेडीस्मिथके सेवानिवृत्त होनेवाले मजिस्ट्रेट श्री आर्थर पर्सिवल बॉसमको स्मृतिचिह्न भेंट करनेके लिए नगरके भारतीयोंने एक समारोह किया था। उस अवसरपर गांधीजीने एक भाषण दिया और अभिनन्दन-पत्र पढ़ा था। इन दोनोंका अखबारमें छपा विवरण नीचे दिया जाता है।

[जुलाई ५, १८९९]

श्री गांधीने कहा : मुझे बहुत ही खुशी है कि मेरे लेडीस्मिथवासी देशभाइयोंने मुझे इस समारोहमें भाग लेनेको बुलाया है। यह एक विशेषाधिकार और एक सम्मान है। अदालतके कर्मचारियों द्वारा भेंट दी जानेके बादसे लेडीस्मिथके भारतीयोंमें एक स्वस्थ स्पर्धा जागृत हो गई थी और उन्होंने भी विवरणके जरिये मुझे आदेश भेजा था कि जो भेंट दी जा चुकी है उससे हमारी भेंट किसी तरह कम न उतरे। अभिनन्दनपत्र तैयार करनेका काम भी सिपमन्सको सौंपा गया था। उपनिवेशके हर बारह अभिनन्दनपत्रोंमें से आठ वे ही तैयार करते हैं। स्मृतिचिह्नका चुनाव भी फ़र्मविशेषके जिम्मे किया गया था। उन्होंने मुझे विश्वास दिलाया है कि मेजके ढाँचेका यह साज कारीगरीका एक अनुपम नमूना है। यह मैं न्यायमूर्तिके प्रति लेडीस्मिथके भारतीयोंकी कृतज्ञता और अनुरागका परिचय देनेके लिए कह रहा हूँ। जब मैं हाल ही में यहाँ आया था उस समय मेरे देशभाई मुझे न्यायमूर्तिकी कठोर न्यायपरता प्रेमिल दयालुता और सौम्य स्वभावकी बातें सुनानेमें एक-दूसरेसे होड़ कर रहे थे। और अब उन्हें न्यायमूर्तिके सेवा-निवृत्त होनेके अवसरपर अपनी भावनाओंको व्यक्त करनेका यह साधन प्राप्त हो गया है। भारतीय हृदयमें स्थित कृतज्ञता और स्नेहकी ज्योति सहानुभूतिकी चिन गारीसे सजग हो उठनेके लिए सदैव तैयार रहती है और वह सहानुभूति न्यायमूर्तिसे उन्हें प्रचुर मात्रामें मिली है। मेरे लिए यह गौरवकी बात है कि मैं इस सुखद प्रसंगमें शामिल हुआ हूँ। इसके बाद उन्होंने निम्नलिखित अभिनन्दनपत्र पढ़कर सुनाया :

श्रीमन्,

लेडीस्मिथके अपने कार्यकालमें आप अत्यन्त निष्पक्षताके साथ न्याय करते रहे हैं इस लिए नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लेडीस्मिथवासी भारतीयोंके प्रतिनिधि हम आपके उपनिवेशकी सक्रिय सेवासे निवृत्त होनेके अवसरपर आपके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। हमें यह जानकर हर्ष होता है कि आपने दीर्घ कालतक उपनिवेशकी जो असाधारणतः उपयोगी सेवा की है उसे मान्यता प्रदान करनेके लिए उपनिवेशकी जनताने स्थानिक संसद द्वारा आपको पूरा निवृत्तिवेतन (पेंशन) देनेका निर्णय किया है। जहाँ हमें इस बातकी खुशी है कि आप अपने न्यायार्जित विश्रामका उपभोग करने जा रहे हैं वहाँ हम अपनी स्वार्थपरताके कारण बिना दुःखके इस भविष्यत्‌की कामना भी नहीं कर सकते। मुकदमेबाजोंके प्रति आपका दयाभाव अपने पास आये हुए मामलोंका मर्म समझनेके प्रयत्नमें आपका धैर्य तथा भय पक्षपात एवं पूर्वग्रहसे मुक्त होकर निष्पक्षभावसे आपका न्याय — इन सभी गुणोंने आपको भारतीय समाजका अत्यन्त प्रिय बना दिया है और ब्रिटिश संविधानपर चार चाँद लगाये हैं। इसी संविधानका आपने लेडीस्मिथमें दीर्घ कालतक अत्यन्त योग्यताके साथ प्रतिनिधित्व किया है। इस नगरके भारतीय समाजका आपके प्रति जो आदर-भाव है, यह साजका स्मृति-चिह्न उसीका प्रतीक-रूप

मालिक था। परिषदको बता दिया गया था कि जिस दूकानका मूल्य इस समय उसके लिए १५ पौंड है वह यदि बेचनी पड़ी तो उसका प्रायः कुछ भी मूल्य नहीं मिलेगा।

मुझे मालूम हुआ है कि वेरुलममें दो बर्जदारोंके पास पिछले साल तो परवाने थे परन्तु इस साल उन्हें वे देनेसे इनकार कर दिया गया। फल यह हुआ कि वे दोनों और उनके नौकर, सबके सब अपेक्षाकृत कंगाल हो गये हैं।

लेडीस्मिथमें एम० सी० आमला नामके एक व्यक्ति कई वर्षोंसे व्यापार कर रहे थे। इस वर्ष उनका परवाना यह कहकर रद कर दिया गया कि जिस जगह वे दूकान करते हैं वह नगरकी मुख्य गलीमें होनेके कारण केवल किसी यूरोपीय सौदागरके लायक है। उन्होंने एक और ऐसी इमारतमें दूकान खोलनेके परवानेकी अर्जी दी जो एक भारतीय दूकानके साथ लगी हुई थी और जिसका मालिक भी दूकानका मालिक ही था। यह प्रार्थना भी वही कारण बताकर अस्वीकृत कर दी गई। यहाँ इतना बता देनेकी मुझे इजाजत दी जाये कि इसी गलीमें और भी कई भारतीय दूकानें हैं।

पोर्ट शेप्स्टोनमें दो बड़े भारतीय व्यापारियोंने हाल ही में अपना कारोबार दो अन्य भारतीयोंके हाथ बेचा था। इन दोनोंने परवानेकी अर्जी दी परन्तु परवाना-अधिकारीने उसे अस्वीकृत कर दिया। परवाना-निकायमें अपील करनेका भी कुछ बेहतर नतीजा नहीं निकला। अब वे सोच रहे हैं कि करें तो क्या करें।

यहाँ नम्र निवेदन है कि यह बात बड़ी गम्भीर है कि एक व्यक्ति तो केवल भारतीय होनेके कारण अपना कारोबार बेच नहीं सकता और दूसरा भारतीय होनेके कारण ही उसे खरीद नहीं सकता। क्योंकि इस प्रकारके मामलोंमें परवाना न देनेका अर्थ यह हो जाता है कि बेचना-खरीदना भी बन्द हो जाये और वह हो भी तो [illegible] हो।

एक अन्य भारतीय अपनी दूकान डंडी कोल कम्पनीको बेचकर और वहाँ अपना सारा कारोबार समेटकर डर्बनमें आ गया और वहाँ उसने अमगेनी रोडपर पहलेसे परवाना-प्राप्त एक दूकान खरीदकर उसमें स्वयं व्यापार करनेके लिए परवानेकी अर्जी दी। उसे परवाना अधिकारीने परवाना दिया तो सही परन्तु कई बार अर्जियाँ देने और भारी खर्च करके डर्बनका एक बड़ा वकील करनेके पश्चात् और वह भी केवल थोड़े-से समयके लिए, जिससे कि प्रार्थीने परवाना मिल जानेकी आशामें जो माल खरीद लिया था उसे वह बेच सके।

ये कुछ मामले तो ऐसे हैं जिनमें कि जमे-जमाये कारोबारवालोंपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। परन्तु ऐसे उदाहरण अनगिनत हैं जिनमें कि बिलकुल नये और पूँजीवाले व्यक्तियोंको केवल भारतीय होनेके कारण परवाना देनेसे इनकार कर दिया गया। यह भी कहा गया कि उनके पास पिछले साल भी परवाना नहीं था।

भारतीयोंको यह देखकर संतोष हुआ है और वे इसके लिए कृतज्ञ भी हैं कि सरकार स्वयं चाहती है कि जिन भारतीयोंका कारोबार जम चुका है उनको कोई हानि न पहुँचे। और उसने शायद इसीलिए कई नगर-परिषदों और नगर-निकायोंको इस आशयके पत्र भी लिखे हैं कि यदि उन्होंने जमे-जमाये कारोबारवालोंको न छेड़नेका ध्यान न रखा तो शायद भारतीयोंको सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार देनेके लिए कानून बनाना पड़ जाये। परन्तु मैं बताना चाहता हूँ कि निकायोंके नाम इस प्रकारकी अपीलका कुछ असर हुआ भी तो वह शायद स्थायी नहीं होगा और भारतीय व्यापारी पूर्ववत् भयंकर दुविधाकी अवस्थामें पड़े रहेंगे। ऊपर जिन मामलोंका जिक्र हुआ है उनमें सुझाया हुआ परिवर्तन मेरी नम्र सम्मतिमें

अपेक्षा मजदूरीमें अधिक कमाईका अवसर है। इसलिए, स्वभावतः ही शिक्षक बहुत घटिया दरजेके हैं हालाँकि प्रस्तुत परिस्थितियोंमें वे अपना पूरा प्रयत्न करते हैं। इन सब कारणोंसे व्यापारी, गुमाश्ते और दुकानदार आदि भी भारतीय अपने बालकोंको इन स्कूलोंमें भेजना नहीं चाहते। यहाँकी साधारण प्रारम्भिक लोकशालाओंमें फीस बहुत ज्यादा ली जाती है। फिर भी जो बच्चे उसे दे सकते हैं वे अबतक इन स्कूलोंमें पढ़ते रहे हैं — परन्तु वहाँ भरती होनेमें अनेक कठिनाइयाँ उठाकर। कुछ वर्ष हुए, यहाँ एक आन्दोलन शुरू किया गया था कि भारतीय बच्चोंको इन लोकशालाओंमें तबतक दाखिल न किया जाये जबतक वे अपने स्कूलोंमें दाखिल होनेके सब प्रयत्न न कर चुके हों और इस प्रकार इज्जतदार भारतीयोंपर भी गरीबसे गरीब भारतीयोंके ऊपर बताये हुए स्कूल थोपनेका प्रयत्न किया गया था। तबसे इज्जतदार भारतीयोंको अपने बच्चोंको सरकारी स्कूलोंमें दाखिल करानेकी कठिनाइयाँ बढ़ती जा रही हैं। अब कभी तो उनके मार्गमें कठिनाइयाँ स्कूलका मुख्याध्यापक खड़ी कर देता है और कभी सरकार। हालमें बहुत कम भारतीय बच्चे मुश्किलसे आधा दर्जन इन लोकशालाओंमें दाखिल हो पाये हैं — और वे भी भारी कठिनाइयोंका सामना करनेके बाद।

वर्तमान सरकारने लोकप्रिय जनमतके लिए अब एक बड़ा कदम उठाया है। उसने घोषणा की है कि *उसका मंशा इन स्कूलोंको भारतीय बच्चोंके लिए बिलकुल बन्द कर देनेका है।* जातीय भावनाका यह उभाड़ दुःखदायी तो अवश्य है परन्तु इसका एक मनोरंजक पहलू भी है। यदि किसी भारतीय पिताके छः बच्चे हैं और उनमें से पाँचका शिक्षण विशेष लोकशालाओंमें हो चुका है तो अब वह अपने अन्तिम बच्चेको वहाँ शिक्षण नहीं दिला सकता। यदि कोई पिता अपनी भारतीय राष्ट्रीयताका परित्याग करनेको तैयार हो जाये तो वह अपने बच्चेको इन विशेष लोकशालाओंमें भेज सकता है। यह सरकारकी बदकिस्मती है कि इस प्रकार वह पिता सरकारकी इस दलीलको छिन्न-भिन्न कर सकता है कि काले बच्चोंको दाखिल करनेसे कटुता और शोर-गुल उत्पन्न होता है। व्यभिचारसे उत्पन्न बच्चा दाखिल हो सकता है, यदि उसका पिता या माता यूरोपीय हो परन्तु शुद्ध रक्तका भारतीय दाखिल नहीं हो सकता। बहिष्कारके योग्य अकेला वही ठहराया गया है। परन्तु, मालूम होता है, सरकार अपनी अन्यायपूर्ण कार्रवाईसे आप ही चौंक उठी है। उसने अपने अन्तरात्माको बहलाने और उन भारतीय अर्जदारोंमें से कुछके दावोंको पूरा करनेके लिए, जो चाहते थे कि उनके बच्चोंको इन विशेष प्राथमिक लोकशालाओंमें दाखिल किया जाये एक स्कूल खोलकर उसका नाम भारतीय बालकोंका उच्च स्कूल रखना पसन्द किया है। माना जाता है कि यह स्कूल सब प्रकारसे उपर्युक्त स्कूलोंके बराबर है। इसमें तो सन्देह नहीं कि यह स्कूल ऊपर वर्णित टीनकी छतोंवाली कोठरियोंसे बहुत अच्छा है और इसके शिक्षक भी यूरोपीय हैं परन्तु इसे विशेष लोकशालाओंके बराबर किसी भी प्रकार नहीं माना जा सकता। इस स्कूलमें अबतक सब कक्षाओंका भी प्रबन्ध नहीं किया गया। बालिकाओंके शिक्षणकी तो इसमें बिल्कुल ही उपेक्षा कर दी गई है। इसे यदि समझौता-रूप मान लें तो भी अनेक आवश्यकताएँ ऐसी रह जायेंगी जो इससे पूरी नहीं होंगी। इसमें भारतीयोंके लिए सिलाई-कढ़ाई और गणितसे आगे कुछ सीखनेका कोई प्रबन्ध नहीं है। अबतक उपनिवेशके हाई-स्कूलोंमें दाखिला करानेके सब प्रयत्न विफल रहे हैं। सरकारने इस प्रकारकी अर्जियोंपर विचारतक करनेसे इनकार कर दिया है।

यदि लन्दन या कलकत्तेसे ही इस बीच कोई सहायता न कर दी गई तो भविष्य निश्चय ही बहुत भयावह है। जो माता-पिता अपने बच्चोंको भली भाँति शिक्षा देनेके लिए आत्मा मोर्स्टमार निछावर करनेको तैयार हैं परन्तु जो केवल सरकारी प्रतिबन्धोंके कारण

जैसा नहीं कर पा रहे उनके प्रति सहानुभूति न रखना असम्भव है। गौंडके नामक एक सज्जनकी कहानी इसी प्रकारकी है। वे भारतीय मिशन स्कूलके एक सम्मानित शिक्षक हैं। स्वयं उन्होंने बहुत ऊँची शिक्षा नहीं पाई, परन्तु अपनी सन्तानको वे यथाशक्ति अच्छीसे अच्छी शिक्षा दिलानेके लिए बहुत ही उत्सुक हैं। एकके अतिरिक्त उनके अन्य सब बच्चोंका शिक्षण सरकारी स्कूलोंमें हुआ है। उन्होंने अपने सबसे बड़े पुत्रको कलकत्ता भेजकर विश्वविद्यालयका शिक्षण दिलवाया और अब उसे डाक्टरी पढ़नेके लिए ग्लासगो भेजा है। उनका दूसरा पुत्र प्रथम भारतीय है जो इस उपनिवेशकी नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) की प्रतियोगितामें सफल हुआ है। वे सबसे छोटी पुत्रीको सरकारी प्राइमरी स्कूलमें नहीं भेज पा रहे और सब प्रयत्न करके भी अपने तृतीय पुत्रको डर्बन हाई स्कूलमें दाखिल नहीं करवा पाये। वह एक होनहार युवक है। यहाँ यह जिक्र भी कर देना अनुचित न होगा कि इस परिवारका रहन-सहन यूरोपीय ढंगका है। सब बालकोंको बचपनसे ही अंग्रेजी बोलनेका अभ्यास करवाया गया है और, स्वाभावत ही वे अंग्रेजी बहुत अच्छी तरह बोलते हैं। समझमें नहीं आता कि इस बच्चेके लिए ही दरवाजा क्यों बन्द कर दिया गया जब कि उनके अन्य सब बच्चोंको सरकारी स्कूलमें दाखिल कर लिया गया था। इस उदाहरणसे अन्य किसी भी बातकी अपेक्षा यह अधिक अच्छी तरह समझमें आ सकता है कि श्री गौंडकसे नीचे दरजेके भारतीयोंकी स्थिति कितनी कठिन होगी।

आजकल नेटाल-संसदकी जिसे श्री रोडसने[1] दक्षिण आफ्रिकाकी स्थानीय सभा बतलाया है बैठक हो रही है और अटर्नी-जनरल जो शिक्षा-मन्त्री भी हैं बार-बार प्रश्न करनेवाले सदस्योंको बतला रहे हैं कि हमारी सरकार पहली सरकार है जिसने कि सरकारी स्कूलोंके दरवाजे भारतीय बच्चोंके लिए बन्द कर दिये हैं। और ये सज्जन अपने अन्तरात्माकी पुकार पर चलनेवाले माने जाते हैं अन्यथा आदरणीय तो हैं ही। परन्तु यदि हम इनसे यह साधारण-सी भी अपील करते हैं कि कमसे कम न्यायकी इतनी बात तो कीजिए कि जिन माता-पिताओंको अबतक अपने बच्चोंको सरकारी स्कूलोंमें पढ़ाने दिया जाता रहा है उनके लिए तो उनके दरवाजे खुले रहने दीजिए, तो उसका उनपर कोई असर नहीं होता। और यह सब है केवल थोड़े-से तुच्छ मतोंके लिए — क्योंकि भारतीयोंके विरुद्ध इस तमाम अन्यायपूर्ण और अनुचित कार्रवाईकी जड़ यही है। मन्त्री लोग न्यायके मार्गपर नहीं चल रहे चलनेकी हिम्मत ही नहीं कर सकते क्योंकि उन्हें डर है कि अगर वैसा करें तो अगले चुनावोंमें कहीं उनकी अपनी स्थिति संकटापन्न न हो जाये। जब नेटालको उत्तरदायित्वपूर्ण शासन दिया गया था तब उसके लिए शोर मचानेवालोंने बड़े जोरसे दावा किया था कि जिन लोगोंको मताधिकार प्राप्त नहीं है उनके साथ पूरा न्याय किया जायेगा। परन्तु जब यह उपनिवेश स्वशासित उपनिवेश बन गया तब इसकी नवीन सरकारके प्रथम प्रधानमन्त्री सर जॉन रॉबिन्सनने भारतीयोंको मताधिकारसे वंचित करनेका विधेयक पेश करते हुए कहा था कि उपनिवेशके लोग — उनकी दृष्टिमें केवल यूरोपीय लोग — भली भाँति जानते हैं कि अब वे पहलेसे अधिक जिस स्वतन्त्रताका उपभोग कर रहे हैं उसके साथ स्वभावत अधिक जिम्मेदारी भी उनके सिर आ गयी है और भारतीयोंको प्राप्त मताधिकारसे वंचित करनेके कारण उनकी जिम्मेदारी और भी अधिक बढ़ गई है। तब अनायास भारतीयोंने मानो यह भविष्यवाणी-सी ही कर दी थी कि इस प्रकारकी बातें केवल ब्रिटिश सरकारको भुलानेके लिए कही गई हैं और नेटालमें उनसे कोई भ्रममें नहीं पड़ा। उन्होंने कहा था कि यह मताधिकारका अपहरण तो अँगुली पकड़कर पहुँचा पकड़नेके प्रयत्न जैसा है और यदि ब्रिटिश सरकार नेटाल-सरकारके दबावमें आ गई तो यहाँके

१ ये स्वर्गीय सेसिल रोड्स हैं, जो दो बार केप उपनिवेशके प्रधानमन्त्री रहे थे।

भारतीयोंका सर्वनाश होकर रहेगा। अब यह सब बिलकुल सच निकल चुका है। जबसे उत्तरदायित्वपूर्ण शासन दिया गया है तबसे बेचारे भारतीयोंको चैन नहीं मिल रहा। उनके ब्रिटिश नागरिकत्वके प्राथमिक अधिकार एक-एक करके उनसे छीन लिये गये हैं और यदि श्री चेम्बरलेन और लॉर्ड कर्जन बहुत ही सजग न रहे तो शीघ्र ही एक दिन ऐसा आ जायेगा जब कि नेटालके ब्रिटिश भारतीय देखेंगे कि उन्हें सम्राज्ञीकी प्रजाकी हैसियतसे जो अधिकार अपने समझनेका अभ्यास करवाया गया है वे सब उनसे छिन चुके हैं।

ईसाई बने हुए भारतीयोंमें जिनकी संख्या बहुत बड़ी है नेटाल-सरकारकी शिक्षा-सम्बन्धी नयी कार्रवाईसे उत्पन्न हुआ असन्तोष बहुत तीव्र है। और सबकी अपेक्षा वे पश्चिमी सभ्यताके आचारोंको अधिक समझते हैं उन्हें वैसा करना सिखाया भी गया है। उन्होंने अपने धार्मिक पुरुषोंसे समताकी समानताका सिद्धान्त भी सीखा है। प्रति रविवारको उन्हें बतलाया जाता है कि उनका प्रभु ईसा यहूदियों और गैरयहूदियों यूरोपीयों और एशियाइयोंमें कोई भेद नहीं करता था। इसलिए शिक्षाके क्षेत्रमें उनपर जो निर्योग्यताएँ लादी जा रही हैं उन्हें वे इतना अधिक महसूस करें तो क्या आश्चर्य है! यह बतलाना कठिन है कि इस भारतीय-विरोधी आन्दोलनका अन्त कहाँ जाकर होगा। नीचे नेटालकी संसदके कुछ प्रसिद्ध सदस्योंके भाषणोंमें से जो वाक्य उद्धृत किये जा रहे हैं उनसे शायद गैर-उपनिवेशवासियोंको इच्छाओंका प्रकाशन भली भाँति हो जाता है:

> श्री बायरने भारतीयोंकी शिक्षाके लिए स्वीकृत की गई धन-राशिमें इतनी अधिक वृद्धि करनेको अवांछनीय बतलाया और कहा कि, इस तरह तो उन्हें गोरे उपनिवेशवासियोंके बच्चोंकी जगहें हड़पनेके लिए तैयार किया जा रहा है।

श्री पेनने प्रस्ताव किया कि इस राशिको बजटमें से निकाल दिया जाये। उन्होंने कहा कि जो भारतीय यहाँ आ गये हैं उन्हें उपनिवेशसे चले जानेका अधिकार है।

> नेटालमें एक गोरेके पीछे तेरह काले (?) हैं और फिर भी संसद कालोंको शिक्षित करनेके लिए धन-राशि स्वीकृत कर रही है जिससे कि काले लोग यूरोपीयोंको यहाँसे निकाल सकें। कुछ लोग तो इससे भी बुरा कर रहे हैं — वे कालोंके हाथ जमीन बेच रहे हैं जो भविष्यमें यहाँ कालोंके बच्चोंकी नौकरी काम देगी। — *नेटाल मर्क्युरी* ८ जून १८९९।

न्याय किस पक्षमें है यह समझने के लिए बहुत समयकी जरूरत नहीं है। सर हैरी एच० जॉन्स्टनका नाम तो आपके पाठक जानते ही हैं। उन्होंने अपनी हालकी पुस्तक *कॉलोनाइजेशन ऑफ् आफ्रिका* (आफ्रिकामें उपनिवेशोंकी स्थापना) में लिखा है:

> इसके विपरीत साम्राज्यकी दृष्टिसे — जिसे मैं काले गोरे और पीलेकी नीति कहता हूँ उससे — यह अन्यायपूर्ण लगता है कि सम्राज्ञीके भारतीय प्रजाजनोंको उतनी ही स्वतन्त्रतासे घूमने-फिरने न दिया जाये जितनीसे यूरोपीयोंकी सन्तान होनेका दावा करने वाले उनके भिखमंगोंको घूमने-फिरने दिया जाता है।

और अन्ततोगत्वा क्या विचार करने योग्य एकमात्र साम्राज्यका दृष्टिकोण ही नहीं है और क्या इसके सामने अन्य सब विचारोंको दबना नहीं पड़ेगा? आशा है कि भारतकी जनता इस प्रश्नके महत्त्वको भली भाँति समझेगी और इसपर ध्यान देगी क्योंकि व्यापक दृष्टिसे देखा जाये तो इसका प्रभाव केवल नेटालके ५ भारतीयोंपर ही नहीं १ करोड़ भार

तीयोंमें से ऐसे प्रत्येक व्यक्तिपर पड़ता है, जो आजीविकाकी खोजमें भारतसे बाहर जाना चाहता हो।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया (साप्ताहिक संस्करण) १९-८-१८९९।

४६ पत्र उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
जुलाई ११, १८९९

श्रीमन्,

मैंने इसी महीनेकी ६ तारीखको विक्रेता-परवाना अधिनियमके विषयमें जो पत्र लिखा था उसमें एक भूल रह गई थी। उसे मैं ठीक कर देना चाहता हूँ।

जिस प्रकारकी कठिनाइयाँ होनेकी मैंने अपने पत्रमें चर्चा की है उस प्रकारकी कठिनाइयोंका पोर्ट शेप्स्टोनमें केवल एक मामला हुआ है। दूसरा मामला परवाना-अधिकारीतक पहुँचा ही नहीं क्योंकि जिस वकीलको ये दोनों मामले सौंपे गये थे उसने पहले मामलेके दुर्भाग्यपूर्ण परिणामके कारण अपने दूसरे मुवक्किलको आगे न बढ़नेकी सलाह दे दी। अब दूसरी अर्जी भी पेश करनेकी तैयारी की जा रही है।

आपका आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स मेमोरियल्स ऐंड पिटिशन्स १८९९।

४७ पत्र ब्रिटिश एजेंटको

जोहानिसबर्ग
जुलाई २१, १८९९[1]

सेवामें
माननीय ब्रिटिश एजेंट
प्रिटोरिया

श्रीमन्,

जोहानिसबर्गके भारतीय समाजकी ओरसे मैं श्रीमान्‌के सामने नीचे लिखी बातें पेश करना चाहता हूँ

१. बृहस्पतिवार (२० जुलाई १८९९) को आपने हमारे शिष्टमण्डलको भेंट देनेकी कृपा की थी। शिष्टमण्डलके सदस्य थे हाजी हबीब हाजी दादा, श्री एच० औ० अली, श्री अब्दुर्रहमान और मैं। भेंटमें आपने हमको बतलाया था कि सम्राज्ञीकी सरकार

[1] यह पत्र जुलाई २०, १८९९ के बाद बना हुआ और भेजा गया था।

इस समय इस सारे मामलेमें अर्थात् ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी *समग्र हैसियतके* प्रश्नमें *हस्तक्षेप करना पसन्द नहीं करेगी।* इसलिए भारतीयोंको १८८६ में संशोधित १८८५ के कानून ३ का पालन करना ही चाहिए। परन्तु सम्राज्ञीकी सरकार बस्तियोंके स्थान और लम्बी मियादके पट्टों आदि जैसे विशेष मामलोंमें किसी भी समय हस्तक्षेप करनेके लिए तैयार रहेगी।

२ मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि क्योंकि सम्राज्ञीकी सरकारने उक्त कानूनको स्वीकृत कर लिया है, इसलिए भारतीय लोगोंकी इच्छा भी यह नहीं है कि जबतक वह इस गणराज्यके कानूनमें सम्मिलित रहे तबतक वे उसका पालन न करें।

३ परन्तु, मैं आपको उचित सम्मानपूर्वक बतलाना चाहता हूँ — जैसा कि मैंने गत गृह-सचिवालयकी भेंटमें भी बतलाया था — कि क्योंकि कानूनके उल्लेखानुसार, इन बस्तियोंका निर्देश सफाईके उद्देश्यसे किया जानेवाला है, इसलिए यह स्पष्ट रूपसे *सिद्ध कर दिया जाना चाहिए कि इस आधारपर ऐसा करना जरूरी हो गया है।* और यदि ऐसा करते हुए यह प्रश्न उठे कि प्रत्येक भारतीयको भी यह सिद्ध करना चाहिए कि वह सफाईके सब नियमोंका पालन करता रहा है और सफाईकी दृष्टिसे नगरमें उसकी उपस्थितिके कारण लोगोंको किसी प्रकारका खतरा नहीं है, तो भी बात बहुत सीधी लगती है। यदि सम्राज्ञीकी सरकार इस बातको मनवानेमें सफल हो जाये कि ट्रान्सवाल-सरकार उन भारतीयोंको नहीं हटायेगी जो अपनी सफाई-सम्बन्धी स्थितिके सन्तोषजनक होनेके प्रमाण पेश कर देंगे तो मेरा निवेदन है कि शेष सारी बातका बोझ सम्भवतः हम अपने सिर उठा लेंगे और उसके लिए सम्राज्ञीकी सरकारको कष्ट नहीं देंगे।

४ मालूम होता है, इस समय भारतीय बस्तियोंको छोड़कर जोहानिसबर्ग और उसके उपनगरोंमें १२५ ब्रिटिश भारतीय दुकानदार और कोई ४   फेरीवाले रहते हैं। अन्दाजा यह है कि इन दुकानदारोंकी जायदादकी सम्पत्ति सब मिलाकर कोई १,७५   पौंडकी और फेरीवालोंकी कोई ४   पौंडकी होगी।

५ १ या ४ को छोड़कर प्रायः सब दुकानदारोंके पास पट्टे हैं। परन्तु उनमें से किसीने भी सरकारकी इस विज्ञप्तिका लाभ नहीं उठाया कि वे सब अपने पट्टोंको दफ्तर-दर्ज (रजिस्ट्री) करा लें।

६ लोग पहले तो थे ही, अब भी *भयभीत अवस्थामें* हैं। वे नहीं जानते कि क्या करें और क्या न करें। अखबारोंमें इस आशयका तार छपा है कि सम्राज्ञीकी सरकार और ट्रान्सवाल-सरकारमें बातचीत अब भी चल रही है और सम्राज्ञीके उच्चायुक्तको हिदायत दी गयी है कि वे ब्लूमफ़ोंटीन सम्मेलनमें इस मामलेको उठायें। इसके कारण भी दुकानदारोंने अपने पट्टोंको दफ्तर-दर्ज नहीं कराया।

७ जोहानिसबर्गके निवासी भारतीय चाहें तो भी क्लिपस्प्रूटकी बस्तीमें नहीं जा सकते।

८ जोहानिसबर्गके वतनी लोगों और यातायातके इन्स्पेक्टरकी १ जनवरी १८९९ की रिपोर्टके अनुसार, क्लिपस्प्रूटमें १ ×५ फुटकी खिड़कीवाली कच्ची दुकानें हैं। इन्स्पेक्टरने लिखा है कि उस समय भी बस्तीमें बड़ी भीड़ थी उसकी आबादी ११   थी। और अब तो इस दृष्टिसे बस्तीकी अवस्था शायद १८९८ से भी अधिक खराब होगी।

१ उच्चायुक्तको निर्देश दिया गया था कि वे दक्षिण आफ्रिकी सरकारकी अनेक बातोंमें परिवर्तन करानेकी सम्भावनाका सुझाव दें। पाद-टिप्पणी १ पृष्ठ ९८ भी देखिए।

९. पता चला है कि दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यकी सरकार नगरके भारतीयोंको वाटर फाल नामक स्थानपर हटाना चाहती है। यह स्थान जोहानिसबर्गके केन्द्र जोहानिसबर्गमें मार्केट-स्क्वेयरसे ४½ मील दूर है। वहाँकी पैमाइशी नक्शा और वहाँके विषयमें डाक्टरी रिपोर्ट इस प्रार्थनापत्रके साथ संलग्न हैं।[1] नक्शेमें नगरके बाजार मार्गके किनारेसे भी उसकी दूरी दिखलाई गई है।

१० निवेदन है कि भारतीयोंको वहाँ चले जानेके लिए कहनेका मतलब उन्हें ट्रान्सवाल ही छोड़कर चले जानेके लिए कहना होगा। दुकानदार वहाँ जाकर कुछ भी व्यापार नहीं कर सकेंगे। फेरीवालोंसे भी यह आशा नहीं की जा सकती कि वे अपना माल उठाकर रोज वहाँसे आया-जाया करें।

११ वहाँ स्वास्थ्य और सफाईका, पानीका और पुलिसकी रक्षाका तो कोई प्रबन्ध है ही नहीं वह है भी उस स्थानकी बगलमें जहाँ कि नगरका कूड़ा और मल-मूत्र फेंका जाता है। परन्तु ये सब बातें भी इस तथ्यकी तुलनामें गौण लगने लगती हैं कि यह स्थान नगरसे तो ४½ मील है अन्य कोई बस्ती भी इसके चारों ओर दो मीलतक नहीं है।

१२ जान पड़ता है, सरकारने इस स्थानके सम्बन्धमें जोहानिसबर्गके हर्मन टोबियास्कीके साथ कोई इकरार कर लिया है। इसका पता इस प्रार्थनापत्रके साथ संलग्न[2] उस इकरारनामेकी एक प्रतिसे चलता है।

१३ जो लोग पट्टेपर ली हुई इस जमीनपर बसेंगे उनकी दृष्टिसे यह इकरारनामा अति हानिकारक शर्तोंसे भरा हुआ है। परन्तु यहाँ उनकी विस्तारसे चर्चा करनेकी आवश्यकता नहीं क्योंकि यह स्थान ही उक्त प्रयोजनके लिए स्पष्टतया अनुपयुक्त है।

१४ प्रतीत होता है कि काफिर जातिके लोगोंने भी इस स्थानपर हटाये जानेका प्रतिवाद किया है यद्यपि वे अधिकतर मजदूर हैं और उनपर व्यापारिक दृष्टिसे इस परिवर्तनका प्रभाव नहीं पड़ता।

१५ यह निवेदन बार-बार किया जा चुका है कि ये बस्तियाँ कहीं भी हों भारतीय दुकानदारोंको इनमें हटानेसे उनका सर्वनाश प्रायः निश्चित है।

१६ इसलिए सादर निवेदन है कि यदि सम्राज्ञीकी सरकार इस प्रार्थनापत्रके अनुच्छेद १ में नम्रतापूर्वक सुझाई गई दिशामें कदम उठानेको तैयार न हो तो कमसे-कम वर्तमान दुकानदारोंको तो अछूता छोड़ ही दिया जाये इससे कममें सर्वनाशसे उनकी रक्षा नहीं हो सकती। यदि सर्वथा आवश्यक ही हो तो फेरीवालोंको उपयुक्त स्थानपर बनाई हुई और अन्य प्रकारकी आपत्तियोंसे मुक्त किसी बस्तीमें हटाया जा सकता है। आवश्यकता हो तो दुकानदारोंके लिए सफाईके विशेष नियम बनाये जा सकते हैं।

१७ परन्तु यदि ऊपर निर्दिष्ट प्रकारकी सहायता प्राप्त न की जा सके तो मेरा नम्र निवेदन यह है कि भारतीय दुकानदारोंके व्यापार करनेके लिए, शहरके ही व्यापारिक भागमें कोई स्थान पृथक नियत कर दिया जाये और वहाँ किराये आदिके जो नियम आवश्यक समझे जायें वे लागू कर दिये जायें। इससे शायद बहुत-से व्यापारी अपनी आजीविका कमा सकेंगे। परन्तु कुछ-एक बड़े भारतीय व्यापारियोंको तो इससे भी कोई सहायता नहीं मिलेगी।

१. ये उपलब्ध नहीं हैं।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

१८. जबतक यह मामला तय हो तबतक भारतीय व्यापारियोंको तुरन्त और अस्थायी सहायता देनेके प्रयोजनसे यह बहुत आवश्यक है कि या तो समयकी मियाद बढ़ा दी जाये जिससे कि वे अस्थायी परवाने बनवा सकें या उन्हें ऐसा आश्वासन दे दिया जाये कि इस बीच उनके व्यापारमें हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा।

१९. यहाँ मैं यह भी जिक्र दूँ कि ट्रान्सवाल-सरकारने इस प्रकारकी सहायता जोहानिसबर्गमें दी है, जैसा ऐसा पड़ता है। मैं यह भी बतला दूँ कि गणराज्यकी सरकारने कुली बस्ती में कच्ची दूकानोंके मालिकोंको निम्न नोटिस दिया है इसपर २१ मई १८९९ की तारीख पड़ी है

> आपको, २६ अप्रैल १८९९ के स्टाट्सकूरँटमें प्रकाशित सरकारी सूचना २८के अनुसार, चेतावनी दी जाती है कि इस वर्षकी तारीख १ जूनके पश्चात् केवल आपको और आपके परिवारको आपकी कच्ची दूकानमें रहने दिया जायेगा।
>
> (ह०) ए स्मिवर्स

२ मालूम होता है, इस सूचनाके विरुद्ध एक प्रार्थनापत्र ब्रिटिश ब्राइस-कौंसलकी सेवामें पहले ही भेजा जा चुका है। सूचनाका प्रयोजन स्पष्ट है। निवेदन है कि १८८५ के कानून ३ और उसके संशोधनमें इस प्रकारकी पाबन्दी लगानेका कोई अधिकार सरकारको नहीं दिया गया।

२१ आशा है कि ट्रान्सवाल-सरकारको ऐसा कोई अधिकार नहीं है और यह भारतीय बस्तीकी वर्तमान आबादीके अधिकारोंमें गड़बड़ी करनेकी हठ नहीं करेगी।

२२ परन्तु यदि नगरकी सारी अथवा थोड़ी आबादीको किसी बस्तीमें हटाना ही हो तो यह स्पष्ट है कि बस्तीके लिए एक और जमीनकी आवश्यकता पड़ेगी।

२३ नगर-परिषद्ने ट्रान्सवाल-सरकारकी अनुमतिसे बस्तियोंके सम्बन्धमें कुछ नियम बनाये हैं जो १८८५ के कानून ३ और उसके संशोधनकी सीमासे बहुत बाहर निकल गये हैं। उन नियमोंकी एक प्रति इसके साथ संलग्न है और उसपर 'ब'[1] अंकित है।

२४ बहुत डर है कि ट्रान्सवाल-सरकार नगर-निवासी भारतीयोंको हटानेके लिए जो नये स्थान और चुनेगी उनपर भी इन नियमोंको लागू कर देगी। इसके साथ संलग्न परिशिष्ट 'म'[1] से यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है।

२५ इसलिए, फेरीवाले या अन्य भारतीयोंकी हटानेकी कोई भी योजना सन्तोषजनक तभी हो सकती है जब कि उसके अनुसार भारतीयोंको बस्तीमें भी स्वामित्वके वही अधिकार दिये जायें जो साधारणतया नगरमें इतर लोगोंको दिये जाते हैं।

२६ ऊपर निर्दिष्ट कानूनमें भारतीयोंके लिए बस्तियोंमें भूमिका स्वामी बनने अथवा उसका वे जो और जैसे चाहें वैसे व्यवहार करनेका निषेध नहीं किया गया। फेरीवालोंमें तो यह आशा की ही नहीं जा सकती कि वे बस्तियोंमें जमीन खरीदेंगे और उसपर अपने मकान बनायेंगे। सादर निवेदन है कि यदि भारतीय बस्तियोंमें भूमिके स्वामित्व और उसपर मकान बनानेके अधिकार भारतीयोंके सिवा किन्हीं दूसरे लोगोंको दिये गये तो यह भारी अन्याय होगा।

१ और २. ये उपलब्ध नहीं हैं।

२७. अन्तमें आशा है कि बस्तियोंकी या आम बसावटकी कोई भी योजना स्वीकृत करनेसे पहले जिम्मेवार भारतीयोंको बताया दी जायेगी जिससे कि वे आवश्यक हो तो अपने सुझाव दे सकें।

२८. अब जब कि भारतीयोंको आम तौरसे बस्तियोंमें हटाये जानेकी सम्भावना है ही तब क्या हमारा यह आशा करना बहुत ज्यादा होगा कि उनका सरकारी नाम कुली बस्ती बदलकर भारतीय बस्ती कर दिया जाये?

२९. मैं यहाँ यह बता दूँ कि मुझे शनिवारके प्रातःकाल निजी हैसियतसे — किसीके प्रतिनिधिकी हैसियतसे नहीं — राज्य-सचिव महोदयसे भेंट करनेका सम्मान प्राप्त हुआ था। मैंने उन्हें यह बतलाकर कि जिस प्रकार भारतीय लोग अपनी शिकायतें पहले अपनी ही सरकारसे करते रहे हैं उसी प्रकार उन्हें भविष्यमें भी करना पड़ेगा उनसे नम्रतापूर्वक प्रार्थना की थी कि भारतीयोंके साथ उदार व्यवहार किया जाये क्योंकि उनका पिछला जीवन उज्ज्वल रहा है वे जहाँ कहीं भी गये कानूनका अधिकसे अधिक पालन करते रहे, और इस देशके नागरिकोंको किसी प्रकारकी हानि पहुँचानेके बदले वे उनके नाना प्रकारके धन्धोंमें उनकी नम्रतापूर्वक किन्तु उपयोगी सेवा कर रहे हैं। राज्य-सचिवने मेरे साथ शिष्टतम व्यवहार करने और मेरी बात बहुत समय लगाकर धैर्यपूर्वक सुननेकी कृपा की थी।

आपका आज्ञाकारी सेवक
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३२४५) से।

१. जुलाई २४, १८९९ के *स्टैंडर्ड ऐंड डिगर्स न्यूज़*में छपे एक विवरणके अनुसार यह भेंट शायद पिछले शनिवार, जुलाई १५, १८९९ को हुई थी।

४८. 'स्टार'के प्रतिनिधिको भेंट

[जुलाई २७, १८९९ से पूर्व]

'स्टार'के प्रतिनिधिके पूछनेपर श्री गांधीने कहा कि प्रिटोरियामें राज्यके न्यायवादीने भारतीयोंको तबतक बगैर परवानेके व्यापार करनेकी इजाजत दी है जबतक कि पानीके नल न लगा दिये जायें। अब चूँकि यह काम पूरा हो गया है अधिकारियोंका यह आग्रह होगा कि एशियाई अब बस्तियोंमें रहनेके लिए चले जायें। जोहानिसबर्गके अधिकारी अभी कोई सक्रिय कदम नहीं उठाना चाहते। वाटरवालकी बस्ती हर दृष्टिसे पूर्णतया अनुपयुक्त है। फेरीवाले रोज सुबह-शाम इतनी दूर चलकर आयें-जायें यह हो ही नहीं सकता। और व्यापारियोंके बारेमें पूछिए तो उन्हें तो अपना कारोबार एक जगहसे दूसरी जगह हटानेके लिए कहना मानो अपना रोजगार ही पूरी तरह बन्द करनेको कहना है। क्योंकि कुछ अन्य रंगदार जातियोंको छोड़ दें तो आस पास दो-दो मीलतक कोई बस्ती ही नहीं है। फिर, शहरका कूड़ा-करकट जहाँ डाला जाता है उसके बिलकुल पास यह जगह है। और अभीतक वहाँ सफाईका कोई प्रबन्ध नहीं किया गया है। भारतीय यह सिद्ध करनेको तैयार हैं कि सफाईकी दृष्टिसे उन्हें वहाँसे हटानेके लिए सरकारके पास कोई कारण नहीं है। और अगर कहीं यहाँ-वहाँ गन्दगी दिखाई भी दे तो नियमानुसार उसका उपाय किया जा सकता है। अधिकारियोंने कोई अमली कार्रवाई नहीं की इसका मुख्य कारण बहुत करके तो यह है कि बहुतसे बाड़ों (स्टैंड्स) और इमारतोंके मालिक भारतीय हैं और इनसे ये जायदादें छीनी नहीं जा सकतीं। ट्रान्सवालकी सरकार और साम्राज्य-सरकार इस विषयमें किसी सन्तोषजनक व्यवस्थापर क्यों नहीं पहुँच सकतीं इसका कोई कारण भी गांधीकी समझमें नहीं आया।

[अंग्रेजीसे]

नेटाल मर्क्युरी १०-७-१८९९

४९. प्रार्थनापत्र : नेटालके गवर्नरको

डर्बन
जुलाई १८, १८९९

सेवामें
परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदय
नेटाल

श्रीमन्,

गत जनवरीमें हमने नेटालके विक्रेता-परवाना अधिनियमके सम्बन्धमें परम माननीय उप-निवेश-मन्त्रीके नाम लिखा हुआ एक प्रार्थनापत्र आपको भेजा था। निम्नलिखितसे प्रतीत होता है कि श्री चेम्बरलेन इस कानूनके सम्बन्धमें नेटाल सरकारसे पत्र-व्यवहार कर रहे हैं

१. इसमें दी गयी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

पीटरमैरित्सबर्ग
जून ११, १८९९

आपने पिछली ११ जनवरीको जो पत्र परमश्रेष्ठ गवर्नरको लिखा था और जिसके साथ १८९७ के व्यापारी परवाना अधिनियम १८ के विषयमें बहुत-से भारतीयों द्वारा हस्ताक्षरित एक प्रार्थनापत्र भी संलग्न था उसके विषयमें मुझे आपको यह बतलानेका सम्मान प्राप्त हुआ है कि प्रार्थियोंकी शिकायतके सम्बन्धमें उपनिवेश-मन्त्री इस सरकारके साथ पत्र-व्यवहार कर रहे हैं।

सरकार द्वारा लेडीस्मिथके स्थानिक निकायके नाम लिखे गये पत्रके विषयमें *नेटाल विटनेस* के जुलाई ४, १८९९ के अंकमें निम्नलिखित प्रकाशित हुआ है

> मुख्य उप-सचिवकी ओरसे आया हुआ एक पत्र पढ़ा गया जिसमें निकायको सलाह दी गई थी कि वह भारतीयोंको परवाने देनेसे इनकार करते हुए सावधानतासे काम ले जिससे कि जमे हुए कारोबारवालोंपर उसका असर न पड़े। यदि ऐसा न किया गया तो सरकारको ऐसा कानून बनाना पड़ेगा जिससे भारतीयोंको स्थानिक निकायके निर्णयोंके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार प्राप्त हो जाये। परन्तु यदि भारतीयोंको परवाने देनेसे इनकार करते हुए सावधानतासे काम किया गया तो इस प्रकारका कानून बनाना आवश्यक नहीं होगा।
>
> निश्चय किया गया कि सरकारको सूचना दे दी जाये कि इस विषयपर पूरा विचार किया जानेकी आवश्यकता है; और नगरके वकीलको हिदायत दी गई कि वह इस विषयको निकायके सामने पेश करे।

हम मानते हैं कि इसी प्रकारका पत्र उपनिवेशके प्रत्येक स्थानिक निकाय अथवा नगर परिषदको लिखा गया होगा।

यह देखकर हमें सन्तोष हुआ कि श्री चेम्बरलेन इस बातको समझते हैं कि यदि भारतीयोंको साम्राज्य-सरकारकी कल्याणी बाहुके संरक्षणमें न ले लिया गया तो उन्हें किस आपत्तिका सामना करना पड़ेगा और प्रतीत होता है कि नेटाल-सरकारको भी किसी न किसी प्रकार श्री चेम्बरलेनकी इच्छा पूरी करनेका ध्यान है। फिर भी उपर्युक्त पत्रका वास्तविक भाव भली भाँति समझ लेना बहुत ही वांछनीय है। और यह भी कि उपनिवेश-कार्यालय अथवा भारतीयोंके साथ सहानुभूति रखनेवाले अन्य लोग ऐसा समझकर चुप न बैठ जायें कि इस पत्रसे किसी तरह भी कठिनाई हल हो जाती है या नेटालके भारतीयोंको जो चिन्ता परेशान कर रही है वह दूर हो जाती है। नगर-परिषदों और स्थानिक निकायोंको अधिनियमके अन्तर्गत कतिपय अधिकार प्राप्त हैं। और उन्हें उन अधिकारोंका जैसे वे चाहें वैसे बे-रोक-टोक प्रयोग करनेकी स्वतन्त्रता है। ठीक-ठीक कहें तो यह पत्र ही अवैध है। अधिकसे अधिक इसे एक मुफ्तकी सलाहमात्र माना जा सकता है जिसे स्थानिक निकाय या नगर-परिषद माननेके लिए किसी भी प्रकार बाध्य नहीं है। यहाँतक कि इसका भी कुछ ठिकाना नहीं कि आगे बढ़ी हुई कुछ नगरपालिकाएँ इस पत्रको नेटाल सरकारकी अनधिकार-चेष्टा और अनुचित हस्तक्षेप बतला कर, इसपर नाराजगी जाहिर न करने लग जायें। परन्तु इन सबको जाने दीजिए। हम तर्कके लिए यह मान लेते हैं कि समस्त नगरपालिकाएँ कुछ समयतक अपने अधिकारोंका प्रयोग इस प्रकार

१. देखिए "पत्र : प्रार्थनापत्र भेजते हुए," पृष्ठ ५४।

करेंगी कि वे जमे हुए कारोबारोंको छेड़ती हुई न जान पड़ें। सम्भव है कि हमने अपने प्रार्थनापत्रमें टाइम्स ऑफ नेटाल द्वारा दिये हुए जिस इशारेका जिक्र किया था वे उसीपर अमल करने लगें और धीरे-धीरे उन्मूलन की कार्रवाई इस प्रकार करें कि उसके कारण कोई हलचल न मचे। इतना तो निश्चित है कि सरकारके पत्रसे कुछ राहत मिली भी तो वह केवल अस्थायी होगी और अन्तमें वह रोगकी निवृत्ति करनेके स्थानपर उसको बढ़ा ही देगी। आवश्यकता तो इस बातकी है, और हमारी नम्र सम्मतिमें कमसे-कम इतना तो किया ही जाना चाहिए, कि अधिनियममें सरकार द्वारा सुझाया हुआ परिवर्तन कर दिया जाये। अर्थात् नगरपालिकाओंके निर्णयोंके विरुद्ध उच्चतम न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार दे दिया जाये। क्योंकि सच तो यह है कि यह अधिनियम ही बुरा और अ-ब्रिटिश है। इसके द्वारा दिये गये अधिकार मनमाने और ब्रिटिश-शासित प्रदेशोंके नागरिकोंके प्राथमिक अधिकारोंमें भारी दखल देनेवाले हैं। जहाँतक हम जानते हैं नगरपालिकाओंने ये अधिकार कभी नहीं माँगे थे। हाँ उन्होंने यथामति कार्य करनेके अधिकार जरूर माँगे थे। परन्तु यह अधिनियम बहुत आगे बढ़ गया है। इसने तो उन्हें ही उनका उच्चतम न्यायालय बना दिया है।

हमने इस विषयमें आपसे पत्राचार करनेका साहस इस खयालसे किया है कि आपको बतला दें कि विक्रेता-परवाना अधिनियमके सम्बन्धमें क्या-कुछ हो रहा है और हमारे ऊपर निर्दिष्ट प्रार्थनापत्रमें जो भय प्रकट किये गये थे वे कितने सत्य सिद्ध हो चुके हैं। हमारी ओरसे नेटाल-सरकारको निम्न पत्र लिखे गये हैं और वे स्वयं स्पष्ट हैं

> आपके इस मासकी ११ तारीखके पत्रके सम्बन्धमें फिर निवेदन है कि साम्राज्य-सरकार और स्थानीय सरकारमें जो पत्र-व्यवहार चल रहा है उसे देखते हुए यह बतला देना अनुचित न होगा कि "विक्रेता-परवाना सम्बन्धी प्रार्थनापत्र" में जो भय प्रकट किया गया था वह कितना सत्य निकला है। मैं सब स्थानोंसे ठीक-ठीक जानकारी एकत्र नहीं कर पाया हूँ, परन्तु जो जानकारी मुझे अबतक मिली है वह अत्यन्त निराशाजनक है। डंडीमें पहले तो परवाने देनेसे इनकार कर दिया गया था, परन्तु अपील करनेपर वे एक शर्त जोड़कर दिये गये। शर्त परवानोंकी पीठपर लिख दी गई जो यह है: "यह परवाना साफ-साफ इस शर्तपर दिया जा रहा है कि इसे इसी इमारतके लिए फिरसे नया नहीं किया जायेगा। निकायकी आज्ञासे — (ह०) जॉर्ज जे० बर्ड परवाना-अधिकारी और नगरका क्लार्क।" पूछनेपर कई परवानेवालोंने जवाब दिया कि हमारा खयाल तो यह है कि हमारे परवानोंपर यह शर्त इस कारण लगाई गई है कि हमारी दूकानें लकड़ीके तख्तों और लोहेकी चादरोंकी इमारतोंमें थीं। मालूम हुआ है कि डंडीमें हूबले ऐंड सन्स और हार्वे ग्रीनेकर ऐंड कम्पनीकी दूकानोंका सामना तो ईंटोंका है शेष सारे भाग तख्तों और टीनके ही बने हुए हैं। चूंकि व्यापारी टेलर ऐंड फाउलरकी दूकान सारीकी सारी ही तख्तों और टीनकी बनी हुई है। न्यूकैसिलमें जिनको परवाना देनेसे पिछले वर्ष इनकार कर दिया गया था उन्हें इस वर्ष भी इनकार कर दिया गया है। नगर परिषदने दो अर्जदारोंको अपनी दूकानोंका माल बेचनेके लिए समय देनेकी कृपा की है परन्तु इससे इन दोनों व्यापारियोंको जो नुकसान हुआ उसकी पूर्ति थोड़े ही हो सकती है। इनमें से एक अच्छा खासा कारोबार चलाता था और वह तख्तों तथा टीनकी एक दूकानका मालिक था। परिषदको बता दिया गया था कि जिस दूकानका मूल्य इस समय उसके लिए १५ पौंड है, यह यदि बेचनी पड़ी तो उसका प्रायः कुछ भी मूल्य नहीं मिलेगा।

मुझे मालूम हुआ है कि केपटाउनमें दो अर्जदारोंके पास पिछले साल तो परवाने थे परन्तु इस साल उन्हें वे देनेसे इनकार कर दिया गया। फल यह हुआ कि वे दोनों और उनके नौकर, सबके सब अपेक्षाकृत कंगाल ही गये हैं।

केडीस्मिथमें एम. सी. आमला नामके एक व्यक्ति कई वर्षोंसे व्यापार कर रहे थे। इस वर्ष उनका परवाना यह कहकर रद कर दिया गया कि जिस जगह वे दूकान करते हैं वह नगरकी मुख्य गलीमें होनेके कारण केवल किसी यूरोपीय सौदागरके लायक है। उन्होंने एक और ऐसी इमारतमें दूकान खोलनेके परवानेकी अर्जी दी जो एक भारतीय दूकानके साथ लगी हुई थी और जिसका मालिक भी दूकानका मालिक ही था। परन्तु यह प्रार्थना भी वही कारण बतलाकर अस्वीकृत कर दी गई। यहाँ इतना बता देनेकी मुझे इजाजत दी जाये कि इसी गलीमें और भी कई भारतीय दूकानें हैं।

पोर्ट शेप्स्टोनमें दो बड़े भारतीय व्यापारियोंने हाल ही में अपना कारोबार दो अन्य भारतीयोंके हाथ बेचा था। उन दोनोंने परवानेकी अर्जी दी परन्तु परवाना-अधिकारीने उसे अस्वीकृत कर दिया। परवाना-निकायमें अपील करनेका भी कुछ बेहतर नतीजा नहीं निकला। अब वे सोच रहे हैं कि करें तो क्या करें।

यहाँ नम्र निवेदन है कि यह बात बड़ी गम्भीर है कि एक व्यक्ति तो केवल भारतीय होनेके कारण अपना कारोबार बेच नहीं सकता और दूसरा भारतीय होनेके कारण ही उसे खरीद नहीं सकता। क्योंकि इस प्रकारके मामलोंमें परवाना न देनेका अर्थ यह हो जाता है कि बेचना खरीदना भी बन्द हो जाये; और वह हो भी तो लुक-छिपकर हो।

एक अन्य भारतीय अपनी दूकान ऐंडी कोल कम्पनीको बेचकर और वहाँ अपना सारा कारोबार समेटकर डर्बनमें आ गया और यहाँ उसने अमगेनी रोडपर पहलेसे परवाना-प्राप्त एक दूकान खरीदकर उसमें स्वयं व्यापार करनेके लिए परवानेकी अर्जी दी। उसे परवाना-अधिकारीने परवाना दिया तो सही, परन्तु कई बार अर्जियाँ देने और भारी खर्च करके डर्बनका एक बड़ा वकील करनेके पश्चात्; और वह भी केवल थोड़े-से समयके लिए, जिससे कि प्रार्थीने परवाना मिल जानेकी आशामें जो माल खरीद लिया था उसे वह बेच सके।

ये कुछ मामले तो ऐसे हैं जिनमें कि जमे-जमाये कारोबारवालोंपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। परन्तु ऐसे उदाहरण अगणित हैं जिनमें कि बिलकुल भले और पूँजीवाले व्यक्तियोंको केवल भारतीय होनेके कारण परवाना देनेसे इनकार कर दिया गया; यह भी कहा गया कि उनके पास पिछले साल भी परवाना नहीं था।

भारतीयोंको यह देखकर संतोष हुआ है और वे इसके लिए कृतज्ञ भी हैं कि सरकार स्वयं चाहती है कि जिन भारतीयोंका कारोबार जम चुका है उनको कोई हानि न पहुँचे। और उसने शायद इसीलिए कई नगर-परिषदों और नगर-निकायोंको इस आशयके पत्र भी लिखे हैं कि यदि उन्होंने जमे-जमाये कारोबारवालोंको न छेड़नेका ध्यान न रखा तो शायद भारतीयोंको सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार देनेके लिए कानून बनाना पड़ जाये। परन्तु मैं बताना चाहता हूँ कि निकायोंके नाम इस प्रकारकी अपीलका कुछ असर हुआ भी तो वह शायद स्थायी नहीं होगा और

भारतीय व्यापारी पूर्ववत् भयंकर दुविधाकी अवस्थामें पड़े रहेंगे। ऊपर जिस पत्रका जिक्र हुआ है उसमें सुझाया हुआ परिवर्तन मेरी नम्र सम्मतिमें है तो व्यापका एक छोटा-सा कार्य परन्तु जिन भारतीय लोगोंका कारोबार उपनिवेशमें जम चुका है उनके लाभकी दृष्टिसे यह अत्यन्त अभीष्ट है।

निवेदन है कि इस पत्रकी बातोंको आप परम माननीय उपनिवेश-मंत्रीतक पहुँचा देनेकी कृपा करें।

दूसरा पत्र

मैंने इसी महीनेकी ६ तारीखको विक्रेता-परवाना अधिनियमके विषयमें जो पत्र लिखा था, उसमें एक भूल रह गई थी। उसे मैं ठीक कर देना चाहता हूँ।

जिस प्रकारकी कठिनाइयाँ होनेकी मैंने अपने पत्रमें चर्चा की है उस प्रकारकी कठिनाइयोंका पोर्ट शेप्स्टोनमें केवल एक मामला हुआ है। दूसरा मामला परवाना-अधिकारीतक पहुँचा ही नहीं क्योंकि जिस वकीलको ये दोनों मामले सौंपे गये थे उसने पहले मामलेके दुर्भाग्यपूर्ण परिणामके कारण अपने दूसरे मुवक्किलको आगे न बढ़नेकी सलाह दे दी। अब दूसरी अर्जी भी पेश करनेकी तैयारी की जा रही है।

पोर्ट शेप्स्टोनके विषयमें इतना और बतला देना आवश्यक है कि वहाँ परवाना देनेसे इनकार, नेटालकी विधान-सभामें उस जिलेके एक सदस्य द्वारा इस आशयका प्रश्न पूछा जानेके बाद तुरन्त ही किया गया था कि क्या इन जिलोंमें भारतीयोंको परवाने बिना सोचे-समझे दिये जा रहे हैं। सरकारने इसका जवाब यह दिया था कि इन जिलोंमें जिला मजिस्ट्रेट ही परवाना-अधिकारी भी हैं और उन्हें बतला दिया गया है कि आपको अपनी समझके अनुसार चलनेका अधिकार है। स्पष्ट है कि पोर्ट शेप्स्टोनके मजिस्ट्रेटने इशारा ले लिया और उसने परवाना देनेसे इनकार कर दिया। यह बात *नेटाल विटनेस* में मैरित्सबर्ग स्थानिक निकायके नाम उपर्युक्त सरकारी पत्र प्रकाशित होनेसे कुछ दिन पहलेकी है।

इस प्रसंगमें यह तो बतलानेकी आवश्यकता ही नहीं कि कठिनाइयोंके उदाहरण केवल वही नहीं हैं जो कि किसी न किसी प्रकार अधिकारियोंतक पहुँचा दिये जाते हैं। इस अधिनियमका निरोधक प्रभाव बहुत भयंकर हुआ है। इसके कारण बहुत-से गरीब व्यापारियोंने तो निराशाके मारे अपने परवाने फिर जारी करवानेकी अर्जियाँ ही नहीं दीं। और ऐसे व्यापारियोंकी संख्या इनसे भी अधिक है जिन्होंने परवाना-अधिकारी द्वारा अपना प्रार्थनापत्र अस्वीकृत कर दिया जानेपर, *नगरपालिका या परवाना-निकाय आदि अपील सुननेवाली किसी भी संस्थाके सामने* अपील नहीं की। पोर्ट शेप्स्टोनका दूसरा मामला इसी प्रकारका है।

इस अधिनियमके कारण भारतीय जितनी कठिनाइयोंका अनुभव कर रहे हैं उतनी वे अन्य किसी कानूनसे नहीं करते। कारण यह है कि इसका प्रभाव नीचेसे लेकर ऊपरतक सैकड़ों परिश्रमी और शान्त भारतीयोंकी दाल-रोटीपर पड़ रहा है। इसका कुछ निश्चय नहीं कि चूँकि इनमें से सबसे अच्छे व्यापारियोंको इस वर्ष परवाना मिल गया है इसलिए उन्हें अगले वर्ष भी मिल ही जायगा। व्यापारी इस अवस्थामें स्वभावतः कारोबार बन्द हो जाता है और हमारा मन बेचैन हो उठता है। अब तो आशा यही रह गई है कि इस सम्बन्धमें साम्राज्य-सरकार कुछ करेगी या करवायेगी।

इस विषयपर *टाइम्स ऑफ़ इंडिया*में निम्नलिखित अग्रलेख प्रकाशित हुए हैं। हम आपका ध्यान उनकी ओर दिलानेका साहस करते हैं :

हम ब्रिटिश आफ्रिकावासी भारतीयोंके अधिकारोंके प्रश्नकी चर्चा इतनी बार कर चुके हैं कि हमने बार-बार जो तर्क पेश किये हैं उन्हें इस अवसरपर फिर दोहराना अनावश्यक है। उपनिवेशियोंने उनकी सेवाओंका लाभ लकड़हारों और पनिहारोंके रूपमें तो प्रसन्नतासे उठा लिया, परन्तु वे उन्हें व्यापारमें स्वतन्त्र प्रतिस्पर्धा करनेके अधिकारसे वंचित रखनेका प्रयत्न निरन्तर करते चले आ रहे हैं। ब्रिटिश प्रजा होनेकी हैसियतसे उनका यह अधिकार ऐसा होना चाहिए, जो छीना न जा सके। वे स्वयं तो खुले बाजारमें भारतीय व्यापारियोंके मुकाबलेमें व्यापार करनेसे इनकार करते हैं परन्तु उन्हें परेशान करनेवाली नाना प्रकारकी पाबन्दियोंमें जकड़कर घृणितसे घृणित रूपमें संरक्षण प्राप्त करनेका प्रयत्न करते हैं। ब्रिटिश परम्परा सब जातियों और सब धर्मोंके साथ निष्पक्षताका व्यवहार करनेकी रही है। परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें उन्होंने उससे इतना विपरीत आचरण किया है कि कहाँ तो ब्रिटिश प्रजाजन ब्रिटिश छत्रछायामें उनके साथ रहकर समान अधिकारोंका उपभोग करनेकी आशा कर रहे थे और कहाँ उनके ही क्रूर अत्याचारोंसे बचनेके लिए उन्हें पुर्तगाली राज्यमें जाकर शरण लेनी पड़ रही है। यह सब देखकर हमें घोर तिरस्कार और अपमानका अनुभव होता है। जबतक स्वयं ब्रिटिश सरकार भारतीय व्यापारियोंकी रक्षा करनेका निश्चय नहीं करेगी तबतक दक्षिण आफ्रिकामें उन्हें जो अन्याय सहना पड़ रहा है उसका अन्त नहीं हो सकेगा। उन्हें उससे ऐसी आशा रखनेका अधिकार भी है। (अप्रैल १५, १८९९, साप्ताहिक संस्करण)

भारतमें रहनेवाले अंग्रेजोंके मनमें यह देखकर क्षोभ और क्रोधके भाव उत्पन्न हो जाते हैं कि भारतीय व्यापारियोंको ब्रिटिश झंडे-तलेके ही एक प्रदेशमें जाने और बसनेसे रोका जा रहा है। उसके कारण उनके साथी प्रजाजनोंको असन्दिग्ध रूपसे यह पूछनेका अवसर मिल जाता है कि हमें ब्रिटिश साम्राज्यका नागरिक होनेसे क्या लाभ? यह देखकर भारतीयोंको ऐसा सोचनेका प्रलोभन होता है कि ब्रिटिश झंडा निरा निरर्थक चिह्न है, क्योंकि उसके नीचे एक ब्रिटिश प्रजाजन दूसरेको दुःखी और बाध्य कर सकता है और दुःखी व्यक्ति उसके प्रतिकारका कोई उपाय नहीं कर सकता। यदि ब्रिटेनका लोकमत दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी इस शिकायतके विषयमें जाग्रत किया जा सके तो यह हमारा जो भारतमें अंग्रेजोंकी हिमायत करते हैं, एक भारी योगदान होगा। इस मामलेमें न्यायका पक्ष इतना स्पष्ट है कि अर्थमें भी उसपर कोई किसी प्रकारका विवाद नहीं कर सकता। परन्तु, इस प्रश्नका एक राजनीतिक और भावुक पहलू भी है। यदि एक बार इंग्लैंडके लोगोंका ध्यान इस ओर खींच दिया गया कि महारानीके हजारों ईमानदार और भले आचरणवाले प्रजाजनोंको साम्राज्यके एक भागसे हटकर दूसरेमें जानेपर नागरिकताके साधारणतम अधिकार देनेसे भी इनकार किया जा रहा है तो वहाँकी जन-भावना एकदम प्रभावित और जाग्रत हो जायेगी। ब्रिटेनकी लोक-सभामें क्या एक भी सदस्य ऐसा नहीं है, जो लज्जा और अन्यायकी यह कहानी सुनाकर पीड़ितोंके साथ हुए अन्यायका प्रतिकार करवानेकी कुछ आशा रखता हो? (अप्रैल २२, १८९९, साप्ताहिक संस्करण)

हमारा खयाल है कि इसमें हमें और कुछ भी जोड़नेकी आवश्यकता नहीं है। आशा है कि आप पहलेके समान अब भी हमारी ओरसे प्रयत्न करनेकी और वर्तमान दुःखदायी अवस्थाका शीघ्र अन्त करवानेकी कृपा करेंगे।

आपके आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल कादिर
(एम० सी० कमरुद्दीन ऐंड कं०)
तथा १ अन्य

एक मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन १२५२) से।

५० तार उपनिवेश-सचिवको

सितम्बर ९, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रीटोरिया

पत्र[1] मिला धन्यवाद। रोजाना निराशापूर्वक पूछताछ हो रही है। तुरन्त सहायता आवश्यक[2]। सुना है ब्रिटिश एजेंट भी सरकारके पास पहुँचे। सादर निवेदन सुझावके अनुसार भारतीयोंको आने देनेमें कोई हानि नहीं। लड़ाईके बाद प्रतिबन्ध ढीले किये जायें तो समय निकल चुकेगा। अच्छे अच्छे लोग देश त्याग रहे हैं, तब बटमार्गोंको भारतीय चुपचाप बैठे देख नहीं सकते। ब्रिटिश प्रजाजन आपत्तिसे बचनेके लिए ब्रिटिश भूमिमें न जा सकें इसका दुःख अवर्णनीय है।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन १२८८) से।

१ गांधीजीका वह पत्र, जिसका कि यह उत्तर था, उपलब्ध नहीं है।
२ युद्धकालमें केपसे भारतीयोंके मालको नियमित करनेवाले प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम के अनुसार करनेके निर्णयकी प्रार्थना की गई थी।
३ उस समय बोअर युद्ध छिड़ने ही वाला था।

५१ एक परिपत्र

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
सितम्बर १६, १८९९

श्रीमन्,

ट्रान्सवालवासी भारतीयोंकी ओरसे जो पत्र[1] प्रिटोरिया-स्थित माननीय ब्रिटिश एजेंटको भेजा गया है उसकी एक नकल मैं इसके साथ नत्थी कर रहा हूँ। तनातनी प्रति घण्टे बढ़ती जा रही है और जब यह पत्र आपके हाथोंमें पहुँचेगा तबतक क्या हो जायेगा यह कहना कठिन है। परन्तु यदि हमारी सरकार और ट्रान्सवालके बीच कोई समझौता हो तो उसमें भारतीय प्रश्नको किनारे न रख दिया जाये इसलिए ब्रिटिश भारतीयोंपर असर करनेवाली स्थितिसे आपको अवगत रखना उचित समझा गया है। साथकी नकलसे मालूम हो जायेगा कि ट्रान्सवाल सरकार जोहानिसबर्ग नगर-परिषदके विनियमोंकी स्वीकृति देनेमें किस तरह १८८५ के कानून ३ से भी आगे बढ़ गई है। ऐसे विनियम बनाने या भारतीयोंकी बस्तियोंमें जमीनके मालिक बननेसे रोकनेका कोई आधार है ही नहीं। तथापि मुख्य मुद्दा तो यह है, जो ब्रिटिश एजेंटको भेजे हुए पत्रके तीसरे अनुच्छेदमें बताया गया है अर्थात् भारतीयोंको बस्तियोंमें हटानेके लिए, कानूनके अनुसार, सफाई-सम्बन्धी कारणोंका अस्तित्व सिद्ध किया जाना जरूरी है। इस विषयमें हस्तक्षेपकी बहुत गुंजाइश है।

आपका आज्ञाकारी,
(ह०) मो० क० गांधी

गांधीजी द्वारा हस्ताक्षरित अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३२९५-ए) से।

१ देखिए "पत्र : ब्रिटिश एजेंटको" जुलाई २१, १८९९।

५२. नेटाल भारतीय कांग्रेसकी दूसरी कार्यवाही[1]

[अक्तूबर ११, १८९९ के बाद]

पहली कार्यवाही कांग्रेसकी स्थापनाके एक वर्ष बाद अगस्त १८९५[2] में प्रकाशित की गई थी। अनेक कारणोंसे इस बीच दूसरी कार्यवाही तैयार करना सम्भव नहीं हुआ।

आय-व्यय

इसके साथ नत्थी किये गये पर्चोंसे[3] सदस्य एक नजरमें जान सकेंगे कि तीन वर्षोंमें कितना खर्च हुआ है। इससे मालूम हो जायेगा कि मुख्य-मुख्य रकमें प्रदर्शन-संकट[4] के समय खर्च की गई थीं। अकेले प्रार्थनापत्र[5] पर ही लगभग १०० पौंड खर्च आ गया था। यदि इन वर्षोंमें १८९४-९५ की अपेक्षा औसतन अधिक व्यय हुआ है, तो आयमें भी बहुत वृद्धि हुई है। पहली कार्यवाहीके प्रकाशनका एक अच्छा और शायद सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम यह निकला कि कांग्रेसने तुरन्त निर्णय कर लिया कि सारे सालका चन्दा पेशगी अदा किया जाये और हर महीने चन्दा एकत्र करनेका झंझटभरा तरीका छोड़ दिया गया। फलतः १८९५-९६ का चन्दा एकदम वसूल हो गया और १८९६ में कुछ कार्यकर्ताओंने जो सरगर्मी दिखाई वह सचमुच आश्चर्यजनक थी। उन्होंने न केवल अपना समय दिया बल्कि उनमें जो समर्थ थे वे चन्दा एकत्र करनेके लिए इधर-उधर जानेको अपनी गाड़ियाँ भी साथमें ले आये। इस सम्बन्धमें स्टैंगरकी यात्रा सबसे अधिक स्मरणीय है। अध्यक्ष श्री अब्दुल करीम हाजी आदम, श्री अब्दुल कादिर, श्री दाऊद मुहम्मद, श्री रुस्तमजी, श्री हाशम जुम्मा, श्री मदनजीत, श्री पारसी, श्री हुसेन मीरन और श्री कमरुद्दीनने अवैतनिक मन्त्रीको साथ लेकर वेरुलम, टोंगाट, उमकाटी, स्टैंगर तथा परेके जिलेका दौरा किया। इन दौरोंके लिए अध्यक्ष श्री मुहम्मद दाऊद तथा श्री अब्दुल कादिरने अपनी गाड़ियाँ दीं। टोंगाटमें श्री कासिम मामको सदस्य बनानेके लिए ये सदस्य उनकी दूकानमें आधी रात तक धरना देकर बैठे रहे। उन्होंने यह परवाह भी नहीं की कि भोजन किया है या नहीं। मगर श्री कासिम अपने हठ पर अड़े रहे, इसलिए कार्यकर्ताओंको वापस जाना पड़ा। किन्तु उन्होंने ऐसा इसलिए किया कि वे अगली सुबह अपना काम दूनी शक्तिसे कर सकें। उनमें से एक सदस्य तो बहुत सवेरे उठकर, चायकी बूँद तक मुँहमें डाले बिना ही उनकी दूकानमें जा डटा। अन्य सदस्य भी बिना कुछ खाये वहाँ दोपहर तक बैठे रहे। उन्होंने दूकानको तभी छोड़ा जब कि श्री माम सदस्य बन गये और उन्होंने अपना चन्दा दे दिया। इसके बाद वे दूसरे स्टेशनको गये। रास्तेमें श्री हाशिम जुम्मा अपने घोड़ेसे गिर पड़े और कुछ समय तक बिलकुल बेहोश रहे।

१. यह [illegible] मसविदा है जिसमें गांधीजीके हाथसे किये गये संशोधन हैं। इसकी कोई अन्य प्रति उपलब्ध नहीं। यह कार्यवाही विभिन्न तारीखोंमें अलग-अलग अंशोंमें लिखी गई थी और अक्तूबर ११, १८९९ के बाद पूरी हुई। इसी तारीखको बोअर-युद्ध छिड़ा था जिसका उल्लेख पृष्ठ ११८ पर किया गया है।

२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ २१५-२४३।

३. यह उपलब्ध नहीं है।

४. अभिप्राय भारतीय-विरोधी उस प्रदर्शनसे है जो जनवरी १३, १८९७ को गांधीजी तथा अन्य भारतीय यात्रियोंके जहाजसे उतरते समय किया गया था। देखिए खण्ड २, पृष्ठ १८८-९५।

५. देखिए खण्ड २, पृष्ठ १० और आगे।

सड़क खराब थी और शाम हो गई थी इसलिए सुझाव दिया गया कि सभी वापस चले जायें। किन्तु श्री हाशम जुम्माने एक नहीं सुनी और यात्रा जारी रही। स्टैंगर पहुँचनेपर यह सारी मेहनत सफल हो गई। श्री मुहम्मद ईसपजी जिनका कि अब दुर्भाग्यवश देहावसान हो चुका है टोंगाटमें कार्यकर्ताओंका उत्साह देखकर स्वयं प्रोत्साहित हो उठे। यद्यपि वे अपने किसी महत्त्वपूर्ण कार्यके लिए डर्बन जा रहे थे तथापि वे स्टैंगर जानेके लिए कार्यकर्ताओंके साथ हो लिये। वहाँ उन्होंने सबकी खूब खातिरदारी की। उनके जरिये केवल स्टैंगरमें कांग्रेसके लिए ५ पौंडसे भी अधिककी रकम प्राप्त हुई।

हमारे पूर्वाध्यक्ष श्री अब्दुल करीम हाजी आदमके नेतृत्वमें सदस्योंकी उत्कृष्ट निष्ठाके ऐसे ही कई उदाहरण दिये जा सकते हैं। पहाड़ी प्रदेशसे — जहाँ आजतक कोई सड़क नहीं बनी हुई थी — गुजरकर न्यूहैनोवरकी यात्रा बिना मार्गदर्शकके रातको खेतोंसे होते हुए बटरी प्लेस जाना इसिपिंगोकी यात्रा श्री ईसपजी उमरकी दूकानकी यात्रा जहाँ कि सदस्य ५ बजे शामसे लेकर ११ बजेतक भोजन किये बिना ही बैठे रहे — इन सबपर अलग-अलग एक अध्याय लिखा जा सकता है। किन्तु यहाँ इतना कहना पर्याप्त है कि उस समय कार्यकर्ताओंने अपने उद्देश्यके प्रति जो उत्साह, लगन तथा अनन्यभाव दिखाया उसकी बराबरी शायद ही कभी हुई हो। फिर भी दुर्भाग्यवश अब यही बात हमारे लिए नहीं कही जा सकती। वह प्रबल जोश-खरोश अब मालूम पड़ता है, ठंडा पड़ गया है। ऐसी स्थितिके बहुत-से कारण हैं। उनमें से कुछ ऐसे हैं जिनपर सदस्योंका कोई वश नहीं चल सकता। किन्तु यह लिखते दुःख होता है कि सदस्य जितना कर सकते थे उतना उन्होंने नहीं किया और दो वर्ष पूर्व हमें जो यह दृढ़ आशा थी कि हम इस समय तक ५, पौंडकी एक निधि एकत्र कर लेंगे वह निःसन्देह तो एक स्वप्न-मात्र होकर रह गई है। कांग्रेसपर १ पौंड लगभग ४ पौंड देनदारी है। और यह कहना मुश्किल है कि यह रकम कैसे प्राप्त की जायेगी। मैरित्सबर्ग चार्ल्सटाउन न्यूकैसिल वेरुलम टोंगाट स्टैंगर और अन्य स्थानोंसे चन्दा वसूल नहीं हुआ और उसकी वसूलीके लिए अभीतक कुछ किया भी नहीं गया। एक समय था जब कि सदस्योंकी कुल संख्या १ तक पहुँच गई थी लेकिन ठीक-ठीक कहें तो वह अब केवल ३७ है। मतलब यह कि केवल ३७ सदस्य ऐसे हैं जिन्होंने आजतकका चन्दा अदा किया है। अब समय आ गया है जब कि सदस्योंको अपनी दीर्घ निद्रासे जाग जाना चाहिए, नहीं तो समय हाथसे निकल सकता है।

अक्टूबर १८९५ में कांग्रेसका कार्य

अक्टूबर १८९५ में ट्रान्सवालकी संसद (फोक्सराट) ने एक प्रस्ताव पास कर ब्रिटिश प्रजाजनोंको अनिवार्य सैनिक-सेवासे मुक्त कर दिया। साथ ही यह शर्त भी लगा दी कि "ब्रिटिश प्रजाजनों" में भारतीय शामिल नहीं हैं। यद्यपि ठीक-ठीक कहें तो दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके अपने नागरिकोंके मामलोंमें सक्रिय हस्तक्षेप करना हमारा काम नहीं था फिर भी उनकी सहमतिसे कांग्रेसने इस प्रश्नको हाथमें लिया। एक तारका मसविदा तैयार करके ट्रान्सवालसे अपने लंदन वाली हमदर्दियोंको भेजा गया। समय आने पर एक प्रार्थनापत्र[3] भी भेज दिया गया। जहाँतक मालूम हुआ है इसके फलस्वरूप ब्रिटिश सरकारने अभीतक इस आपत्तिजनक प्रस्तावको मंजूर नहीं किया है।

१ देखिए खण्ड १ पृष्ठ २५८।
२. देखिए खण्ड १ पृष्ठ २५८।
३ देखिए खण्ड १, पृष्ठ २५८–२९ ।

इसी महीने हमारा परिचय ब्रिटिश संसदके एक अनुदार दलीय सदस्य श्री अर्नेस्ट हैचसे हुआ। वे दक्षिण आफ्रिकाका भ्रमण कर रहे थे। जोहानिसबर्गके कुछ लोगोंने उन्हें भारतीय बस्तियोंमें ले जाकर वहाँका सबसे गन्दा मुहल्ला दिखाया। इसपर अखबारोंने लिखा कि श्री हैचने जो कुछ देखा उससे उन्हें बहुत घृणा हुई और वे भारतीयोंके प्रश्नका अध्ययन करने वाले हैं। जोहानिसबर्गसे वे डर्बन आये। कांग्रेसके कुछ सदस्योंने यह वाजिब समझा कि उनसे मिलकर इस प्रश्नपर भारतीयोंका दृष्टिकोण उनके सामने रखा जाये। करीब ५ भारतीय प्रतिनिधियोंका एक शिष्टमण्डल उनसे मिला। जो-कुछ उनसे कहा गया उसका उन्होंने अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण उत्तर दिया और वादा किया कि इंग्लैण्डमें उनसे जो-कुछ हो सकेगा वे करेंगे। उनकी रायमें हम नरमीके साथ अपना कार्य कर रहे थे इसलिए उन्होंने उसका अनुमोदन किया। श्री हैचको कुछ अनोखी भारतीय वस्तुएँ भेंट की गईं।

मताधिकारका प्रश्न अभी खत्म हुआ ही नहीं था और १८९५के उत्तर भागमें अखबारोंने इसपर खूब चर्चा की। उस समय मालूम पड़ता था हर व्यक्ति समझता है कि भारतीय किसी ऐसे नये विशेषाधिकारका दावा करनेकी कोशिश कर रहे हैं जिससे अबतक उन्हें वंचित रखा गया था कि वे चाहते हैं प्रत्येक भारतीयको मत देनेका अधिकार मिले जबकि भारतमें उन्हें वैसा करनेका कभी भी कोई अधिकार नहीं मिला कि यदि दक्षिण आफ्रिकाके वतनियोंको यह अधिकार नहीं मिल सकता तो किसी भारतीयको कैसे मिल सकता है? इन सब गलत बयानियोंका जवाब देना और गलतफहमियोंको दूर करना बिलकुल जरूरी हो गया है। *भारतीयोंका मताधिकार : दक्षिण आफ्रिकाके प्रत्येक अंग्रेजके नाम अपील*के नामसे एक पुस्तिका तैयार की गई। उसकी सात हजार प्रतियाँ छापी गईं। उनमें से एक हजार प्रतियोंकी कीमत श्री अब्दुल करीम हाजीने दी और उन्हें दूर-दूरतक वितरित किया गया। कुछ इंग्लैंडमें भी बाँटी गईं। बहुत-से दक्षिण आफ्रिकी अखबारोंने इस पुस्तिका पर लिखा जिससे उनमें कुछ तो सहानुभूतिपूर्ण कुछ कटुतापूर्ण तथा कुछ अत्यन्त उपेक्षापूर्ण पत्र प्रकाशित हुए। लंदन टाइम्सने इसपर एक विशेष लेख प्रकाशित किया और उसमें लेखकने पुस्तिकाके सभी सुझाव स्वीकार कर लिए। यह दिसम्बर १८९५ की बात है।

१८९६ के आरम्भमें कांग्रेसने जो प्रश्न उपनिवेश-मन्त्रीके सामने रखे थे उनमें से ज्यादा तर अबतक अनिर्णीत ही थे इसलिए यह आवश्यक समझा गया कि सारी स्थितिका एक सिंहा-वलोकन अपने भारत तथा लंदनके मित्रोंके सामने पेश किया जाये। एक सामान्य पत्र[1] तैयार किया गया और नेटालके प्रतिनिधि भारतीयोंके हस्ताक्षरोंसे उसे उनके पास भेज दिया गया। लगभग उसी समय जूलूलैंडमें बसाये गये नये नगर नोंदवेनी-सम्बन्धी विनियम प्रकाशित हुए थे[2]। उनमें व्यवस्था की गई थी कि उस नगरमें भारतीय मकानके लिए जमीन न तो खरीद सकते हैं और न रख सकते हैं। जैसे ही ये विनियम सरकारी गजटमें प्रकाशित हुए इस भेदभावके खिलाफ विरोध प्रकट करते हुए एक प्रार्थनापत्र तैयार करके परमश्रेष्ठ गवर्नरको भेजा गया। नेटाल मर्क्युरीने हमारे दावेको न्यायानुकूल माना। फिर भी परमश्रेष्ठ इस पाबन्दीको नहीं हटा सके।

१ देखिए खण्ड १, पृष्ठ २९ ।
२. यह उपलब्ध नहीं है।
३ देखिए खण्ड १, पृष्ठ २९९ ।
४ देखिए खण्ड १, पृष्ठ २९९-३०१ ।

इसपर एक प्रार्थनापत्र[1] श्री चेम्बरलेनको भेजा गया। प्रार्थनापत्रके पहुँचनेपर सर मंचरजी भावनगरीने लोकसभामें इसपर एक प्रश्न उठाया। लंदन टाइम्सने इस मामलेपर क्रमशः दो कालमोंका लेख छापा। राष्ट्रीय कांग्रेसकी समिति[2]ने भी इस मामलेको उठा लिया। प्रसंगवश यहाँ यह भी ध्यानमें रहे कि उक्त विनियमोंके प्रकाशित होनेपर यह तथ्य भी प्रकाशमें आया कि पहले बसाये गये मेलमौथ तथा एशोवे नामक नगरोंके सम्बन्धमें भी इसी प्रकारके विनियम पास किये जा चुके थे। उपर्युक्त प्रार्थनापत्रमें इन दोनों बस्तियोंको भी शामिल कर लिया गया था। अब यह पाबन्दी हटा ली गई है। यदि श्री आदमजी मियाखाँ चौकन्ने न रहते तो यह मामला कांग्रेसकी नजरसे चूक जाता क्योंकि उन्हें ही सबसे पहले इस मामलेका पता चला और उन्होंने कांग्रेसके अवैतनिक मन्त्रीका ध्यान इस ओर खींचा था।

मई १८९६ के आसपास बहुत-सी जायदादोंका निरीक्षण तथा काफी सलाह-मशविरा करनेके बाद कांग्रेसने १ ८ पौंडमें मिस्त्री नामक एक स्वतन्त्र भारतीय महिलाके नाम रजिस्टर की गई एक जायदाद खरीद ली। इस जायदादमें ईंटका एक मकान था और एक दूकान थी। सर्वसम्मतिसे यह निश्चय किया गया कि यह जायदाद उन ७ व्यक्तियोंके नाम रजिस्टर कराई जाये जो कांग्रेसके न्यासियों (ट्रस्टियों) के रूपमें कांग्रेसकी ओरसे चेकोंपर हस्ताक्षर करनेका अधिकार रखते थे। इस जायदादसे करीब १ पौंड प्रतिमास किराया आता है, कर चुकानेके लिए इसकी कीमत २   पौंड आँकी गई है और इस वर्ष नियमको इसका वार्षिक कर पौंड –१७–६ दिया गया है। इन इमारतोंका गार्डियन फायर एश्युरेन्स सोसाइटीमें ८   पौंडका बीमा कराया गया है। किरायेदारोंमें से अधिकतर तमिल लोग हैं। उन्हें एक मुसाफिरखानेकी सख्त जरूरत थी। इसलिए स्वयंसेवकोंने उसका एक अस्थायी ढाँचा तैयार करके दे दिया। श्री अमद जीवाने उसके लिए मुफ्त ईंटें दीं। हिसाब लगानेसे मालूम होता है कि इससे कांग्रेसको ८ पौंडसे ज्यादाकी बचत हुई है। इस प्रकार जब अप्रैल १८९६ में कांग्रेसकी आर्थिक अवस्था अच्छी जान पड़ी और उसे श्री मूसा हाजी आदमके घरसे हटाना आवश्यक हो गया तब यह महसूस किया गया कि अब तो कांग्रेस बखूबी एक कदम और आगे बढ़कर कोई अच्छा मकान ले सकती है। तदनुसार यह बड़ा हाल जिसमें कि अब उसका दफ्तर है ५ पौंड मासिक किरायेपर लिया गया। पहले जो किराया दिया जाता था उससे यह ३ पौंड अधिक है।

नेटालकी संसदके १८९६ के पहले अधिवेशनके समय ज्ञात हुआ कि श्री चेम्बरलेनने नेटालके मन्त्रियोंको यह सलाह देनेका निश्चय किया है कि वे उपनिवेशकी कानूनी पुस्तकसे उस अधिनियमको निकाल दें जिसके द्वारा खास तौरसे एशियाई वंशोंके लोगोंको मतदाता सूचीमें शामिल होनेसे रोकनेकी व्यवस्था की गई है और उसके बदले एक सामान्य अधिनियम पास कर लें। इसपर एक ऐसा विधेयक पेश किया गया जिससे वह कानून रद होता है और ऐसे देशोंके लोगों और उनके वंशजोंको संसदीय चुनावोंमें मतदाता बननेके अयोग्य ठहराया जाता है, जिनमें संसदीय मताधिकारपर आधारित चुनावमूलक प्रातिनिधिक संस्थाएँ न हों। कांग्रेसने अनुभव किया कि यद्यपि यह विधेयक भारतीयोंपर लागू नहीं होता[3] तथापि यह केवल उन्हें ही मताधिकारसे वंचित करनेके उद्देश्यसे पास किया जा रहा है। इसलिए यह आवश्यक है कि इसका विरोध किया जाये। फलतः एक प्रार्थनापत्र तैयार किया गया। उसमें प्रमुख व्यक्तियोंके विचार दिये गये थे कि भारतमें प्रातिनिधिक संस्थाओंका अस्तित्व है। यह

१ देखिए खण्ड १, पृष्ठ २१०–२१४।

२ यह निर्देश भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश कमिटीकी ओर है।

३ इसमें स्पष्ट तौरपर भारतीयोंका उल्लेख नहीं किया गया था।

प्रार्थनापत्र विधानसभाको दिया गया था[1]। इससे विधानसभाके कुछ सदस्योंने विधेयकका इतना अधिक विरोध किया कि एक समय तो ऐसा लगने लगा था कि विधेयक नामंजूर हो हो जायेगा। तब सर जान रॉबिन्सनने श्री चेम्बरलेनको एक तार भेजकर उनसे संस्थाओंके पूर्ण संसदीय मताधिकारपर आधारित[2], यह वाक्यखंड जोड़नेकी अनुमति प्राप्त कर ली। इस परिवर्तनसे विरोधी-पक्ष बहुत कमजोर पड़ गया और विधानपरिषदमें हमारे प्रार्थनापत्रके पेश होनेपर भी[3] दोनों सदनोंने इस विधेयकको पास कर दिया। इस वादविवादके समय श्री लॉटनने नेटाल ऐडवर्टाइजरको एक पत्र लिखकर अपना मत प्रकट किया कि उक्त परिवर्तनके बावजूद विधेयक जहाँतक भारतीयोंका सम्बन्ध है, बेकार ही रहेगा। विधेयक गवर्नरको अधिकार देता है कि वह इसके अन्तर्गत आनेवालोंको *विशेष छूट देना चाहे तो दे सकता है। इस विधेयकका विरोध* करते हुए एक प्रार्थनापत्र उपनिवेशमन्त्रीको भेजा गया किन्तु इसपर शाही स्वीकृतिकी मुहर लग चुकी है और अब यह देशका कानून बन गया है। इसके लिए हमें पूरा अधिकार है कि हम किसी भी समय परीक्षात्मक मुकदमा दायर कर यह जान सकें कि जिन उपायोंकी संस्थाएँ विधेयकमें बताई गई हैं वैसी भारतमें हैं या नहीं। साथ ही हम विशेष छूटके लिए गवर्नरसे प्रार्थना भी कर सकेंगे। अभीतक इन दोनोंमें से किसीकी भी आवश्यकता नहीं पड़ी। हम सदैवसे प्रतिवाद करते आ रहे हैं कि हम राजनीतिक सत्ता नहीं चाहते बल्कि उस अपमानपर क्षोभ अनुभव करते हैं जो कि पहले विधेयकमें भरा हुआ था। स्पष्ट है कि सम्राज्ञीकी सरकारने हमारी इस आपत्तिको मान लिया है।

मार्च १८९५ में श्री अब्दुल कादिरके घर पुत्र-जन्मका उल्लेख एक विशेष अनुच्छेदके लायक है। जन्म-समारोह कांग्रेसके सभाभवनमें मनाया गया। उसमें ५ से भी अधिक लोग जमा हुए थे। सभाभवनमें खूब रोशनी भी की गई थी। श्री अब्दुल कादिरने कांग्रेसको ७ पौंड दान दिये। इसका अनुसरण और लोगोंने भी किया। उस अवसरपर जो दान दिया गया उसकी रकम ५८ पौंड तक पहुँच गई।

श्री अब्दुल्ला हाजी आदमकी अध्यक्षताके कालमें इस आशयका प्रस्ताव पास किया गया था कि जो सदस्य कांग्रेसके लिए २५ पौंड या इससे अधिक रकम जमा करे, उसे चाँदीका पदक भेंट किया जाये। पदकोंकी प्रथा शुरू करनेपर बहुत-से सदस्योंने अप्रैल १८९५ से पहले ही अपनेको इस सम्मानका अधिकारी बना लिया था। इस सम्बन्धमें श्री दाउद मुहम्मद सबसे आगे थे। और सबकी इच्छा थी कि उनके कार्यके सम्बन्धमें यह प्रस्ताव अमलमें लाया जाये। फलतः एक विशेष बैठक बुलाई गई और एक मानपत्रके साथ उन्हें चाँदीका पदक भेंट किया गया। पदकमें उपयुक्त शब्द खुदे हुए थे।

इस समयतक बरेल कारणोंसे अवैतनिक मन्त्रीका कुछ समयके लिए भारत जाना जरूरी हो गया। *कांग्रेसने निर्णय किया कि वे अपनी* भारत-यात्राका लाभ उठाकर दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंको भारतीय जनताके सामने रखें। फलतः उन्हें प्रतिनिधि नियुक्त किये जानेका एक पत्र[4] दिया गया और साथमें ७५ पौंडकी एक हुंडी भी दी गई, ताकि वे इसका

१. देखिए खण्ड १, पृष्ठ ११९–१२८।
२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ १३३।
३. प्रार्थनापत्र विधानपरिषदको पेश किया गया था। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ११९–२८।
४. देखिए खण्ड १, पृष्ठ ११२–१४।
५. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ५८–५९।

उपयोग अपनी यात्रा तथा उक्त कार्यसे सम्बन्धित छपाई और अन्य लेन-खर्चमें कर सकें। कांग्रेसने उन्हें एक मानपत्र[1] तथा एक स्वर्ण-पदक प्रदान किया। कांग्रेसके तमिल सदस्योंने एक विशेष बैठक बुलाई और उन्हें एक और मानपत्र भेंट किया। अवैतनिक मन्त्रीने सभी मानपत्रोंका उत्तर देते हुए कहा कि ये भेंटें समयसे पूर्व ही दे दी गई हैं। अभीतक काम समाप्त नहीं हुआ। फिर भी उन्होंने मानपत्रों तथा भेंटोंको प्रेमकी निशानीके रूपमें स्वीकार किया और कहा कि यदि वे भावनाएँ जो लोगोंने व्यक्त की हैं सच्ची हैं तो मेरे वापस आनेके पहले सदस्य ऐसा काम करें कि कांग्रेसके कोषमें बची हुई १९४ पौंडकी रकम चन्दा तथा दानसे बढ़कर ११९४ पौंडकी बन जाये — उसमें १, पौंड और जुड़ जायें। दक्षिण आफ्रिकी अखबारोंमें इन भेंटोंकी विस्तारसे चर्चा हुई, और सर्वथा अमित्र भावनासे नहीं। जून ५, १८९६ को अवैतनिक मन्त्रीने *पोंगोला* जहाजसे भारतकी यात्रा आरम्भ की।

उनकी अनुपस्थितिमें आदमजी मियाखाँको कार्यवाहक अवैतनिक मन्त्री नियुक्त किया गया। भारत पहुँचनेके तुरन्त बाद ही अवैतनिक मन्त्रीने *दक्षिण आफ्रिकावासी ब्रिटिश भारतीयोंकी कष्ट-गाथा भारतीय जनतासे अपील*[2] नामक एक पुस्तिका प्रकाशित की। उसकी चार हजार प्रतियाँ छापी गईं जिन्हें दूर-दूरतक वितरित किया गया। *टाइम्स ऑफ़ इंडिया*ने उसपर सबसे पहले विचार व्यक्त किये और एक सहानुभूतिपूर्ण अग्रलेखमें सार्वजनिक जाँचकी माँग की। भारतके प्रायः सभी प्रमुख पत्रोंने इस प्रश्नको उठाया। *पायोनियर*ने शिकायतोंको स्वीकार तो किया लेकिन कहा कि प्रश्न बहुत ही उलझा हुआ है, स्वशासित उपनिवेशोंको किसी खास नीतिपर चलनेका आदेश नहीं दिया जा सकता और वर्तमान परिस्थितियोंमें दक्षिण आफ्रिका एक ऐसा देश है जिससे उच्च वर्गके भारतीयोंको दूर ही रहना चाहिए। केवल *रायटर*के शिमला संवाददाताने पुस्तिकाका सारांश तथा पुस्तिकापर *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* और *पायोनियर*के विचार तार द्वारा भेजे। पुस्तिका प्रकाशित होनेके बाद अवैतनिक मन्त्री बम्बईके प्रमुख व्यक्तियोंसे मिले। उन दिनों कांग्रेसके पूर्व अध्यक्ष श्री अब्दुल्ला हाजी भी बम्बईमें थे। वे भी इन मुलाकातोंमें उनके साथ जाते थे।

माननीय श्री फीरोजशाह मेहताके सुझाव पर २६ सितम्बरको फ्रामजी कावसजी इंस्टिट्यूटके सभाभवनमें एक सार्वजनिक सभा[3] की गई। श्री मेहताने अध्यक्षता की। सभाभवन खचाखच भरा हुआ था। अवैतनिक मन्त्रीके अपना भाषण पढ़ चुकनेके बाद दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके प्रति सहानुभूति प्रकट करनेके लिए सर्वसम्मतिसे एक प्रस्ताव पास किया गया और अध्यक्षको अधिकार दिया गया कि वे इस सम्बन्धमें एक प्रार्थनापत्र तैयार करके सम्राज्ञीके मुख्य भारत मन्त्रीको भेजें। माननीय श्री जवेरीलाल याज्ञिक, माननीय श्री सयानी और *टाइम्स*के सम्पादक श्री बैम्फर्ड प्रस्तावपर बोले। बैठककी पूरी कार्यवाही दैनिक पत्रोंमें प्रकाशित हुई और प्रेसीडेन्सी असोसिएशनने कार्यवाहीका सारांश तार द्वारा लंदन भेजा।

इसके बाद अवैतनिक मन्त्री मद्रास गये और वहाँके प्रमुख व्यक्तियोंसे मिले। मद्रास महाजन सभाके तत्वावधानमें पच्चैयप्पा-भवनमें एक सार्वजनिक सभा करनेके लिए एक परिपत्र तैयार किया गया। उस परिपत्रपर मद्रासके विभिन्न सम्प्रदायोंके लगभग ४ प्रतिनिधि सदस्योंने हस्ताक्षर

१ देखिए खण्ड २, पृष्ठ १५०—१९९ — "भारतमें प्रतिनिधित्व वास्तविक परीक्षा विधान"।
२. देखिए खण्ड २, पृष्ठ १८९-९ ।
३ देखिए खण्ड २, पृष्ठ १—७० ।
४ देखिए खण्ड १, पृष्ठ १९५ ।
५. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ७५—९ ।

किये। राजा सर रामस्वामी मुदलियार सर्वप्रथम हस्ताक्षर करनेवाले थे। माननीय श्री आनन्दाचारलूने सभाकी अध्यक्षता की। सभाभवन खचाखच भरा हुआ था। भाषणके पढ़े जानेके बाद सर्वसम्मतिसे वैसे ही प्रस्ताव पास किये गये जैसे कि बम्बईमें पास हुए थे। एक विशेष प्रस्ताव भी मंजूर किया गया जिसमें सुझाव था कि गिरमिटिया मजदूरोंको नेटाल भेजना बन्द कर दिया जाये। श्री ऐडम्स श्री परमेश्वरम् पिल्लै तथा श्री पार्थसारथी नायडूने प्रस्तावपर भाषण दिये। सभी प्रमुख दैनिक पत्रोंने पूरी कार्यवाही प्रकाशित की। सभा समाप्त होनेपर उक्त पुस्तिकाके लिए ऐसी छीना-झपटी हुई कि सभी उपलब्ध प्रतियाँ समाप्त हो गईं और जनताकी माँग पूरी करनेके लिए मद्रासमें २ प्रतियाँ और छपाई गईं। लंदन टाइम्सके शिमला-संवाददाताका तार उस पत्रमें प्रकाशित होनेके बाद नेटालके एजेंट-जनरल सर (उस समय भी) वाल्टर पीससे भेंट की गई और उन्होंने जवाबमें बताया कि शिकायत कोई है ही नहीं और उन्होंने बहुत-सी अन्य बातें भी कहीं। मद्रासमें दिये गये भाषणकी विशेषता यह थी कि उसमें सर वाल्टर पीसको विस्तारके साथ उत्तर दिया गया था। पुस्तिकाके दूसरे संस्करणमें यह उत्तर परिशिष्टके रूपमें छापा गया था।

पखवारे भर मद्रासमें ठहरनेके बाद अवैतनिक मन्त्री कलकत्ता चले गये। वहाँ उन्होंने लोकमतके नेताओंसे भेंट की। *इंग्लिशमैन* *इंडियन मिरर*, *स्टेट्समैन* तथा अन्य अंग्रेजी तथा भारतीय भाषाओंके पत्रोंने सहानुभूतिपूर्ण टीका-टिप्पणियाँ लिखीं। ब्रिटिश भारत संघ (ब्रिटिश इंडिया असोसिएशन)की समितिने अवैतनिक मन्त्रीका भाषण सुननेके लिए एक बैठक की और निर्णय किया कि भारतमन्त्रीको भेजनेके लिए एक स्मरणपत्र मंजूर किया जाये। सार्वजनिक सभा करनेकी तैयारी हो ही रही थी कि नेटालसे एक तार प्राप्त हुआ जिसमें अवैतनिक मन्त्रीको तुरन्त वापस बुलाया गया था। इसलिए सभाका विचार छोड़ देना पड़ा और वे कलकत्तेसे बम्बईको रवाना हो गये। तथापि पूनामें वहाँकी सार्वजनिक सभाके तत्त्वावधानमें एक सभा की गई। प्रोफेसर भाण्डारकर उसके अध्यक्ष थे। सभाने वैसे ही प्रस्ताव पास किये जैसे कि मद्रासमें हुए थे। उनपर प्रो. गोखले माननीय श्री तिलक तथा [1] ने भाषण किये।

अवैतनिक मन्त्री २७ नवम्बर, १८९६[2] को कूरलैंड जहाज द्वारा भारतसे रवाना हुए। टाइम्सके शिमला संवाददाताके उपर्युक्त तारका सारांश रायटरने दक्षिण आफ्रिकी पत्रोंको भेज दिया था। इस सारांशने भारतमें प्रकाशित पुस्तिकाके बारेमें ऐसी भावना पैदा की जिसका समर्थन पुस्तिकाके पढ़नेसे नहीं हो सकता। फिर भी उसने यूरोपीय उपनिवेशियोंको नाराज कर दिया। समाचारपत्रोंने उग्र लेख प्रकाशित किये। इससे संगठित रूपमें एशियाई-विरोधी आन्दोलनका जन्म हुआ और देशभक्त उपनिवेशी संघ (कलोनियल पैट्रियाटिक यूनियन) की स्थापना हुई। ऐसा मालूम पड़ता है कि ज्योंकि प्रकाशित होते ही उक्त पुस्तिकाकी प्रतियाँ जो यहाँ भेज दी गई थीं पत्रोंको दी गईं। तब उन्होंने स्थितिको यथार्थ दृष्टिसे देखा और स्वीकार किया कि पुस्तिकाके विरुद्ध जिस उग्र भाषाका उपयोग किया गया उसे उचित सिद्ध करनेके लिए उसमें कुछ भी नहीं था। फिर भी आन्दोलन जारी रहा। संघने बढ़ा-चढ़ाकर ऐसे वक्तव्य दिये जो जनताके दिमागको भड़का सकते थे। इसी बीच कूरलैंड यहाँ पहुँचा। उससे कुछ घण्टे पहले नादरी यहाँ पहुँच चुका था। वह भी भारतीय मुसाफिरोंको लेकर आया था। २१ दिनका लम्बा सूतक (क्वारंटीन) मर्दर्न-नमिनिका संगठन भारतीयोंको उतरनेसे रोकनेके लिए अनियमित लोगोंका जुलूस बनाकर जहाजघाट तक जाना मुसाफिरोंका तटपर उतरना अवैतनिक

१. दूसरा वक्ता [illegible] राव थे।

२. जहाज वास्तवमें नवम्बर ३० को छूटा था; देखिए खण्ड २, पृष्ठ १०६।

मस्जीपर भीड़का आक्रमण भारतीय पुलिस सिपाहीके वेशमें उनका बाल-बाल बच निकलना पुलिस सुपरिंटेंडेंट अलेक्जैंडर तथा उनके दल द्वारा दी गई प्रशंसनीय सहायता पत्रोंकी भाषामें सहसा परिवर्तन प्रदर्शन-समितिकी कार्रवाईपर दिया गया उनका कठोर निर्णय भारतीय समाजका पुलिस द्वारा की गई सेवाओंको मान्यता देना संकटके पूरे इतिहासपर प्रकाश डालते हुए प्रसंगके सम्बन्धमें श्री चेम्बरलेनको पष्ठ'का प्रार्थनापत्र भेजना — ये सभी घटनाएँ आपसी सबसे कि मनमें ताजी हैं। इस संकटकालमें भारतीय चरित्रकी दो विशेषताएँ प्रमुख रूपसे प्रकट हुई। दो अभागे जहाजोंके पीड़ितोंकी सहायताके लिए पृथक-कोषकी स्थापना एक ऐसा कार्य था जिसमें भारतीय उदारताका अत्यन्त हितकर रूप प्रकट हुआ तथा अतिशय सन्तापके समयमें भी उनके शान्त व्यवहार और मौन समर्पणने उन लोगोंसे भी प्रशंसा प्राप्त की जिनसे हमारे लोगोंके गुणोंकी ओर ध्यान देनेकी कमसे-कम सम्भावना मानी जाती थी।

इसके बाद संसदका जो अधिवेशन हुआ उसमें सरकारने प्रदर्शन-समितिको दिये गये अपने वादेके अनुसार चार एशियाई-विरोधी विधेयक — अर्थात् सूतक प्रवासी-प्रतिबन्धक विक्रेता-परवाना और गैरगिरमिटिया भारतीय-संरक्षण विधेयक — पेश किये। इनके विरुद्ध दोनों सदनोंको प्रार्थनापत्र[1] भेजे गये किन्तु सब व्यर्थ। विधेयक स्वीकार हो गये। इसलिए एक प्रार्थनापत्र उपनिवेश-मन्त्री[2]को भेजा गया। उसका जो उत्तर मिला वह सर्वथा सन्तोषजनक नहीं है। फिर भी श्री चेम्बरलेनने हमारे साथ सहानुभूति व्यक्त की है और उन्होंने भारतीय संरक्षण अधिनियम सम्बन्धी हमारी प्रार्थना स्वीकार कर ली है। इस कानूनके बारेमें सरसरी तौरपर कहा जा सकता है कि इससे एशियाई प्रश्नका एक हिस्सा तय हो चुका है और मालूम पड़ता है कि कुछ हदतक यह हमारे पक्षमें ही हुआ है। जबसे हमारी संस्थाकी स्थापना हुई है हम रंग भेदके कानूनोंके — भारतीयोंपर विशेष निर्योग्यताएँ लादनेवाले कानूनोंके — खिलाफ लड़ते आये हैं। वह सिद्धान्त स्पष्ट रूपसे स्वीकार कर लिया गया है। अलबत्ता इसका मतलब यह नहीं कि हमें आगे कुछ नहीं करना है या जो हल हुआ है वह सन्तोषजनक है। उल्टे हमें अब और भी अधिक धैर्यतापूर्ण विरोधसे लोहा लेना है क्योंकि वह अप्रत्यक्ष है। यद्यपि उक्त कानून नाम-मात्रके लिए सबपर लागू होता है तथापि व्यवहारमें उसका प्रयोग केवल भारतीयोंके विरुद्ध किया जाता है। इसलिए हमें न केवल कानूनको रद करवाने या बदलवानेकी दिशामें प्रयत्न करना है, बल्कि यह चौकसी भी रखनी है कि विभिन्न अधिनियम कैसे अमलमें आते हैं। जहाँतक सम्भव है, हमें अधिकारियोंको इसके लिए भी तैयार करना है कि वे इन अधिनियमोंके अमलको अनुचित रूपसे कठोर एवं कष्टदायक न बनायें। इसके लिए हमें केवल निरन्तर प्रयत्न मगर सावधानता परस्पर अटूट एकता विशाल परिमाणमें आत्म त्याग तथा राष्ट्रको ऊँचा उठानेवाले अन्य सब गुणोंकी आवश्यकता है। और तब अवश्य ही विजय हमारी होगी क्योंकि सभी जानते हैं कि हमारा उद्देश्य न्यायपूर्ण है हमारे तरीके नरम तथा अनिन्दनीय हैं।

इस प्रसंगमें यह उचित होगा कि कांग्रेसके खिलाफ जो एक शिकायत की जाती है उस पर विचार कर उसे निबटा दिया जाये। इस शिकायतका कारण पिछली घटनाओंकी जानकारी न होना है। कहा जाता है कि यदि हम अपनी शिकायतें दूर करवानेका आन्दोलन न छेड़ते तो हमारी स्थिति इतनी खराब न होती जितनी कि अब है। किन्तु ऐसा तर्क करनेवाले भाम

१. देखिए खण्ड २, पृष्ठ १९७–९९ ।
२. देखिए खण्ड   पृष्ठ ३५१ और ३३ ।
३. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३६१ ।

यह नहीं जानते कि भारतीयोंके खिलाफ आन्दोलन उतना ही पुराना है जितना कि उनका इस उपनिवेशमें आना। यदि हम इस आन्दोलनको रोकनेकी कोशिश न करते तो क्या होता? इसका उत्तर सीधा है। ऑरेंज फ्री स्टेटमें भारतीयोंका क्या हुआ? यूरोपीयोंने भारतीयोंके खिलाफ आन्दोलन चलाया और भारतीय चुपचाप बैठे रहे। वे तब होशमें आये जब काफी देर हो चुकी थी। अब उस राज्यमें हमारे पैर जरा भी जमे हुए नहीं रहे। ट्रान्सवालमें हम तब होशमें आये जब कि हमारी आधी जमीन खो चुकी थी। चूँकि हमने वहाँ यूरोपीयोंके विरोधके खिलाफ आवाज उठाई इसलिए आशा है कि भले ही हम कोई बाजी फिरसे जीत न सकें जो कुछ हमारे पास बचा है कमसे-कम बचा तो सकेंगे। इसी प्रकार नेटालमें भी हमें तब होश आया जब कि एशियाई-विरोधी भावनाओंको कानूनके रूपमें उतारा जा रहा था। इसलिए हमारी स्थिति यहाँ अब वैसी नहीं है जैसी कि और तरहसे होती। यदि उक्त भावनाओंको उतना न बढ़ने दिया जाता जितना कि वे १८९४ में बढ़ीं तो हम दक्षिण आफ्रिकाके अन्य राज्योंके बरतावको देखकर भली भाँति अनुमान लगा सकते हैं कि हमारी स्थिति आजकी अपेक्षा कहीं अच्छी होती। इस जाँच-पड़तालको आगे बढ़ानेपर दावा किया जा सकता है कि जूलूलैंडमें नोंदवेनी बस्तीके भारतीय-विरोधी विनियमोंका रद किया जाना विशेष रूपसे *भारतीयोंपर लागू होनेवाले पहले मताधिकार अधिनियमका रद किया जाना ट्रान्सवालकी* अनिवार्य सैनिक-भरती सन्धिमें एशियाई-विरोधी उपधाराका स्वीकार न किया जाना ट्रान्सवाल-प्रार्थनापत्रके उत्तरमें भेजे गये प्रसिद्ध खरीतेमें श्री चेम्बरलेनका हमारे साथ पूरी तरह सहानुभूति प्रकट करना नेटालके अखबारोंकी ध्वनिमें स्पष्ट सुधार होना तथा दूसरी बातें जो ऐसे लोगोंकी समझमें आसानीसे आ जायेंगी जिन्होंने हमारे कार्योंको समझनेकी परवाह रखी है—सभी हमारे ही आन्दोलनका सीधा और प्रत्यक्ष परिणाम हैं।

१८९७ के प्रारम्भमें बंगालके मुख्य न्यायाधीशका एक तार अखबारोंमें प्रकाशित हुआ। उसमें उन्होंने भारतीय अकाल-पीड़ित सहायता समितिके अध्यक्षकी हैसियतसे समितिके कोषमें दान देनेकी अपील की थी। जैसे ही तार प्रसिद्ध हुआ यह महसूस किया गया कि नेटालके भारतीयोंके लिए आवश्यक है कि वे इस दिशामें विशेष प्रयत्न करें। उपनिवेशमें पैदा हुए भारतीयोंकी एक बैठक एस० आइबान स्कूलके कमरेमें की गई। वहाँ उपस्थित सभी लोगोंने वादा किया कि वे न केवल स्वयं यथाशक्ति दान देंगे बल्कि अन्य लोगोंसे भी दान एकत्र करनेकी कोशिश करेंगे। बादमें श्री पीरनकी दुकानमें व्यापारियोंकी एक बैठक हुई और एक कोष चालू कर दिया गया। किन्तु इतनेसे वहाँ उपस्थित लोग सन्तुष्ट नहीं हुए। इसलिए उन्होंने सोचा कि इसके अतिरिक्त कुछ और करना आवश्यक है। इसलिए दादा अब्दुल्ला ऐंड कम्पनीकी दुकानमें एक और बैठक हुई जिसमें लगभग उन सभी लोगोंने जिन्होंने कि पीरनकी दुकानमें चन्दा दिया था अपने पहले चन्देकी रकमको दुगना या तिगुना कर दिया। श्री अब्दुल करीमने अपना चन्दा ३५ पौंडसे १११ पौंड श्री अब्दुल कादिरने ३१ पौंडसे १२ पौंड तथा श्री दाऊद मुहम्मदने ७५ पौंड कर दिया। भारतीय समाजके सब वर्गों तथा धर्मोंका प्रतिनिधित्व करनेवाली एक जोरदार समिति बना दी गई। अंग्रेजी गुजराती तमिल उर्दू तथा हिन्दीमें परिपत्र छपवाकर विस्तृत रूपसे बाँटे गये। कार्यकर्ताओंने उपनिवेश-भरमें जाकर गरीब अमीर सबसे चन्दा इकट्ठा किया और एक पखवारेके अन्दर १,१५ पौंडकी रकम एकत्र कर ली। चन्दा एकत्र करनेका खर्च २ पौंडसे भी कम आया।

१ देखिए खण्ड १, पृष्ठ १८९।

नेटाल भारतीय शिक्षा-संघ (नेटाल इंडियन एजुकेशनल असोसिएशन)[1] ने डॉ॰ श्रीमती बूथकी देखरेखमें कांग्रेस-भवनमें दो नाटक सहायतार्थ खेले। तुरन्त एक रंगमंच तैयार किया गया और सदस्योंने कुछ गैर-सदस्योंकी सहायतासे "अलीबाबा चालीस चोर" का अभिनय किया। दोनों अवसरोंपर भवन खचाखच भरा हुआ था। ४ पौंडकी प्राप्ति हुई। लंदन टाइम्सके विशेष संवाददाता कैप्टन यंगहस्बैंड डर्बन गये। वे अपने कार्यपर कुछ समयतक भारतमें भी रह चुके थे। दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके प्रश्नका भारतीय पक्ष उनके सामने रखा गया। दादा अब्दुल्ला ऐंड कम्पनीने कांग्रेस भवनमें उन्हें एक भोज दिया और प्रमुख भारतीयोंको भी आमन्त्रित किया। उन्होंने दक्षिण आफ्रिका-सम्बन्धी अपनी पुस्तकमें हमारे प्रश्नपर एक विशेष अध्याय लिखा। यद्यपि उसमें उन्होंने यूरोपीयोंके रुखके प्रति अनुकूलता दिखाई है, फिर भी भारतीय पक्षको भी अच्छी तरह पेश किया है।

हीरक जयंती समारोहमें भी कांग्रेस पीछे नहीं रही। नेटाली भारतीयोंकी ओरसे सम्राज्ञीको पानके आकारकी एक चाँदीकी तश्तरीमें खुदा मानपत्र भेंट किया गया। तश्तरीके पीछे मोटा मुलायम रेशम मढ़ा था और उसे नेटालकी पीली लकड़ीके फ्रेममें जड़ दिया गया था। इस मानपत्रको भेंट करनेके लिए हमारे प्रमुख व्यक्तियोंका एक शिष्टमंडल परमश्रेष्ठ गवर्नरकी सेवामें विशेष रूपसे उपस्थित हुआ। इसी प्रकारकी भाषामें एक मानपत्र ट्रान्सवालके भारतीयोंकी ओरसे भी भेजा गया।

हीरक जयंतीके दिन नेटाल भारतीय शिक्षा-संघके तत्त्वावधानमें हीरक जयन्ती पुस्तकालय (डायमण्ड जुबिली लायब्रेरी) खोला गया जिसका उद्घाटन डर्बनके तत्कालीन मजिस्ट्रेट श्री डॉसरने किया। उद्घाटन-समारोहके अवसरपर डर्बनके मेयर, श्री छांटम, डर्बन पुस्तकालयके अध्यक्ष श्री ओस्बर्न, डॉ॰ बूथ और कुछ अन्य यूरोपीय उपस्थित थे। जो लोग उपस्थित नहीं हो सके उनके पाससे सहानुभूतिके पत्र प्राप्त हुए। ऐसे लोगोंमें माननीय श्री जेमिसन तथा उप महापौर (डिप्टी मेयर) श्री कॉलिन्स भी थे। इस अवसरपर कांग्रेस भवनमें खूब रोशनी की गई थी। उद्घाटन-समारोहकी सफलता तथा सजावटका सारा श्रेय श्री लाजरस गैब्रियलके प्रयत्नोंको है, हालाँकि यहाँ यह बता देना न्याय्य ही होगा कि सजावटके आखिर आखिरमें अन्य कार्यकर्त्ताओंने भी उनकी सहायता की थी। दुःखके साथ कहना पड़ता है कि जिस सफलताके साथ पुस्तकालयका उद्घाटन हुआ था उस सफलताके साथ वह चला नहीं। वहाँ उपस्थिति शून्य ही रही। पुस्तकालयके संचालनके लिए शिक्षा संघके सदस्योंने आपसमें चन्दा किया और उतनी ही रकम सरकारने भी मंजूर की।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है जून १८९६ तथा जून १८९७ के बीच कांग्रेसके अवैतनिक-मन्त्रीका कार्य-भार श्री आदमजी मियाँखाँने सँभाला। अब वे भी भारत जानेवाले थे। इसलिए उन्होंने अपना कार्य-भार अवैतनिक-मन्त्रीको वापस दे दिया। श्री आदमजी मियाँखाँने कठिन समयमें कांग्रेसकी सेवा की थी। उनकी सेवाकी सराहनाके रूपमें उन्हें मानपत्र भेंट करनेके औचित्यपर विचार करनेके लिए कांग्रेसकी एक बैठक बुलाई गई। श्री आदमजीने जिस आत्मत्याग, उत्साह, योग्यता तथा दृढ़ताके साथ कांग्रेसकी सेवा की थी उसकी तो सभी सराहना करते थे, किन्तु इसपर मतभेद हो गया कि उन्हें मानपत्र दिया जाय या नहीं। कुछ वाद-विवादके बाद उनको मानपत्र देनेका प्रस्ताव बहुमतसे पास हो गया। किन्तु विरोध इतना जबरदस्त था कि बहुमत-प्राप्त मानपत्र न देनेका निश्चय किया, क्योंकि ऐसे मामलोंमें

१. इसकी स्थापना १८९४ में हुई थी।

सर्वसम्मतिका होना आवश्यक समझा गया। और श्री आदमजी मियाखाँ मानपत्र तथा धन्यवाद प्राप्त किये बिना ही भारतके लिए रवाना हो गये।

कांग्रेसने जो भूलें की हैं उनमें से यह भी एक थी। इससे मालूम पड़ता है कि हमारी संस्था भी तो आखिर मनुष्योंकी है, और उसका भी दूसरी संस्थाओंके समान भूल करना स्वाभाविक ही है। ऐसी स्थितिमें अवैतनिक-मन्त्रीने अपने घरपर श्री आदमजीके सम्मानमें एक भोज दिया। छपे हुए निमन्त्रणपत्र भेजे गये और सभी प्रमुख भारतीय उसमें शामिल हुए। वहाँ श्री आदमजीकी प्रशंसामें भाषण दिये गये जिनका उन्होंने उपयुक्त उत्तर दिया। कांग्रेसके अध्यक्ष अवैतनिक-मन्त्री तथा दूसरे सदस्य उन्हें विदा करनेके लिए जहाज घाटपर गये। कांग्रेसने श्री आदमजी मियाखाँको जो उत्तरदायित्व सौंपा था उसके लिए वे योग्य सिद्ध हुए। अपने कार्यकालमें उन्होंने नियमित रूपसे बैठकें बुलाईं, ठीक तरहसे किरायेकी उगाही की और सारे खर्चोंका हिसाब भी सही रखा। इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने आम तौरपर कांग्रेसके सभी सदस्योंके साथ अच्छा सम्बन्ध कायम किया। इस पदको सँभालनेवाले व्यक्तिमें सबसे बढ़कर गुण यह होना चाहिए कि भीतर और बाहरसे होनेवाली सभी तरहकी उत्तेजनाओंमें उसका मन शान्त रहे और विभिन्न स्वभाववाले सदस्योंका निभाव करनेकी उसमें योग्यता हो। ये गुण उन्होंने पर्याप्त मात्रामें प्रकट किये। श्री आदमजी मियाखाँने जितनी लगन और तत्परता जयन्ती-मानपत्रको समयपर तैयार करनेमें दिखाई, उतनी यदि वे न दिखाते तो मानपत्र कभी भी भेजा न जा सकता[1]। उन्होंने दिखा दिया है कि कांग्रेस अच्छी रह सकती है और स्थानीय लोग उसका कार्य भली भाँति कर सकते हैं।

हीरक जयंती दिवसके दो मास पहले जब पत्रोंमें यह घोषणा की गई कि श्री चैम्बरलेन इस अवसरका लाभ उठाकर विभिन्न उपनिवेशोंके प्रधानमन्त्रियोंसे मिलेंगे और ब्रिटिश साम्राज्यपर असर डालनेवाले कुछ प्रश्नोंपर उनसे बातचीत करेंगे और उन प्रश्नोंमें भारतीय प्रश्न भी शामिल होगा तब यह उचित समझा गया कि भारतीय हितोंपर चौकसी रखनेके लिए किसी व्यक्तिको लंदन भेजा जाये। इस कार्यके लिए लंदनकी नाजर बदर्स पेढीके श्री मनसुखलाल हीरालाल नाजर सर्वसम्मतिसे प्रतिनिधि चुने गये और वे उचित अधिकारोंके साथ इंग्लैंड गये। श्री नाजर स्टॉकहोम ओरिएंटल कांग्रेसके सदस्य और भूतपूर्व न्यायमूर्ति नानाभाई हरिदासके भतीजे हैं। श्री नाजर दिसम्बर १८९६ में नेटाल आये थे। उन्होंने प्रदर्शन-संकटके अवसरपर समाजकी बहुमूल्य सेवा की थी। उन्हें इंग्लैंड जाते समय उनकी सेवाओंके लिए कोई पारिश्रमिक नहीं दिया गया। कांग्रेसको उन्हें केवल जेब-खर्च देना पड़ा। लंदनमें उन्हें इस कार्यके लिए अपेक्षासे अधिक समयतक रहना पड़ा। ऐसा उन्होंने उन सज्जनोंकी सलाहपर किया जिनसे हर काममें सलाह लेने तथा जिनकी सलाहपर चलनेकी उनसे विशेष प्रार्थना की गई थी। लंदनमें हमारे साथ सहानुभूति रखनेवालोंसे उन्हें बहुत सहायता मिली। वे हमारी ओरसे पूर्व भारत-संघ (ईस्ट इंडिया असोसिएशन) से कार्य करवानेमें सफल हो गये और उस प्रभावशाली संस्थाने एक सशक्त प्रार्थनापत्र लॉर्ड जॉर्ज हैमिल्टनको भेजा है। उसने भारतीय सरकारसे भी सीधे लिखा-पढ़ी की है। श्री नाजरके पास बहुतसे प्रतिष्ठित अंग्रेजोंके पत्र हैं जिनमें हमारे उद्देश्यके प्रति सहानुभूति प्रकट की गई है। सर मंचरजी भावनगरीने हमें लिखे एक पत्रमें उनके कार्यकी बड़ी सराहना की है। इस सम्बन्धमें उपनिवेशमें जन्मे कुछ भारतीयोंके असाधारण आत्मत्यागका उल्लेख किये बिना रहा नहीं जा सकता। उन्होंने एक ही सार्वजनिक बैठकमें १५ पौंडसे भी अधिक चन्दा जमा किया यह भी बहुत कम वेतन पानेवाले १५ नव

[1] देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३५३ ।

युवकोंने परस्पर मिलकर। इनमें से किसीकी भी नजर कभी दक्षिण आफ्रिकी क्षितिजके परे नहीं गई थी। श्री सी० स्टीफ़नने अपनी चाँदीकी घड़ी तथा जो कुछ उनकी जेबमें था सब निकालकर दे दिया। बैठकमें मौजूद अन्य लोगोंने भी उनका अनुसरण किया। इस प्रकार नागर-कोष समिति दूसरे दिन श्री नागरको तार द्वारा ७५ पौंड भेजनेमें समर्थ हुई।

गत वर्षके प्रायः अन्तमें डर्बन नगर-परिषदने रिक्शा-सम्बन्धी कुछ विनियम पास किये। उनमें से एकके अनुसार भारतीय न तो रिक्शा रख सकते थे और न उनके लिए परवाना प्राप्त कर सकते थे। इसपर तुरन्त ही एक विरोध-पत्र तैयार किया गया। उसपर प्रमुख भारतीयोंके हस्ताक्षर करवाकर उसे गवर्नरको भेज दिया गया। उसकी एक प्रति नगर-परिषदको भी भेज दी गई। इसपर उसने तुरन्त ही प्रतिबन्ध हटानेका निर्णय किया। प्रवासी प्रतिबन्धक-अधिनियमके अमलमें आते ही डर्बनमें सामूहिक रूपसे ७५ भारतीय गिरफ्तार कर लिये गये। इसका तथाकथित आधार यह बताया गया कि वे वर्जित प्रवासी हैं। अन्तमें वे छोड़ दिये गये। पिछली जनवरीमें उपर्युक्त विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत न्यूकैसिल नगर-परिषद द्वारा नियुक्त परवाना-अधिकारीने किसी भी भारतीयको परवाना देनेसे इनकार कर दिया। अपील करनेपर नगर-परिषदने छः परवाने तो मंजूर कर लिये और तीनको नामंजूर कर दिया। यह मामला सर्वोच्च न्यायालयमें ले जाया गया। वहाँ अपील करनेवालोंके वकील श्री लॉटनने बड़ी योग्यतापूर्वक जिरह की कि यह मामला अपने गुण-दोषके आधारपर भी सर्वोच्च न्यायालयके अधिकार-क्षेत्रके परे नहीं है। फिर भी न्यायालयने अपील करनेवालोंके विरुद्ध निर्णय दिया। मुख्य न्यायाधीशने इस निर्णयसे अपनी असहमति प्रकट की। अब कांग्रेसने इस मामलेको अपने हाथमें ले लिया है और सम्राट्की न्याय-परिषद (प्रीवी कौंसिल)में अपील दायर की है। प्रमुख वकील श्री एस्क्विथको इस मामलेकी पैरवीके लिए नियुक्त किया गया है। इसका परिणाम नवम्बरमें निकलनेकी सम्भावना है।[1] यह प्रश्न भी उठाया गया कि जो विक्रेता बिना दूकानके बिक्री करते हैं उन्हें फुटकर व्यापारका परवाना लेनेकी जरूरत है या नहीं। यह मामला मूसा नामके एक सब्जी बेचनेवालेकी ओरसे सर्वोच्च न्यायालयमें ले जाया गया और न्यायालयने निर्णय दिया कि ऐसे विक्रेताओंके लिए परवाना लेनेकी जरूरत नहीं। यह मामला सब्जी बेचनेवालोंने कांग्रेसके सामने पेश किया था और उसे हाथमें ले लिया गया। एक सदस्यने वास्तविक खर्च देनेका वादा किया। मामला तो कांग्रेसने जीत लिया लेकिन उक्त सदस्यने उसका खर्च अभी तक नहीं दिया। यह खर्च कांग्रेसके ही माथे पड़ेगा।

उपनिवेशकी नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) परीक्षामें उत्तीर्ण होनेके उपलक्ष्यमें श्री गॉडफ्रेको मार्चमें एक शानदार अभिनन्दनपत्र दिया गया।[3] वे पहले भारतीय थे जो इस परीक्षामें उत्तीर्ण हुए। इसके लिए विशेष चन्दा एकत्र किया गया और एक विशेष समितिकी स्थापना की गई थी। इस सम्बन्धमें यह उल्लेखनीय है कि बड़े गॉडफ्रे साहबने एक ऐसा उदाहरण पेश किया है जिसका अनुसरण कर अन्य माता-पिता भी पर्याप्त लाभ उठा सकते हैं। खुद विशेष शिक्षित न होनेपर भी उन्होंने अपने बच्चोंका उपयुक्त प्रकारसे पालन-पोषण कर उन्हें उत्तम शिक्षा देना अपना एकमात्र लक्ष्य बना लिया था। उन्होंने अपने सबसे बड़े लड़केको कलकत्ता भेजा और वहाँ उसे विश्वविद्यालयका शिक्षण दिलाया। अब वह ग्लासगो गया है और वहाँ चिकित्साशास्त्रका अध्ययन कर रहा है।

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. सम्राट्की न्याय-परिषदका निर्णय प्रतिकूल था। देखिए पृष्ठ ६५।
३. "अभिनन्दनपत्र: जार्ज गॉडफ्रेको" मार्च १८, १८९८ से पूर्व।

इन वर्षोंमें लगभग २ पुस्तिकाएँ, प्रार्थनापत्रोंकी प्रतियाँ तथा पत्र छापे और वितरित किये गये हैं।

अध्यक्ष

श्री अब्दुल करीम हाजी आदम झवेरीने १८९५ में जब कि उनके भाई स्वर्गीय सेठ कांग्रेसका अध्यक्ष-पद सँभाला। तबसे वे इस पदपर अत्यन्त श्रेयके साथ आसीन रहे। कांग्रेसके सभी सदस्य उनसे सन्तुष्ट थे। अगस्त १८९८ में उन्होंने त्यागपत्र दे दिया। उनसे प्रार्थना की गई कि वे अपने निर्णयपर फिरसे विचार करें। किन्तु उन्होंने कहा कि मैं ऐसा नहीं कर सकता। उनके स्थानपर श्री कासिम जीवा अध्यक्ष चुने गये। इस वर्षके मार्चतक वे इस पदपर आसीन रहे। इसके बाद उन्होंने भी त्यागपत्र दे दिया क्योंकि वे उपनिवेशसे जाना चाहते थे। उनके स्थानपर सर्वसम्मतिसे श्री अब्दुल कादिर अध्यक्ष चुन लिये गये और वे सभाके मुखियाके पदको अब भी सँभाले हुए हैं। बड़े दुःखके साथ लिखना पड़ता है कि गत मईमें कलकत्तासे रंगून जाते समय श्री कासिम जीवा डूबकर मर गये। उनके शोक-पीड़ित पिताके प्रति बहुत सहानुभूति प्रकट की गई और कांग्रेसके अध्यक्षको अधिकार दिया गया कि वे उनके पिताको समवेदनाका पत्र भेजें।

अतिथि

ग्रेट मेडिकल कॉलेजके स्नातक और स्वर्णपदक विजेता तथा मिडिल टेम्पल कॉलेजके बैरिस्टर डा॰ मेहता डर्बन आये। वे ईडर राज्यमें कुछ समयतक मुख्य चिकित्सा-अधिकारी भी रह चुके हैं। सभाजने उनका हार्दिक स्वागत किया और कांग्रेसके प्रमुख सदस्योंने उन्हें भोज दिया।

श्री रुस्तमजीने उदारतापूर्वक कांग्रेसको २२ पौंड १ शिलिंग तथा १ पेंसके मूल्यका फर्श (लिनोलियम) कांग्रेसका नाम खुदी हुई पीतलकी एक कीमती पट्टी लैम्प तथा अन्य छोटी-मोटी वस्तुएँ प्रदान कीं।

विविध

श्री अब्दुल करीमके अध्यक्षता-कालके प्रारम्भमें यह नियम बनाया गया कि कांग्रेसकी बैठकोंमें विलम्बसे आनेके लिए जुर्माना किया जाये। बहुतसे सदस्योंने प्रत्येक बार विलम्बसे उपस्थित होनेके लिए ५ शिलिंग जुर्माना दिया। अब इस नियमका पालन नहीं होता। हम भी अपने प्रथम प्रेमसे इतने विमुख हो गये हैं कि कांग्रेसकी बैठकोंमें ९ बजेसे पहले अर्थात् नियत समयसे डेढ़ घण्टे बादतक कोरम भी मुश्किलसे पूरा होता है। श्री अब्दुल करीमके विशेष प्रयत्नोंसे यह निर्णय किया गया था कि प्रत्येक व्यापारी आयात किये हुए प्रत्येक पैकेटपर एक फार्दिंग कांग्रेसको दे। चमचके ४ पैकेटोंका एक पैकेट गिना जाता था। इस प्रकार कांग्रेसने १९५ पौंड प्राप्त किये। किन्तु यह रकम उस रकमका दसवाँ अंश भी नहीं थी कि प्रत्येक व्यापारीके अपनी देय रकम कांग्रेसको दे देने से प्राप्त होती।

यह स्मरण होगा कि चन्देकी छोटी-छोटी रकमें एकत्र करनेके लिए कार्यकर्ताओंको टिकट बाँटे गये थे ताकि उन्हें रसीद काटनेकी जरूरत न पड़े। यह योजना प्रायः असफल ही रही। केवल श्री मगनगीत स्टैंचर जिनसे लगभग १ पौंड एकत्र करके लाये हैं।

१. स्नातक एवं चिकित्साशास्त्र-महाविशारद।
२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ १९५।

भारतीय अस्पताल

डॉ॰ बूथकी सलाह, सहायता तथा नियन्त्रणके अन्तर्गत डॉ॰ लिलियन रॉबिन्सनके प्रयत्नोंसे १८९८ में भारतीय अस्पतालकी स्थापना की गई। उसकी सहायताके लिए कांग्रेस-सदस्योंने चन्दा एकत्र किया और दो वर्षमें ११ पौंड या प्रतिमास १ पौंड ११ शिलिंग ४ पेंस किराया देते रहना पक्का कर दिया। रस्मी तौरपर अस्पतालका उद्घाटन १४ सितम्बर १८९८ को किया गया।

जहाँतक कांग्रेसके अन्दरूनी कामका सम्बन्ध है आज नजारा मनहूस है। १८९५–९६में जो उत्साह प्रदर्शित किया गया था उसका आधा भी अब सदस्योंमें नहीं रहा। बाहरके सभी जिलोंसे काफी समयसे चन्दा वसूल नहीं हुआ। फिर भी यह मानना कि कांग्रेसके कार्यके प्रति यह प्रत्यक्ष उपेक्षा सदस्यों द्वारा जानबूझकर की गई लापरवाहीके कारण हो रही है, सरासर अन्याय होगा। भारतीय समाजको न केवल भयानक राजनीतिक संकटसे गुजरना पड़ा है और गुजरना पड़ रहा है बल्कि दूसरी जातियोंके साथ-साथ युद्धके[1] कारण भी भारी कष्ट उठाने पड़े हैं। इन दोनोंने मिलकर स्वभावतः उसमें निराशाकी भावना भर दी है। लेकिन आशा है कि यह निराशा अस्थायी होगी और, स्थितिका शान्त होकर पर्यवेक्षण करनेके बाद पुराना उत्साह दूमने वेगसे पुनरुज्जीवित हो जायेगा। पहले कही बातोंसे स्पष्ट मालूम हो जायेगा कि इस स्थितिमें भी कुछ उज्ज्वल स्थल तो हैं ही।

कांग्रेसके नियमोंको एक नया रूप देनेकी आवश्यकता है। अब यह जरूरी लगता है कि उनके पालनमें कठोरतासे काम लिया जाये। जिन लोगोंने चन्दा नहीं दिया उन्हें अबतक सदस्य बने रहने दिया गया है और कांग्रेसके कामोंमें बोलनेका अधिकार भी रहा है। लेकिन यह प्रथा बहुत अवांछनीय है।

एशियाइयोंसे सम्बन्धित ट्रान्सवाल कानूनकी व्याख्या करनेके लिए परीक्षात्मक मुकदमेकी सुनवाई हो गई है। दक्षिण आफ्रिकाके हमारे भाइयोंने सबसे अच्छे वकीलोंकी सेवाएँ लीं और अपनी ओरसे कुछ उठा नहीं रखा। किन्तु न्यायाधीशोंने हमारे खिलाफ निर्णय दिया। केवल जस्टिस जॉरिसेनने उनके साथ अपनी असहमति जाहिर की। इस निर्णयका क्या परिणाम होगा इसके बारेमें भविष्यवाणी करना अभी बहुत जल्दी है। रोडेशियाई भारतीयोंके मामलेको लंदनकी मेसर्स पेरेमिया लॉयन ऐंड कम्पनीने अपने हाथमें लिया है। वे उत्साहके साथ काम कर रहे हैं और आशा करते हैं कि वे सफल हो जायेंगे। उन्होंने डर्बनके व्यापारियोंमें गश्तीपत्र तथा कागजात वितरित किये हैं।

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस॰ एन॰ २९१।

१. यह उल्लेख बोअर-युद्धके बारेमें है।
२. देखिए पृष्ठ १ तथा पृष्ठ १४।

५३. भारतीय शरणार्थियोंकी सहायता[1]

डर्बन
अक्तूबर १४, १८९९

श्रीमन्,

लगभग एक मास पूर्व ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे प्रिटोरिया-स्थित माननीय ब्रिटिश एजेंटको भेजे गये एक पत्रकी नकल प्रेषित करते हुए मुझे जोहानिसबर्गसे आये भारतीय शरणार्थियोंकी मदद करनेसे नेटाल-सरकारकी इनकारीकी कुछ कटु आलोचना[2] करनेका अप्रिय कर्तव्य निभाना पड़ा था। प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम उन लोगोंके प्रवेशका निषेध करता है जो पहले नेटालके निवासी नहीं रहे और कोई एक भी यूरोपीय भाषा नहीं जानते। सरकारने उक्त कानूनके अन्तर्गत कुछ नियम मंजूर किये हैं जिनके अनुसार भारतीय शरणार्थियोंको दस-दस पौंडकी रकम जमा करानेपर अस्थायी अनुमति मिल सकती है। सरकारसे माँग की गई थी कि तनातनीके समयमें रकम जमा कराना स्थगित कर दिया जाये। सरकारने उसे कृपापूर्वक स्थगित कर दिया और ऐसा माननेके कारण मौजूद हैं कि उसने यह ब्रिटिश एजेंटके दबावमें आकर किया। परन्तु इसी बीच एक और कठिनाई आ खड़ी हुई। जोहानिसबर्गसे आनेवाले अधिकतर शरणार्थी जोहानिसबर्ग-डर्बन रेल-मार्गका लाभ उठाते थे। पिछले कुछ दिनोंसे यह मार्ग कट गया है और शरणार्थियोंके लिए डेलागोआ-बे आकर वहाँसे डर्बन आना जरूरी हो गया है। यूरोपीय हजारोंकी संख्यामें डेलागोआ-बेसे यहाँ आते रहते हैं परन्तु चूँकि जहाजी कम्पनियाँ सरकारी हिदायतोंके फलस्वरूप किन्हीं भी भारतीय यात्रियोंको नहीं लेती हैं इसलिए इस मौकेपर भी उन्हें लेनेको राजी नहीं हैं। अतएव सरकारसे राहत देनेका निवेदन किया गया था। उसने जहाजी कम्पनियोंको यह सूचना दे देनेकी कृपा कर दी है कि वे भारतीय शरणार्थियोंको इस शर्तपर डेलागोआ-बेसे ला सकती हैं कि वे यहाँ उतरनेपर अस्थायी परवाने जमा कर दें। नेटाल-सरकारके प्रति यह कर्तव्य माना गया कि जितने जोरोंसे उसकी इनकारीकी बात आपकी नजरोंमें लाई गई थी उतने ही जोरोंसे यह बात भी ला दी जाये। इससे हमें एक बार फिर यह अनुभव हुआ है कि *तैयारमें रहते हुए भी हम ब्रिटिश प्रजा ही हैं और, कुछ ही व्यापारिक समझके लिए ही हम नाबू-भरे प्रश्नोंमें अपना कोई नाबू खोया नहीं है।* इस संकट-कालमें नेटालकी सरकारने जो रुख अपनाया है वह इस समय नेटाल और दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंमें हमारे सिरपर छाये हुए काले बादलोंमें एक आशाका चिह्न है। आशा है कि जिस भावनासे इस संकट-कालमें नेटाल-सरकारने भारतीयोंके साथ व्यवहार किया है वह इन कालके बीत जानेपर भी स्थिर रहेगी और सब देशोंके ब्रिटिश प्रजाजनोंको इसी प्रकार शान्तिपूर्वक और परस्पर मेल-मिलापसे यहाँ रहने दिया जायेगा।

१. यह एक परिपत्र है, जो कुछ चुने हुए व्यक्तियोंको भेजा गया था। इन्हीं व्यक्तियोंको एक विशेष पत्र भेजा गया था (जो अब उपलब्ध नहीं है)। इसके साथ ब्रिटिश एजेंटके नाम गांधीजीका ११ जुलाई, १८९९ का एक पत्र भी संलग्न था, जिसमें यहाँ उल्लिखित "कटु आलोचना" की गई थी। उपर्युक्त समाचार परिपत्र सितम्बर १८, १८९९ का था।

२. देखिए अगला पृष्ठ।

यद्यपि भारतीय सेनाएँ अभीतक डर्बनमें नहीं उतरीं परन्तु वहाँकी सेनाओंके साथ संलग्न भारतीय यूरोपीयोंतकसे अपनी प्रच्छन्न प्रशंसा करवा लेनेमें असफल नहीं रहे।

आपका आज्ञाकारी
(ह०) मो० क० गांधी

पत्रमें उल्लिखित टिप्पणी यह थी

"ट्रान्सवालमें बचे हुए लोग उसे यथासम्भव शीघ्र खाली करते जा रहे हैं। गत कुछ दिनोंमें जो लोग वहाँसे गये हैं उनकी संख्या २१ से कम नहीं है। एटलौंडर्स कौंसिल (उइटलैंडर यूरोपियोंकी परिषद) के प्रमुख सदस्य जोहानिसबर्गके अंग्रेजी पत्रोंके सम्पादक भी वहाँसे जा चुके हैं। जोहानिसबर्गकी बड़ीसे-बड़ी पेढ़ियोंने अपना कारोबार बन्द कर दिया और अपने मकानों तथा बही-खातोंको सीमा-पार भेज दिया है। ऐसे समय यदि भारतीय भी ट्रान्सवाल छोड़कर जाना चाहें तो किसीको आश्चर्य नहीं करना चाहिए। स्वभावतः वे डेलागोआ-बे नहीं जा सकते क्योंकि वहाँकी हवामें मलेरिया हो जाता है। वे केप भी बड़ी संख्यामें नहीं जा सकते क्योंकि एक तो वह स्थान दूर बहुत है इसलिए वहाँ जानेमें खर्च बहुत बैठता है दूसरे, वहाँ भारतीय आबादी थोड़ी है वहाँ उनके रहनेके लिए कोई सार्वजनिक स्थान नहीं है उन्हें अपने मित्रों-भाईबन्दोंका ही आश्रित होकर रहना पड़ेगा और वे केवल नेटालमें ही मिल सकते हैं। उन्होंने नेटाल-सरकारसे प्रार्थना की है कि संकट-कालमें प्रवासी-प्रतिबन्धक कानूनपर अमल स्थगित कर दिया जाये। इसका उत्तर इस सप्ताह यह प्राप्त हुआ है कि सरकारको इस कानूनके अन्तर्गत ऐसा करनेका अधिकार नहीं है। पर यह सत्य नहीं हो सकता क्योंकि एक और पत्रके उत्तरमें सरकारकी तरफसे लिखा गया है "प्रवासी-प्रतिबन्धक कानूनपर अमल करने-न-करनेका निश्चय सरकार मानवताके विचारसे करेगी और यदि लड़ाई छिड़ गई तो वह अपने अधिकारोंका प्रयोग निष्कारण और कठोरतापूर्वक नहीं करेगी। जहाँतक इस उत्तरका सम्बन्ध है यह अच्छा है परन्तु इससे अभीष्ट सहायता नहीं मिलती। सचमुच लड़ाई छिड़ चुकनेपर अपनी जगहसे हिलना असम्भव हो जायेगा। सरकारसे पुनः प्रार्थना की गई है और देखना है कि वह क्या करती है। मैं यह सब यह बतलानेके लिए लिख रहा हूँ कि दक्षिण आफ्रिकामें हमारी अवस्था कितनी भयंकर है। यह देखकर हृदय सचमुच फटा जाता है कि ब्रिटिश प्रजाजन खतरेसे बचनेके लिए ब्रिटिश भूमिपर ही आश्रय नहीं ले सकते। ब्रिटिश न्याय और ब्रिटिश प्रजा" शब्दोंकी जादू-भरी शक्तिमें बेचारे भारतीयोंका विश्वास डिगानेके लिए नेटाल-सरकार अपनी शक्ति-भर जो कर सकती थी वह उसने कर लिया दीखता है। सौभाग्य इतना ही है कि यह सरकार सारे ब्रिटिश साम्राज्यकी प्रतिनिधि नहीं है। यह बात विचित्र तो अवश्य लगती है परन्तु आज ही एक तार प्रकाशित हुआ है कि नेटाल-सरकारके बार-बार प्रार्थना करनेपर साम्राज्य-सरकारने नेटालकी रक्षाके लिए भारतसे १ ० सैनिक भेजे जानेकी आज्ञा दे दी है — उसी नेटालकी रक्षा करनेके लिए जो ट्रान्सवालके भारतीयोंको अस्थायी शरण तक देनेसे इनकार कर रहा है। इससे अधिक टिप्पणी करना व्यर्थ है।

छपी हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १२ ०) से।

५४ कांग्रेसका प्रस्ताव शरणार्थियोंके सम्बन्धमें[1]

डर्बन
अक्तूबर १८, १८९९

निश्चय किया गया कि ट्रान्सवालसे निकले हुए जो ब्रिटिश भारतीय शरणार्थी इस समय डेलागोआ-बेमें हैं उन्हें नेटाल आने और इस संकट-कालमें यहाँ रहनेकी सुविधा देनेकी कृपाके लिए, नेटाल भारतीय कांग्रेस सरकारको हार्दिक धन्यवाद देती है।

यह भी कि अध्यक्षसे निवेदन किया जाये कि वे इस प्रस्तावकी एक प्रति सूचनार्थ नेटाल-सरकारको भेज दें।

(ह०) अब्दुल कादिर

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स साउथ आफ्रिका जनरल १८९९।

५५ भारतीयोंका सहायता-प्रस्ताव

[डर्बन]
अक्तूबर १९, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

डर्बनके अंग्रेजी बोल सकनेवाले लगभग १ भारतीयोंने कुछ ही घंटेकी सूचना मिलनेपर १७ तारीखको एकत्र होकर यह विचार किया था कि इस समय साम्राज्य-सरकार और दक्षिण आफ्रिकाके दो गणराज्योंमें जो लड़ाई छिड़ी हुई है उसमें हमें सरकार या साम्राज्य-अधिकारियोंको अपनी सेवाएँ बिना किसी शर्त अथवा किन्तु-परन्तुके भेंट करनी चाहिए या नहीं।

फलतः मुझे इस पत्रके साथ उन लोगोंमें से कुछके नामोंकी एक तालिका भेजनेका मान प्राप्त हुआ है, जो बिना किसी शर्तके अपनी सेवाएँ देनेको उद्यत हैं। डॉ. प्रिसने इन सबकी बारीकीसे जाँच कर ली है।

शेष स्वयंसेवकोंकी जाँच वे कल करेंगे और उनमें से १ के परीक्षामें सफल हो जानेकी आशा है। परन्तु क्योंकि समयका मूल्य बहुत है, इसलिए अधूरी तालिका ही भेज देना उचित समझा गया।[2]

ये प्रार्थी अपनी सेवाएँ बिना किसी वेतनके प्रदान कर रहे हैं। यह अधिकारियोंकि इच्छाधीन है कि वे जैसा उचित या आवश्यक समझें इनमें से कुछकी या सबकी सेवा स्वीकार कर लें।

१ इसे मेसलके मसविदेसे अंश भर लिया था।
२ देखिए अगला पृष्ठ।

हम शस्त्र चलाना नहीं जानते। इसमें दोष हमारा नहीं। यह तो हमारा दुर्भाग्य है। परन्तु सम्भव है कि लड़ाईके मैदानमें अन्य भी अनेक ऐसे कर्तव्य हों जिनका महत्त्व शस्त्र चलानेसे कुछ कम न हो। वे कर्तव्य किसी भी प्रकारके क्यों न हों हम उनका पालन करनेके लिए बुलाये जानेमें अपना सम्मान समझेंगे और सरकार जब कभी हमें बुलायेगी हम तभी आनेके लिए तैयार रहेंगे। यदि उचित कर्तव्यनिष्ठा और अपनी सम्राज्ञीकी सेवाकी चरम उत्कंठाके कारण रण-क्षेत्रमें हमारा कुछ भी उपयोग हो सकता हो तो हमें निश्चय है कि हम चूकेंगे नहीं। इससे और कोई काम न भी निकल सकता हो तो भी हम रण-क्षेत्रके चिकित्सालयों और रसद विभागमें तो कुछ काम आ ही सकेंगे।

सेवाके इस विनम्र प्रस्तावका उद्देश्य यह सिद्ध करनेका प्रयत्न है कि सम्राज्ञी दक्षिण आफ्रिका-निवासी अन्य प्रजाओंके समान भारतीय भी रण-भूमिपर सम्राज्ञीके प्रति कर्तव्य-पालन करनेको तैयार हैं। इसके द्वारा भारतीय अपनी राजनिष्ठाका आश्वासन देना चाहते हैं।

हम जितने आदमी अधिकारियोंकी सेवामें पेश कर रहे हैं उनकी संख्या थोड़ी भले ही दिखाई दे परन्तु उनमें डर्बनके खासे-अच्छे अंग्रेजी-शिक्षित भारतीयोंमें से शायद पच्चीस प्रतिशत शामिल हैं।

भारतीयोंका व्यापारी वर्ग भी राजभक्तिपूर्वक सेवा करनेके लिए आगे बढ़ आया है और अगर ये लोग मैदानमें जाकर कोई सेवा नहीं कर सकते तो इन्होंने उन स्वयंसेवकोंके आश्रितोंके निर्वाहके लिए वचन-दान किया है जिन्हें अपनी परिस्थितियोंके कारण सहायता लेनेकी आवश्यकता पड़ेगी।

मुझे निश्चय है कि हमारी प्रार्थना मान ली जायेगी। इस कृपाके लिए प्रार्थी लोग सदा कृतज्ञ रहेंगे और मेरी नम्र सम्मतिमें जिस शक्तिशाली साम्राज्यपर हम इतना अभिमान करते हैं उसके विभिन्न भागोंको घनिष्ठ बन्धनमें बाँधनेके लिए यह सूत्रका काम देगी।[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

सूची उन भारतीय स्वयंसेवकोंके नामोंकी जिन्होंने नेटाल-सरकार या साम्राज्य-अधिकारियोंको अपनी सेवाएँ अर्पित करनेका प्रस्ताव किया है

गांधी मो० क० पॉल एच० एल० पीटर्स ए० एच० लाल आर० के० पारसी शाह पी० कूपर, पी० सी० गॉडफ्रे जे० डब्ल्यू० लाजरस आर० पीटर पी० डर्के एल० पी० लरिम्स बी० गैब्रियल एल० हैरी जी० डी० गोविन्दू आर० मार्क एल० रामसुन्दर होर्ने जे० डी० मायर एम० एच० नायडू, पी० के० सिंह के० रिचर्ड्स एम० एल० अठमन पीट एम० एल० रायप्पन जे० क्रिस्टोफर, जे० स्टीवेन्स सी० रायट्र्स जे० एल० नैरी एच० जे० डन जे० एम० गैब्रियल सी० रायप्पन एम० मार्टिन एड० मुडल आर०।

[अंग्रेजीसे]

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें पेन्सिलसे लिखे कच्चे मसविदे तथा टाइप की हुई दफ्तरी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३१२-२) और *नेटाल मर्क्युरी* ता० २५-१०-१८९९ से।

१. अपने अक्तूबर २३ के उत्तरमें मुख्य उपसचिवने गांधीजीको लिखा था: "मन्त्रियोंके हस्ताक्षर [illegible] राजभक्त [illegible] भारतीयोंने अपनी जो सेवाएँ अर्पित करनेका प्रस्ताव किया है उससे सरकार प्रसन्न हुई है ... और अवसर आते ही सरकार आवश्यकतानुसार इन सेवाओंका उपयोग करेगी। इसका असर भारतीयोंके प्रति सरकारकी भावनापर [illegible] करते हैं।"

५६. दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय[1]

डर्बन
नवम्बर १० [१८९९]

मैंने देखा कि नटालके भारतीयोंकी शिक्षाके सम्बन्धमें मेरे पिछले लेखने भारत तथा इंग्लैंडमें कुछ ध्यान आकर्षित किया है। उसमें मैंने कहा था कि यदि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय प्रश्नकी ओर भारत तथा ब्रिटेनकी सरकारोंने जितना ध्यान अबतक दिया है उससे ज्यादा न दिया तो इस देशसे भारतीय समाजके मिट जानेमें सिर्फ समयकी कसर है। मैं जितना ही देखता हूँ उतना ही मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जाता है। आज जब कि ब्रिटिश सेना और बोअरोंके बीच घोर युद्ध छिड़ा हुआ है ट्रान्सवालके भारतीयोंकी उस स्थितिपर — मैं तो कहना चाहता था नितान्त दयनीय स्थितिपर — जिसमें कुछ समय पहले वहाँ झगड़ा भड़कनेपर, वे पड़ गये थे संक्षेपमें विचार कर लेना अप्रासंगिक न होगा। आतंककी पहली अवस्थामें श्वेतर यूरोपीय[2] हजारोंकी संख्यामें जोहानिसबर्गसे भागते रहे। तथापि भारतीय स्थिर रहे। बादमें श्वेतर यूरोपीयोंकी परिषदके प्रमुख सदस्य भाग गये। स्टारके सम्पादक तथा रायटरके संवाददाता श्री मनीपेनी और एक सुप्रसिद्ध सॉलिसिटर तथा परिषदके प्रमुख सदस्य श्री हलको वेश बदलकर भागना पड़ा था। श्रीदरके श्री पैकमनको राजद्रोहके आरोपमें गिरफ्तार कर लिया गया था और हवामें यह अफवाह व्याप्त थी कि नेटाल-सरकार आन्दोलनके नेताओंको बन्धकके रूपमें गिरफ्तार कर रखेगी। स्वभावतः ही यूरोपीयोंके साथ बेचारे भारतीय भी डर गये और वे भी ट्रान्सवाल छोड़कर किसी सुरक्षित स्थानमें जानेके लिए आतुर हो उठे। वे कहाँ जा सकते थे? केप कालोनीमें तो नहीं क्योंकि वह दूर है और वहाँ भारतीयोंकी आबादी बहुत ही विरल है। डेलागोआ-बेमें भी नहीं क्योंकि वह मलेरियाका अड्डा है स्वच्छतासे रहित है और इससे ज्यादा बाजार है। फिर नेटाल ही एक स्थान था जहाँ वे जा सकते थे। सो वहाँ प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम जो पागलों अपराधियों वेश्याओं कंगालों और यूरोपीय भाषाओंमें से किसी एकका भी ज्ञान न रखनेवालोंका आगमन निषिद्ध करता है, आड़े खड़ा था। अलबत्ता अगर उक्त आखिरी वर्गके लोग नेटालके पूर्व-निवासी हों — इन शब्दोंका अर्थ कुछ भी निकले — तो बात दूसरी है। श्री चेम्बरलेनने कहा है कि यह अधिनियम रंग या प्रजातिके भेदभावके बिना सबपर लागू होता है और, इसलिए, यह कोई ऐसी चीज नहीं है जिसपर आपत्ति की जा सके। परन्तु इसका यह निष्कर्ष बिलकुल नहीं निकलता कि यूरोपीय अपराधी गुंडे या वेश्याएँ, जिनकी संख्या जोहानिसबर्गमें अच्छी-खासी मानी जा सकती है नेटाल नहीं जा सकते थे। उनके लिए न केवल उपनिवेशके दरवाजे खुले हुए थे बल्कि उनके स्वागतके लिए विशेष प्रबन्ध किया गया था — सहायता-समितियोंका संगठन किया गया था और उनके संकटके समय उनको राहत पहुँचानेके लिए जो-कुछ भी किया जा सकता था वह सब इस उपनिवेशके लोगोंने किया था। यह स्वाभाविक और न्यायपूर्ण ही था।

१. देखिए पादटिप्पणी पृ० ९१।
२. देखिए "दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय मत" जुलाई १२, १८९९।
३. और सिरियाई नाम लेवेन्ट मिश्रित सम्प्रदाय, जो ट्रान्सवाल छोड़कर भाग गये थे।

सिर्फ भारतीय नहीं आ सकें और सिर्फ वे ही न आयें। उन्होंने कुछ राहत पानेके खयालसे सरकारसे अपील की। उन्होंने सुझाया कि उपर्युक्त कानूनके अन्तर्गत स्वीकार किये गये कठोर नियमोंका कुछ हिस्सा मुल्तवी कर दिया जाये और यह माँग की कि संकट-कालमें उन्हें नेटालमें ठहरने दिया जाये। पहले-पहल तो नेटाल-सरकारने राहत देनेसे साफ इनकार कर दिया। बादमें उसने कहा कि अगर युद्ध छिड़ा तो वह मानवीय भावनासे प्रेरित होकर मानवताके काम करेगी। भारतीयोंने जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश प्रतिनिधिसे भी प्रार्थना की थी। और, कहना ही होगा वे मौकेपर काम आये और उन्होंने योग्य अधिकारियोंके सामने प्रश्नका सामाजिक पहलू बहुत जोरोंके साथ पेश किया। इससे अभीष्ट राहत मिल गई।

नेटालने जो हास्यास्पद और अ-ब्रिटिश रुख ग्रहण किया था उसे भली भाँति समझनेके लिए उपर्युक्त नियमोंके बारेमें कुछ जान लेना जरूरी है। प्रवासी प्रतिबन्धक विधेयकको पेश करते समय नेटालके मन्त्रियोंने कहा था कि उपनिवेशमें पहलेसे ही बसे हुए भारतीयोंको असुविधामें डालनेका उनका कोई इरादा नहीं है। परन्तु, जैसे ही विधेयक अधिनियमके रूपमें परिणत हुआ सरकारने विवश होकर भी विभिन्न जहाज-कम्पनियोंको सूचनाएँ भेजीं और उन्हें बताया कि यदि वे भारतीय यात्रियोंको लाईं तो उन्हें क्या दण्ड भोगना होगा। स्वाभाविक था कि इनका जहाज-कम्पनियोंने यह अर्थ लगाया कि उन्हें किसी भी भारतीय यात्रीको नहीं लाना है। इस दृष्टिसे यह आवश्यक मालूम हुआ कि जो भारतीय उक्त कानूनके अन्तर्गत उपनिवेशोंमें आनेके हकदार थे उन्हें कुछ राहत दी जाये। इसलिए सरकारने अधिवास प्रमाणपत्र (सर्टिफ़िकेट्स ऑफ़ डोमिसाइल) कहलानेवाले प्रमाणपत्र जारी किये। ये उन लोगोंको दिये जाते थे जिनके सम्बन्धमें प्रमाण पेश किया जा सके कि वे पहले उपनिवेशमें रहते थे। यहाँ यह बता देना अनुचित न होगा कि अधिवास शब्दकी व्याख्या जितनी हो सकी उतनी संकुचित कर दी गई है। इससे अब व्यावहारिक रूपमें प्रमाणपत्र चाहनेवाले भारतीयको इस आशयके दो हलफ़नामे पेश करने पड़ते हैं कि वह कमसे कम दो वर्षसे उपनिवेशमें कोई स्थायी व्यापार कर रहा है। खुद कानूनमें इस पाबन्दीके लिए कोई विधान नहीं है। ये प्रमाणपत्र खजानेमें ढाई शिलिंग (आधा क्राउन) शुल्क जमा करनेपर दिये जाते हैं। परन्तु पाठक आसानीसे कल्पना कर लेंगे कि जिस गरीब भारतीयको यह साबित करना है कि वह कानूनके अमलसे बरी है, उसे न सिर्फ आधा क्राउन देना पड़ता है बल्कि हलफ़नामा बनानेवाले वकीलों आदिका शुल्क भी चुकाना पड़ता है।

इस सुविधासे — अगर इसे सुविधा कहा जा सके तो — सिर्फ वे भारतीय नेटालका टिकट पानेमें समर्थ हुए, जो पहले नेटालके बाशिन्दे थे। परन्तु नेटालवासी भारतीयोंके वे मित्र रिश्तेदार या ग्राहक क्या करते जो थोड़े ही दिनोंके लिए नेटाल आना चाहते थे और, इसलिए, यहाँ बसनेके इच्छुक नहीं थे? भारतीय व्यापारियोंको मुलाजिमोंके लिए ऐसी अस्थायी अनुमतिकी पूरी-पूरी जरूरत थी। जो दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंसे आवश्यक कार्यवश नेटाल आना चाहते थे उनकी ओरसे कुछ आवेदनपत्र सरकारको भेजे गये थे। और कुछ कठिनाईके बाद इस शर्तपर अनुमति दे दी गई कि उनकी यथोचित वापसीके लिए ५ पौंड नकदी जमानत जमा की जाये। इस प्रकारकी अनुमति देनेमें जो आमतौरपर देरी होती थी और ऐसी भारी जमानत माँगी जाती थी कि लोग जमा ही न कर सकें, उनके खिलाफ बार-बार शिकायतें और चीख-पुकार होती थी। कुछ ज्यादा राहतके लिए अर्जियाँ दी गईं और जब कानून पास होनेके बाद एक वर्षसे भी ज्यादा बीत गया तब सरकारने नियम बनाये जिनसे अभीष्ट राहत मिलनेके बजाय चीजोंकी जटिलता पैदा हुई। अगर कोई व्यक्ति मान लीजिए, जोहानिसबर्गसे भारत जानेके

मार्गमें डर्बनसे गुजरे तो उसे २५ पौंड जमा करनेपर और अगर वह ज्यादासे ज्यादा छः सप्ताहतक नेटालमें ठहरना चाहे तो १ पौंड जमा करने पर परवाना दिया जाता था। ऐसे प्रत्येक परवानेपर पहली बार एक पौंडका शुल्क लगाया गया। इस तरह अगर कोई गरीब भारतीय भारत जानेके लिए डर्बनमें जहाजपर सवार होना चाहता तो वह न सिर्फ जमा करनेके लिए २५ पौंड बल्कि सरकारको देनेके लिए भी १ पौंड जुटानेके लिए लाचार था जबकि उसे जहाजकी छत (डेक) पर भारततक यात्रा करनेका किराया ज्यादासे ज्यादा पाँच गिनी और कभी-कभी तो सिर्फ दो गिनी ही देना पड़ता था। यह शुल्क लगानेके और नेटालमें ठहरनेवालों तथा डर्बनसे सिर्फ जहाजपर सवार होनेवालोंके परवानोंके लिए जमा की जानेवाली रकमोंमें जो अन्तर था उसके विरोधमें अधिकारियोंपर अर्जियाँ भेजी गईं। परन्तु सरकारने कहा कि १ पौंडका शुल्क आवश्यक है क्योंकि परवाने एक रिआयतके रूपमें दिये जाते हैं और उनसे सरकारका काम बहुत बढ़ता है और जहाजपर सवार होनेके परवानोंके लिए ज्यादा रकम जमा करानेका आग्रह इसलिए रखा गया है कि सरकार उस रकमसे परवानेवालोंके लिए टिकट खरीदती है। परवानेवालोंने तो सरकारसे इस उपकारकी माँग कभी नहीं की और न कभी उसकी सराहना ही की। इसके विपरीत अर्जदारोंका दावा था कि ऐसे परवानोंका दिया जाना बिलकुल आवश्यक है और यह जरूरत पूरी-पूरी उस कठोरतासे पैदा हुई है जिससे प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट) को कार्यान्वित किया जाता है। उनका कहना था कि कानून तो प्रवासको — अर्थात् स्थायी निवासके लिए आनेको न कि अस्थायी रूपसे ठहरनेके लिए आनेको — मना करता है और, इसलिए उन्होंने परवानोंकी प्रथाको रिआयत माननेसे आदरपूर्वक इनकार कर दिया।

परन्तु, जबतक सरकारपर बहुत दबाव नहीं डाला गया और जबतक विक्रेता-परवाना अधिनियम-सम्बन्धी प्रार्थनापत्रमें अर्जदारोंने यह धमकी नहीं दी कि वे ब्रिटिश अधिकारियोंको प्रार्थनापत्र भेजेंगे तबतक सरकार नहीं मानी। बादमें उसने १ पौंडका शुल्क उठा लिया और जहाजपर सवार होनेके परवानोंकी २५ पौंड जमानतको घटाकर १ पौंड कर दिया। फलतः जब ट्रान्सवालके भारतीयोंने राहतके लिए अपील की उस समय प्रत्येक यात्री या जहाजपर सवार होनेके परवानेपर १ पौंड शुल्क वसूल किया जाता था। (इस तरह एक दूकानदारकी स्थिति मान लीजिए, जिसके पाँच नौकर हैं न सिर्फ अपना सारा माल पीछे छोड़ देना पड़ता न सिर्फ लम्बे युद्धके दौरानमें भरण-पोषणका प्रबन्ध करना पड़ता — सो भी किसी व्यापारकी संभावनाके बिना — और न सिर्फ यात्रा तथा फुटकर खर्चके लिए धन जुटाना पड़ता बल्कि आतंकके समयमें ट्रान्सवाल छोड़नेके पहले सरकारी खजानेमें जमा करनेके लिए ६ पौंड भी पास रख लेने पड़ते — जो घोर मुसीबतके समय असम्भवप्राय हो सकता है)। यह ध्यान देने योग्य बात है कि ये परवाने — यद्यपि हमें स्वीकार करना ही चाहिए कि ये अर्जी देनेपर बिना किसी कठिनाईके दे दिये जाते हैं — देना-न-देना उन अफसरोंकी इच्छाधीन है, जो इन्हें देनेके लिए नियुक्त किये गये हैं। सम्भवतः भारतीयोंने तो सिर्फ यह माँग की थी कि १ पौंडका शुल्क मुस्तवी कर दिया जाये और सिर्फ संकट-कालमें उन्हें नेटालमें प्रवेश करने तथा रहनेकी अनुमति दी जाये। सरकारने पहले-पहल उनका जो रूखा उत्तर दिया उससे न सिर्फ जोहानिसबर्गके भारतीयोंको बल्कि न्याय बुद्धिवाले अनेक अंग्रेजोंको भी धक्का पहुँचा। मैं जानता हूँ कि ब्रिटिश उप राजप्रतिनिधि बहुत नाराज थे। जोहानिसबर्गके *स्टार* ने *स्पिनर* नामके एक व्यक्तिका उड़ा देनेवाले लेखमें नेटालकी हँसी उड़ाई थी और साम्राज्य-सरकारके ट्रान्सवालको डचेतर यूरोपीयोंके प्रति न्याय करनेके लिए दबाने और नेटालको ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति जैसा चाहे वैसा व्यवहार करने देनेमें जो विसंगति है

इसे स्पष्ट किया था। और यह सत्यसे बिलकुल रहित नहीं था। भारतीयोंके लिए उस समय तो "ब्रिटिश प्रजा" शब्द अर्थशून्य हो गये थे। ब्रिटिश भारतीय ऐसे घोर संकटके समय ब्रिटिश भूमिमें आश्रय न पा सकें यह उनकी समझके बाहर था और वे क्या करें कहाँ जायें के चक्करमें पड़ गये थे। हालकी घटनाओंसे साबित हो जाता है कि भारतीयोंकी आशंकाएँ बिलकुल सही थीं और आपके जिन पाठकोंने इस महायुद्धकी उत्तेजक घटनाओंका अनुशीलन किया है उन्हें अबतक पता चल गया होगा कि जो लोग अन्तिम क्षणतक ट्रान्सवालसे भागना टालते रहे उन्हें कैसी मर्मभेदी कठिनाइयाँ भोगनी पड़ी थीं। जोहानिसबर्ग-स्थित ब्रिटिश उप-राजप्रतिनिधिने मदद की। उन्होंने प्रिटोरिया-स्थित ब्रिटिश एजेंटको एक जोरदार खरीता भेजा। एजेंटने अपनी बारीमें ब्रिटिश उच्चायुक्तको तार दिया और उनकी एक सामयिक "सिफारिश" से नेटाल सरकारके होश ठिकाने आ गये तथा १ पौंडका शुल्क स्थगित कर दिया गया। आशा करें कि यह स्थगन स्थायी बन जायेगा। और अगर वर्तमान युद्धसे यूरोपीय ब्रिटिश प्रजाओंकी भावनाएँ उनके भारतीय बन्धु प्रजाजनोंके प्रति ज्यादा अच्छी हो गईं — जैसा कि असम्भव नहीं मालूम होता — तो इसका एक अच्छा नतीजा तो हो ही जायेगा।

यह कह देना नेटाल-सरकारके प्रति हमारा कर्तव्य है कि सर आल्फ्रेड मिलनरकी सामयिक सिफारिशके बादसे नेटाल-सरकारने भारतीयोंके प्रति भेद-भाव न करनेकी सावधानी बराबर रखी है। जब जोहानिसबर्ग और डर्बनके बीच मुसाफिरोंका आना-जाना रुक गया तब शरणार्थियोंको डेलागोआ-बेके रास्ते आना पड़ता था। यूरोपीय तो बिना किसी विघ्न-बाधाके डर्बन आ गये। उनके रहने और भोजन आदिकी व्यवस्था सरकार या सहायता-समितियोंको करनी पड़ी। परन्तु, ऊपर बताई हुई सूचनाके सबबसे जहाज-कम्पनियाँ उन भारतीय शरणार्थियोंको लानेकी हिम्मत करनेको तैयार नहीं हुईं, जिनमें से एकने भी सरकार या सहायता-समितिसे मददकी माँग नहीं की। सरकारसे निवेदन किया गया था कि उसने रकम जमा कराना तो स्थगित कर ही दिया है अब जहाज-कम्पनियोंको भारतीय शरणार्थियोंको लानेकी सूचना और दे दे। सरकारने लगभग तुरन्त यह कर दिया। कम्पनियोंको सूचना दी जाने और अधिवास-प्रमाणपत्रका नियम जारी किये जानेसे जो कष्ट हुए उनके कुछ उदाहरण दे देना अनुचित न होगा। जैसा कि मैंने पहलेके एक पत्रमें लिखा है, मिस्त्रीवाला प्लेग उनके लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। नेटालके कठोर सूतक-अधिनियमने भारतसे आनेवाले किसी भी जहाजके लिए भारतीय यात्री लेना बहुत जोखिमका काम बना दिया है। फलतः ऐसा मालूम होता है बम्बईकी जहाज-कम्पनियाँ महीनोंसे नेटालके लिए सवारियाँ लेनेसे साफ इनकार करती आ रही हैं। इस तरह, खास तौरसे भारतीय व्यापारियोंको उनके साझेदारों या कर्मचारियोंके नेटालका टिकट प्राप्त न कर सकनेके कारण जो हानि उठानी पड़ी और जो असुविधा हुई, वह बहुत गम्भीर है। सरकारसे सहायताकी माँग की गई है परन्तु सरकार यह कह कर बच गई है कि वह जहाज-कम्पनियोंको कोई आश्वासन तो नहीं दे सकती परन्तु भारतीय बन्दरगाहोंसे आनेवाले प्रत्येक व्यक्तिके बारेमें उसकी योग्यता-अयोग्यताके आधारपर विचार करेगी। दुर्भाग्यवश डेलागोआ-बेके अधिकारियोंपर भी मिस्त्रीवाले प्लेगकी झक सवार हो गई है और उन्होंने नेटालकी मतवाली जोश-मुद्राके वश होकर, हालमें भारतीय सवारीवाले जहाजोंको वापस कर दिया है उन्हें माल भी उतारने नहीं दिया। उनके मनमें कोई पूर्वग्रह नहीं है परन्तु चूँकि पड़ोसी उपनिवेशके लोग चिल्ला रहे हैं कि यहाँ स्वच्छताकी व्यवस्था बिलकुल रद्दी है और संक्रामक रोगोंके मरीजोंकी देखभालका प्रबन्ध और भी गया-बीता है इसलिए वे बहुत ही जोर-जबरदस्तीसे काम चला रहे हैं। लगभग एक सप्ताह पूर्व कांगसर नामका जहाज बहुत-से भारतीय यात्रियोंको बम्बईसे लेकर आया

था। उसे लौट जानेका आदेश दिया गया। इसी बीच एक भारतीय सज्जनने जिनका मुंशी उक्त जहाजमें था पोर्तुगीज अधिकारियोंसे भेंट करके उन्हें राजी कर लिया कि उसे उतरने दिया जाये। कहा जाता है कि उसको लानेके लिए सरकारकी जहाज खींचनेवाली नौका खास तौरसे भेजी गई। यह सचमुच बड़ी मनोरंजक बात है। असर इतनी ही है कि यह बहुत सन्तोष जनक भी है। इससे मालूम होता है कि पोर्तुगीज लोग भारतीयोंके प्रति रागद्वेषसे मुक्त हैं और यह भी पता चलता है कि दुर्बलताके समयमें वे न्याय कर सकते हैं।

यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है, दक्षिण आफ्रिकामें बेचारे भारतीयोंकी और इसका मुख्य कारण है नेटालकी भारतीय-विरोधी नीति। यदि प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम और सूतक-अधिनियम (यह भी वास्तवमें भारतीय-विरोधी अधिनियम ही है) न होते तो भारतीय यात्रियोंको लानेवाले सारेके सारे जहाजोंका बिना यह खयाल किये एकदम वापस कर दिया जाना कि भारतीयोंपर इसका क्या असर पड़ेगा असम्भव होता। फिर भी मुझे लगता है कि स्थिति बिलकुल ही असाध्य नहीं है। भारतीय प्रश्नके परे, नेटालने निस्सन्देह, वर्तमान संकटका ठीक-ठीक मुकाबला किया है — यहाँतक कि श्री चेम्बरलेनने अपने हालके महान् भाषणमें उपनिवेशकी प्रशंसा की है, जिसका वह योग्य पात्र था। स्वयंसेवक दृढ़ताके साथ साम्राज्यके पक्षमें लड़ रहे हैं। मन्त्रियोंने अपना पूरा बल साम्राज्य-सरकारको प्रदान किया है। उपनिवेशके मुख्य नगरों — न्यूकैसिल चार्ल्सटाउन और डंडीको कमसे कम अवधिकी सूचनापर बिलकुल खाली करना था और ब्रिटिशोंने जिनमें ब्रिटिश भारतीय भी शामिल थे ही स्थितिको महसूस किया और अपना सब माल-मत्ता छोड़कर मूक समर्पण-भावसे उन स्थानोंको छोड़ दिया। इनमें व्यापारी तथा अन्य सभी लोग शामिल थे। यह सब राज-सिंहासनके प्रति गहरी निष्ठा-भक्तिका द्योतक है। इसलिए, अगर यूरोपीय उपनिवेशियोंको सिर्फ इतना समझा दिया जाये कि जबतक भारतीयोंके प्रति न्याय नहीं किया जाता तबतक उनकी निष्ठा-भक्ति अधूरी ही रहेगी तो वे तदनुसार कार्य करनेमें चूकेंगे नहीं। साम्राज्यमें एकता की लहरके चिह्न दिखलाई पड़ रहे हैं — इसमें कोई भूल नहीं। वर्तमान युद्ध पूर्णतः ब्रिटेनवासियों तथा यूरोपीयोंके हितका है। उनकी भावनाएँ भारतीयोंकी भावनाओंकी तुलनामें नगण्य ठहरती हैं। जो स्वयंसेवक रानीजीके पक्षमें लड़नेके लिए रणभूमिपर गये हैं उनमें से अधिकतर वे हैं, जिन्होंने १८९७ में डर्बनके भारतीय-विरोधी प्रदर्शनमें जो अब काफी कुख्यात हो चुका है प्रमुख भाग लिया था। कुछ दिन पहले अंग्रेजी बोलनेवाले कुछ स्थानीय भारतीयोंने एक सभा करके निश्चय किया था कि चूंकि वे ब्रिटिश प्रजा हैं और इस हैसियतसे अधिकारोंकी माँग करते हैं इसलिए उन्हें अपने घरेलू मत-भेदको भुला देना चाहिए और, युद्धके न्यायान्यायपर उनका मत कुछ भी हो इस संकटके समय रणभूमिपर कुछ सेवा करनी चाहिए — भले ही वह सेवा कितनी ही छोटी क्यों न हो भले ही घायलोंको स्वयं-सेवक शिविरमें पहुँचानेका काम ही क्यों न करना पड़े। इन उत्साही युवकोंमें से अधिकतर मुंशी हैं सुख-सुविधामें पले हैं और कठिन परिश्रम करनेके बिलकुल आदी नहीं हैं। उन्होंने सरकार या साम्राज्य अधिकारियोंको अपनी सेवाएँ बिना वेतन और बिना शर्तके देनेका प्रस्ताव किया है। उन्होंने कहा है कि हम हथियार चलाना नहीं जानते और अगर हम रणभूमिपर कोई काम कर सकें — चाहे वह भिश्ती दलोंकी टहल ही क्यों न हो — तो इसे एक विशेषाधिकार मानेंगे। जिनको जरूरत पड़े उनके परिवारोंका पालन-पोषण करनेके लिए भारतीय व्यापारी आगे आ गये हैं। सरकारने बड़ा शिष्ट उत्तर देते हुए कहा है कि अगर अवसर आया तो वह प्रस्तावित सेवाओंका लाभ उठायेगी।

मुझे लगता है कि प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमका अध्ययन करनेका कष्ट न तो भारतीय जनताने किया और न जहाज-कम्पनियोंने ही। क्योंकि सरकारकी उपर्युक्त सूचनाके बावजूद

कृपया उन आत्मत्यागी महिलाओंको आश्वासन दिलाइए कि सहानुभूतिके अभावके कारण कोई भारतीय मदद करनेसे इनकार नहीं कर सकता था। हम सबको एक ही भावना प्रभावित कर रही है — अर्थात् साम्राज्यनिष्ठाकी भावना। और हम सब जानते हैं कि स्वयं-सेवकोंने और वे जिन्हें अपने पीछे छोड़ गये हैं उन्होंने क्या आत्मत्याग किया है। कुछ स्वार्थी लोगोंके अस्तित्वसे — अगर ऐसा अस्तित्व हो तो — मेरे नम्र मतानुसार, वे जिस वर्गके हों उस पूरे वर्गके बारेमें हमें अनुदारतासे नहीं सोचना चाहिए। और, आखिर, कुली भी तो उतने ही भारतीय हैं, जितने कि अरब।

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३२३) से।

५८. डर्बन निधिमें चन्दा

गांधीजीने अपने हाथसे लिखा हुआ नीचेका पर्चा लोगोंमें घुमाया था और चन्देकी माँग की थी।

डर्बन
जनवरी १७, १८९९

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले डर्बन महिला देशभक्त संघ (डर्बन विमेन्स पैट्रिऑटिक लीग) की निधिमें इसके द्वारा निम्नलिखित चन्दा देते हैं:

ई० अबूबकर आमद ऐंड ब्रदर्स	५– ५–०
एम० पी० मुहम्मद ऐंड कम्पनी	२– २–०
पारसी रुस्तमजी	५–१०–०
मो० क० गांधी	१– १–

[यहाँ तमाम अन्य हस्ताक्षर और हस्ताक्षरकर्ताओंके चन्देकी रकम दी गई है।]

मीजान १२– ०–३

चन्देकी मूल अंग्रेजी सूचीकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३२६) से।

५९. नेटालके भारतीय व्यापारी[1]

डर्बन
जनवरी १८ [१८९९]

दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिपर अबतक मैंने जो-कुछ लिखा है उसमें से कुछ भी उतना ध्यान देने योग्य नहीं है जितना कि इस पत्रमें मैं जो-कुछ लिखनेवाला हूँ उसपर दिया जाना चाहिए। नेटाल विधानमंडलने १८९७ में अशोभनीय हड़बड़ीमें और ऐसे समयपर, जब कि डर्बनकी भीड़का कोप शान्त भी नहीं हुआ था, चार अधिनियम पास किये थे। उनमें से एक वह था जो विक्रेता-परवाना अधिनियम (डीलर्स लाइसेंसेज ऐक्ट) के नामसे प्रसिद्ध है। इस अधिनियमसे इसके अन्तर्गत नियुक्त परवाना-अधिकारीको पूरा अधिकार मिल

१. देखिए पादटिप्पणी पृष्ठ ११।

जाता है कि वह थोक या फुटकर व्यापारका परवाना स्वेच्छानुसार दे या देनेसे इनकार कर दे — चाहे परवाना दूकानदारकी हैसियतसे व्यापार करनेके लिए हो या फेरीवालेकी हैसियतसे। उसके निर्णयपर वही नगर-परिषद या नगर-निकाय पुनर्विचार कर सकता है जिसे उसकी नियुक्ति करनेका अधिकार है। परवानोंके ऐसे मामलोंमें अपील-अदालतके तौरपर विचार करने वाली इन संस्थाओंके निर्णयके खिलाफ अपील करनेका कोई अधिकार नहीं रखा गया है। परवानेके बिना व्यापार करनेका दण्ड २ पौंड है। दण्ड न देनेपर मजिस्ट्रेटको अधिकार है कि वह अपराधीको जेल भेज दे। यह अधिकार इसी अधिनियमके अन्तर्गत नहीं बल्कि एक दूसरे कानूनके अन्तर्गत मजिस्ट्रेटको दिया गया है। वह कानून ऐसे मामलोंके लिए है जिनमें जेलकी सजा निश्चित रूपसे नहीं बताई गई है। आशा तो यह की गई थी कि न्याय-कार्य करनेवाली तमाम संस्थाओंके कार्यपर विचार करनेका जो अधिकार उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयको है उससे उनके वंचित किये जानेको सम्राज्ञीकी न्याय-परिषद अवैध करार दे देगी परन्तु, जैसा कि पाठकोंको याद होगा उस परिषदने उल्टा निर्णय दिया है। सर्वोच्च न्यायालयने भी यह निर्णय दिया है कि उक्त अधिनियमके मातहत दिये गये परवाने सिर्फ वैयक्तिक हैं और इसलिए वे मान लीजिए किसी कम्पनीके पास रह तो सकते हैं परन्तु यदि उस कम्पनीको साख (गुडविल) बेची जाये तो खरीदारको उस कम्पनीके परवानेपर शेष अवधितक व्यापार करनेका अधिकार नहीं होगा। इस तरह अधिनियमके अन्तर्गत कहीं कोई छिद्र छोड़ा ही नहीं गया है और न्यायिक व्याख्याने उससे प्रभावित होनेवाले पक्षोंके अधिकारोंको छोटेसे-छोटे दायरेमें निचोड़ दिया है। बेचारे भारतीयोंने प्रार्थनापत्र भेजे हैं — वा उपनिवेश-मंत्रीको और एक लॉर्ड चेम्बरलेनको जिनसे उन्होंने बहुत बड़ी आशा बाँध रखी है। वाइसरायके पाससे अभीतक कोई जवाब नहीं आया है और न आखिरी प्रार्थनापत्रका उपनिवेश-मंत्रीके पाससे ही। सिर्फ नेटाल-सरकारके पाससे इस आशयकी सूचना मिली है कि उपनिवेश-मंत्रालय उनके साथ पत्र-व्यवहार कर रहा है।

यह कहनेमें कोई जोखिम नहीं कि नेटाल-उपनिवेशमें १ से ज्यादा भारतीय दूकानों या दूकानदारोंके परवाने और लगभग ५ भारतीय फेरीवालोंके परवाने जारी हैं। ये परवानेवाले भारतीय समाजके इज्जतदार लोग हैं और उपनिवेशके उन ४ स्वतन्त्र भारतीयोंका प्रति निधित्व करते हैं जो उन ५ भारतीयों और उनके वंशजोंसे भिन्न हैं जिन्हें गिरमिटिया प्रथाके अन्तर्गत मजदूर बनाकर नेटाल लाया गया है। अधिनियमने अपने अमलमें बहुतसे भारतीय दूकानदारोंको बरबाद कर दिया है और सभीके मनमें बेचैनी पैदा कर दी है। कुछ मामलोंमें परवाना-अधिकारियोंने अधिनियमको अधिकसे-अधिक तोड़ा-मरोड़ा है और यह कहनेमें जरा भी अतिशयोक्ति न होगी कि उन्होंने अपने अधिकारोंका उपयोग मनमाने और अत्याचारी ढंगसे किया है। और परवाना-निकायोंने उनकी इन कार्रवाइयोंकी उपेक्षा की है और कभी-कभी तो उन्हें प्रोत्साहित किया है और यहाँतक कि हुक्म देकर उनसे मनचाहा काम कराया है। सिर्फ नये परवाने देनेसे इनकार ही किया गया हो सो बात नहीं पुराने परवानोंके हस्तान्तरणकी मनाही भी की गई है और पुराने परवानोंको नया नहीं कराने दिया गया बल्कि कुछ मामलोंमें अन्यायपूर्ण भाव बरताव भी जोड़ दिया गया है और पीड़ित पक्ष अपने आपको बिल्कुल निस्सहाय अनुभव करता रहा है। एक पुराना भारतीय अधिवासी मजदूरीकी मियादसे गुजरकर इज्जतदार व्यापारी बन गया था। वह एक जमानेसे जिसमें वर्षोंसे व्यापार कर रहा था। पर बादमें डंडी चला आया और उसने एक छोटी-सी जायदाद खरीद ली। उसने आशा की थी कि वह डंडीमें भारतीय बस्तीमें व्यापारका परवाना ले लेगा और कुछ भारतीय ग्राहकोंसे उसकी रोजी चलेगी। उसने परवानेकी अर्जी दी और बताया कि उसने लिखाई रखनेके

लिए एक यूरोपीय हिसाबनवीसको नियुक्त कर लिया है और अपनी इज्जतदारी और ईमानदारीके बारेमें ऐसे तीन सुप्रसिद्ध यूरोपीय व्यापारियोंके प्रमाणपत्र भी पेश किये जिनके साथ उसका कारोबार चलता था। परन्तु परवाना-अधिकारीने परवाना देनेसे इनकार कर दिया। मामलेकी अपील डर्बन नगर-परिषदके सामने की गई और अर्जदारके न्यायवादीने परवाना-अधिकारीसे इनकारीके कारण बतानेके लिए कहा। परवाना-अधिकारीने कारण बतानेसे इनकार कर दिया। नगर परिषदने परवाना-अधिकारीका फैसला बहाल रखा और वह उसे कारण बतानेके लिए बाध्य करनेको भी राजी नहीं हुई। जब कि मुकदमेकी सुनवाई हो ही रही थी अदालत (अर्थात्—नगर परिषद) परवाना-अधिकारी (जो प्रतिवादी था) और नगर-सॉलिसिटर सलाह-मशविरेके लिए एक निजी कमरेमें चले गये और लौटने पर, यह भूलकर कि वकीलकी दलीलें अभी सुनी जानेको हैं परिषदने अपना यह फैसला सुना दिया कि परवाना-अधिकारीका निर्णय बहाल रखा जाता है। अर्जदारके वकीलने इस अनियमितताकी ओर ध्यान खींचा और अदालतके सामने जिसने पहलेसे ही अपना विचार कायम किया था दलीलें करनेका स्वांग होने दिया गया। नतीजा कुछ भी बेहतर नहीं हुआ।

आग्रही अर्जदार अपने मामलेको सर्वोच्च न्यायालयके सामने ले गया। सर्वोच्च न्यायालयने अधिनियमके अन्तर्गत हस्तक्षेप करनेका अधिकार न होनेके कारण परिषदके फैसलेमें हस्तक्षेप करनेसे तो इनकार किया परन्तु सारी कार्रवाईको रद करके मामलेको इस निर्देशके साथ फिरसे सुनवाई करनेके लिए वापस भेज दिया कि अर्जदारको इनकारीके कारण जाननेका अधिकार है। स्थानापन्न मुख्य न्यायाधीशने कहा

> मालूम होता है कि इस मामलेमें परिषदकी कार्रवाई अत्याचारपूर्ण है। मेरा खयाल है कि दोनों मांगें [फैसलेकी नकल देने और कारण बतानेकी] नामंजूर करनेकी कार्रवाई अन्यायपूर्ण और अनुचित है।

प्रथम उपन्यायाधीश मेसनने —

> माना कि जिस मामलेकी अपील की गई है, उसकी कार्रवाई नगर-परिषदके लिए अपमानजनक है; और उन्होंने इस कड़ी भाषाका प्रयोग करनेमें कोई संकोच नहीं किया। इस परिस्थितिमें उनका खयाल था, यह कहना कि नगर-परिषदके सामने कोई अपील हुई थी, शब्दोंका दुरुपयोग करना है।

इस तरह, नगर-परिषदने फिरसे अपीलकी सुनवाई की और परवाना-अधिकारीसे इनकारीके कारण दिलवाये जो ये थे : डर्बनमें अर्जदारका किसी भी प्रकारका कोई हक नहीं है क्योंकि वह जिस किस्मका व्यापार करता है, उसकी नगरमें काफी व्यवस्था है। निर्णय वही रहा जो पहले मौकेपर दिया गया था और वह अभागा आदमी बिना परवानेके पड़ा है। मुझे मालूम हुआ है कि अब वह गरीब हो गया है क्योंकि उसे अपनी पूंजीपर गुजर करनी पड़ी है। साफ शब्दोंमें परवाना-अधिकारीका दिया हुआ कारण बिलकुल झूठा था क्योंकि उसके बाद बहुतसे यूरोपीयोंको परवाने दिये गये हैं और अर्जदारने एक ऐसी जगहके लिए अर्जी दी थी जिसे एक भारतीय दूकानदार छोड़ कर डर्बनसे चला गया था। एक दूसरे भारतीयने भी परवानेके लिए अर्जी दी थी। उसके बारेमें यह साबित हो चुका था कि वह पन्द्रह वर्षोंसे उपनिवेशमें रह रहा है उसका रहन-सहन शरीफाना है उपनिवेशके कई हिस्सोंमें उसका भारी व्यापार चलता है और अनेक यूरोपीय पेढ़ियोंमें उसकी अच्छी साख है। उसकी अर्जीका भी वही नतीजा रहा —इनकारी। इसका कारण पहली बार उसकी अपीलकी सुनवाईमें जबरदस्ती निकलवाया गया। परवाना अधिकारीने कहा

जहाँतक मैं समझता हूँ सन् १८९७ के कानून १८ को मंजूर करनेमें सरकारकी दृष्टि यह रही है कि कुछ वर्गोंके लोगोंके नाम जिन्हें आम तौरपर अवांछनीय माना जाता है परवाने देनेपर कुछ रोक रखी जाये। और चूँकि मुझे विश्वास है कि मैं यह माननेमें भूल नहीं कर रहा हूँ कि प्रस्तुत अर्जदार उन्हीं वर्गोंमें गिना जायेगा और चूँकि डर्बनमें व्यापार करनेका परवाना उसके पास कभी नहीं रहा है इसलिए परवाना देनेसे इनकार करना मैंने अपना कर्तव्य समझा है।

एक परिषद-सदस्यने परवाना-अधिकारीके निर्णयका समर्थन करते हुए कहा

कारण यह नहीं है कि अर्जदार या मकान अनुपयुक्त है बल्कि यह है कि अर्जदार एक भारतीय है। व्यक्तिगत रूपमें मैं समझता हूँ कि उसे परवाना देनेसे इनकार करना अन्याय है। परिषदके सामने परवाना माँगनेके लिए हाजिर होनेके खयालसे अर्जदार बहुत ही उपयुक्त व्यक्ति है।

एक अन्य परिषद-सदस्य कार्रवाइयोंमें भाग लेनेको तैयार नहीं थे क्योंकि

हमें (परिषद-सदस्योंको) जो गन्दा काम करनेको कहा गया है उससे मैं असहमत हूँ। अगर नागरिक चाहते हैं कि ये सब परवाने देना बन्द कर दिया जाये तो इस कामको करनेका एक साफ रास्ता मौजूद है वह है कि, विधानसभासे भारतीय समाजको परवाने देनेके खिलाफ एक कानून पास करवा लिया जाये। परन्तु, अपील सुननेवाली अदालतका काम करते हुए, जबतक विरोधमें मजबूत कारण न हों परवाने मंजूर किये ही जाने चाहिए।

अलबत्ता ऐसा हुआ नहीं क्योंकि परिषदमें भारतीय-विरोधी लोगोंकी बहुत प्रबलता थी। न्यूकैसिल नगर-परिषदने १८९८ में एकबारगी ही सारेके-सारे भारतीय परवाने छीन लिये। इसके बाद ही मामला सर्वोच्च न्यायालयके सामने और वहाँसे सम्राज्ञीकी न्याय-परिषदमें ले जाया गया था जिन्होंने फैसला दिया कि अधिनियमके अनुसार नगर-परिषदके निर्णयकी कोई अपील नहीं हो सकती। इस वर्ष उक्त नगर-परिषदने अधिकतर भारतीय परवाने दे दिये हैं, और उसकी प्रशंसामें इतना तो कहना ही होगा कि जब प्रश्न सम्राज्ञीकी न्याय-परिषदके विचाराधीन था उस समय उसने भारतीयोंको अपना कारोबार करते रहने दिया। डंडी स्थानिक निकाय (लोकल बोर्ड) के अध्यक्षने इसी तरहकी एक अपीलका विरोध करते हुए कहा कि वह अर्जदारको कुत्तेके बराबर मौका भी देना नहीं चाहता। इसके अलावा उसी निकायने गत वर्ष एक प्रस्ताव पास करके परवाना-अधिकारीको आदेश दिया कि वह जितने हो सकें उतने भारतीय परवानोंको रद कर दे। यह नेटालके सार्वजनिक अखबारोंके लिए भी असह्य हो उठा और एक इशारा किया गया कि निकाय बहुत ज्यादा आगे बढ़ रहा है। नतीजा एक हदतक सन्तोषजनक रहा और इस वर्ष परवाने दे दिये गये हैं हालाँकि यह शर्त लगा दी गई है कि अगले वर्ष उन्हीं मकानोंमें कारोबार करनेके परवाने नये नहीं किये जायेंगे। एक अन्य मामलेमें दो भारतीय व्यापारियोंने अपना कारोबार भारतीयोंको बेच दिया और परवानेको खरीदारोंके नामपर बदल देनेकी माँग की जो नामंजूर कर दी गई। अपील करनेपर स्थानिक निकायने वह निर्णय बहाल रखा। उप-निवेशके कुछ हिस्सोंमें गत वर्ष दिये गये परवाने इस वर्ष रोक लिये गये हैं। संक्षेपमें यह है उक्त अधिनियमका परिणाम। उपनिवेश-मन्त्रालय और नेटाल-सरकारके बीच हुए पत्र-व्यवहारके फलस्वरूप नेटाल-सरकारने विभिन्न स्थानिक संस्थाओंसे कहा है कि यदि वे अपने अधिकारोंका

उपयोग अधिक विवेकपूर्वक नहीं करेंगी — जिससे कि निहित-स्वार्थोंपर आँच न आये — तो पीड़ित पक्षोंको सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार दे दिया जायेगा। इस पत्रमें सरकारी तौरपर अन्यायको स्वीकार कर लिया गया है और उस उपायको भी मान लिया गया है जो भारतीयोंने सुझाया है। परन्तु नेटालकी तीनों म्यूनिसिपैलिटियाँ इस पत्रकी उतनी ही कद्र करती हैं जितनीके यह लायक है। वे नेटाल-सरकारकी ऐसी धमकीको शायद सुनती भी नहीं।

इस विषयमें न तो परवाना-अधिकारियोंका बहुत दोष है न नगर-परिषदोंका। वे तो सिर्फ शिकार बन गये हैं। ऐसी ही स्थितिमें पड़ा हुआ कोई भी जन-समुदाय वैसा ही करेगा जैसा कि नेटालके परवाना-अधिकारी और स्वाभाविक निकाय करते हैं। परवाना-अधिकारी या तो नगर परिषदोंके क्लार्क हैं या खजांची। इसलिए, जैसा कि मुख्य न्यायाधीशने उपर्युक्त मामलेमें कहा है, वे अपनी उन संस्थाओंसे स्वतन्त्र नहीं हैं जिनके सदस्य अपनी बारीमें अपने पदोंके लिए उन लोगोंकी शुभेच्छापर निर्भर करते हैं जो भारतीयोंके सीधे खिलाफ हैं। और उन संस्थाओंसे नेटालकी विधानसभाने कहा है,

> हम भारतीयोंको पूर्णतः आपकी दयापर छोड़ते हैं। बस आपके कामपर कोई अँगुली न उठाये फिर आप चाहें उन्हें अपने बीचमें ईमानदारीसे जीविका अर्जित करने दें या उन्हें बिना कोई मुआवजा दिये उससे वंचित कर दें।

इसलिए जबतक इस कानूनको जिसे नेटालके राजनीतिज्ञों तकको मिला कर सभी लोगोंने स्वतन्त्र व्यापार और ब्रिटिश संविधानके संचित सिद्धान्तोंके विपरीत माना है, उपनिवेशकी कानून-पुस्तकको कलंकित करने दिया जाता है, तबतक सरकार ऊपर बताये हुए पत्र जैसे कितने भी पत्र नियमोंको क्यों न भेजे शिकायत बनी ही रहेगी। भारतीय बहुत उचित बात कहते हैं : आप हमपर स्वच्छता-सम्बन्धी जो पाबन्दियाँ लगाना चाहें लगा दें; आप चाहें तो हमारा हिसाब-किताब अंग्रेजीमें रखायें; आपकी इच्छा हो तो हमपर ऐसी दूसरी कसौटियाँ लगा दें जिन्हें पूरा करनेकी हमसे उचित रूपमें अपेक्षा की जा सकती हो; परन्तु जब हम उन तमाम शर्तोंको पूरा कर दें तब हमें अपनी जीविका उपार्जित करने दीजिए, और अगर कानूनका अमल करानेवाले अधिकारी दखल दें तो हमें देशके सर्वोच्च न्यायाधिकरणके सामने अपील करनेका अधिकार दीजिए। इस रूपमें दोष दिखाना सचमुच बहुत कठिन है और उससे भी ज्यादा कठिन है — उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयके प्रति नेटाल-विधानमंडलके अविश्वासको समझना। परवाने देनेका यह प्रश्न एक सड़ा हुआ घाव है जिसको अच्छा करना ही होगा। यह सर्व भाग भारतीय आबादीपर असर करता है और काफी आधार दिखाई देते हैं कि अगर समयपर हस्तक्षेप न किया गया तो उसे बरबाद करके रहेगा। छोटे-छोटे भारतीय व्यापारियोंका भले ही धीरे-धीरे क्यों न हो निश्चित रूपसे मूलोच्छेद किया जा रहा है। इसका उनके पोषकों — बड़ी-बड़ी भारतीय पेढ़ियों और उनके आश्रितोंपर बहुत असर पड़ रहा है। भारतीय मकान-मालिक बहुत चिन्तित हैं क्योंकि उनके मकान कितने ही अच्छे क्यों न बनाये गये हों किरायेपर नहीं उठाये जा सकते। कारण यह है कि जब परवाने ही नहीं मिल सकते तो उन्हें ले कौन? वर्तमान वर्ष शीघ्र ही समाप्त हो रहा है और सारेके-सारे भारतीय चिन्ताके साथ राह देख रहे हैं कि अगले वर्ष उनके परवाने नये किये जायेंगे या नहीं। युद्धके कारण नेटाल खाली हुआ जा रहा है और यह कोई नहीं जानता कि व्यापार फिरसे कब शुरू होगा और लोग कबतक अपने घरोंको लौट सकेंगे। फिर भी भारतीय जनताको सावधान रहना चाहिए और लगातार कोशिश करके इस

[बु]राईको दूर करा देना चाहिए — इसके पहले कि बहुत देर हो जाये और नेटालके भारतीय [सि]र्फ दमनके कारण भारतमें अपनी आवाजको सुनवाई करानेमें भी समर्थ न रहें।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया (साप्ताहिक संस्करण) ९-१-१९ ।

६० पत्र : विलियम पामरको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
जनवरी २४, १८९९

सेवामें
श्री विलियम पामर
कोषाध्यक्ष
डर्बन विमन्स पैट्रिऑटिक लीग
डर्बन

प्रियवर,

डर्बन महिला देशभक्त संघ (डर्बन विमन्स पैट्रिऑटिक लीग) के कोषमें दान देनेवाले भारतीयोंने हमसे इस पत्रके साथ संलग्न चेकें आपको भेज देनेका अनुरोध किया है। ये चेकें डर्बनके भारतीय व्यापारियों और दूकानदारोंने इस कोषके लिए जो विशेष चन्दा दिया है उसके हिसाबकी हैं।

हम अनुभव करते हैं कि हमने इस कोषमें पर्याप्त चन्दा नहीं दिया परन्तु इस समय कई कारणोंसे हमारा आर्थिक सामर्थ्य पंगु हो गया है। जिन भारतीयोंने बोअर युद्धके स्वयंसेवकोंमें नाम लिखा लिया है उनको यदि सेवाके लिए बुला लिया गया तो उनके परिवारोंके निर्वाहका व्यय हमें उठाना पड़ेगा। उसके लिए हमने चन्दा इकट्ठा किया है। इस समय ट्रान्सवालसे और पानु द्वारा अधिकृत नेटालके अन्वस्नी जिलोंसे हजारों भारतीय शरणार्थी यहाँ आ गये हैं। उनको खिलाने पिलाने और बसानेके व्ययका हमपर बहुत भारी बोझ पड़ रहा है। तिसपर, इस समय हमारा कारोबार प्राय: खत्म हो गया है। तथापि हम जानते हैं कि जिन स्वयंसेवकोंने अपना जीवन इस उपनिवेश और साम्राज्यकी सेवाके लिए अर्पित कर दिया है और जिनको वे अपने पीछे यहाँ छोड़ गये हैं उन्होंने आत्मत्यागका एक ऐसा काम किया है जिसकी तुलनामें हमने जो-कुछ भी किया है वह सब तुच्छ सिद्ध होता है। इसलिए, हम जो छोटी-सी रकम इस पत्रके साथ भेज सके हैं वह हम सबके हेतु लड़नेवाले वीरोंके लिए हमारी हार्दिक सहानुभूति और सराहनाकी निशानी-मात्र है।

भवदीय,
नाज़र, आदि,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३२५९) व *इंडिया* २९-१-९९ से।

६१. तार : उपनिवेश-सचिवको

दिसम्बर ३, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

अस्पतालोंके लिए भारतीयोंकी बाबत प्रवासी-संरक्षक मुझसे मिले। काम कैसा है हमें कब चलना होगा तथा अन्य जरूरी बातें सरकार कृपा कर हमें बता दे तो मेरा खयाल है, जिन्होंने सेवाएँ अर्पित की हैं उनमें से अधिकतर जानेको तैयार हो जायेंगे।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३१२) से।

६२. तार : उपनिवेश-सचिवको

दिसम्बर ४, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
मैरित्सबर्ग

तार मिला। संरक्षकसे मुलाकातके बाद ही और यह देखकर कि १९ मजदूरोंको आपको भेजी गई भारतीय स्वयंसेवकोंकी सूची सरकारने संरक्षकको भेज दी है, मैंने स्वयंसेवकोंको सूचना दे दी कि मालूम होता है, सरकारको उनकी जरूरत पड़ेगी। उनसे यह भी कह दिया कि वे तैयार रहें और आपके अधिक निर्देशकी प्रतीक्षा करें। हमने पल-भरकी सूचनापर भी रवाना होनेका प्रबन्ध कर लिया है। मैं बता दूँ, हमसे जो हो सके वह सेवा बिना वेतन करनेको उत्सुक होनेके कारण हममें से कुछ डॉ० बूथके नीचे अस्पतालके कामकी तालीम ले रहे हैं। आपके आजके तारसे मालूम होता है कि सरकार सिर्फ मजदूर चाहती है। अगर तमाम इन्तजाम कर लेनेके बाद सरकार हमें स्वीकार नहीं करेगी तो बहुत बड़ी निराशा होगी। मजदूरोंमें भेजे उन्नीस नामोंके अलावा लगभग बीस और व्यक्ति स्वेच्छासे बिना वेतन सेवा करनेको तैयार हुए हैं। शीघ्र और अनुकूल उत्तरकी उत्सुकतासे प्रतीक्षा है।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३१३) से।

गांधीजी बोअर युद्धमें भारतीय आहत-सहायक दलके साथ बाँयेसे पाँचवें,
उनकी दाहिनी ओर डॉ० बूथ

गांधीजीका तमगा जो बोअर युद्ध-सम्बन्धी सेवाके लिए प्राप्त हुआ था।

(१) सीधी बाजू

(२) उलटी बाजू

६३ पत्र नेटालके धर्माध्यक्ष बेन्सको

[डर्बन
दिसम्बर ११ १८९९ के पूर्व]

श्रीमन्,

रेवरेंड डॉ बूथ सूचित करते हैं कि श्रीमानकी सम्मतिमें उन्हें भारतीय आहत-सहायक दलके साथ तबतक नहीं जाना चाहिए जबतक कि वे स्वयं जाना अत्यावश्यक न समझते हों और उनकी सच्ची आवश्यकता न हो। वे यह भी कहते हैं कि मैं अभी तो दलके साथ नहीं जाऊँगा परन्तु यदि सचमुच आवश्यकता हुई तो पीछे जा सकता हूँ।

मेरी नम्र सम्मतिमें डॉ बूथके बिना दलका काम चल ही नहीं सकता। उनका चिकित्सा ज्ञान हमारे लिए अधिकतम मूल्यवान है और अगर वे हमारे साथ नहीं गये तो हमारा लगभग ८ लोगोंका दल बिना किसी चिकित्सक-सलाहकारके रहेगा। वे आहत-सहायकोंके नायकोंसे परिचित हैं और उन्हें काम उन्होंने ही सिखाया है। इस कारण उनके मौजूद रहनेसे नायकोंमें आत्मविश्वास उत्पन्न हो जायेगा। परन्तु यहाँ मैं इस लाभकी चर्चा नहीं करता। इस बातसे तो श्रीमान भी सहमत होंगे कि जो घायल व्यक्ति इन नायकोंके सुपुर्द किये जायेंगे उनकी चिकित्सा करनेमें डॉ बूथसे अतुल सहायता मिलेगी। यहाँ तो उनकी जगह कोई और भी काम कर लेगा परन्तु आहत-सहायक शिविरमें उनके बिना स्थान खाली ही रहेगा।

मुझे मालूम हुआ है कि डॉ बूथ अभी मिशन छोड़कर नहीं जा रहे कमसे-कम जबसे चूनतक तो वे यहाँ हैं ही। इसलिए मुझे आशा है कि श्रीमान इस बातका विचार करके कि मैदानमें उनकी आवश्यकता अधिक समयतक नहीं पड़ेगी उन्हें जानेकी इजाजत दे देनेकी कृपा करेंगे।

श्रीमानका आज्ञाकारी सेवक,

एक मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ११७२–बी) से।

६४ तार प्रागजी भीमभाईको

[डर्बन]
दिसम्बर ११ १८९९

सेवामें
प्रागजी भीमभाई
वेरुलम

स्वयंसेवकोंसे कहिए तैयार हो जायें संभवतः कल रवाना हों।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १११८) से।

९५. तार : उपनिवेश-सचिवको¹

[डर्बन]
दिसम्बर ११, १८९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

मैं और श्री गांधी कल प्रातः नौ बजे आपकी सेवामें उपस्थित होंगे।

[बूथ]

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३३९) से।

९६. भारतीय आहत-सहायक दल

माननीय हैरी एस्कम्बने, जो १८९७ में नेटालके प्रधानमन्त्री थे, भारतीय आहत-सहायक दलके नेताओंको जोहानिसबर्गमें अपने घर आमन्त्रित किया था। यह दल उस दिन [illegible] जा रहा था। श्री एस्कम्बके घर [illegible] को गांधीजीने जो भाषण दिया था उसका पत्रोंमें छपा संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है।

[जोहानिसबर्ग]
दिसम्बर १३, १८९९

जब ट्रान्सवालने लड़ाई छेड़नेकी अन्तिम सूचना दे दी तब हममें से कुछ लोगोंने सोचा कि अब हमें आपसी मत-भेद भुला देने चाहिए, और क्योंकि हम सम्राज्ञीकी प्रजा होनेके नाते अपने अधिकारों और विशेष सुविधाओंका आग्रह रखते हैं इसलिए हमें कुछ करके दिखाना और अपनी राजभक्तिका प्रमाण पेश करना चाहिए। हथियार चलाना हममें से बहुत कम जानते हैं। यदि गोरखे और सिक्ख होते तो वे दिखला देते कि वे कैसा लड़ सकते हैं। हमने अर्थात् अंग्रेजी बोल सकनेवाले भारतीयोंने निश्चय किया कि हम उपनिवेश और साम्राज्य सरकारोंको अपनी सेवाएँ बिना किसी शर्तके और बिना कोई तनख्वाह लिये अर्पित करेंगे और जिस किसी हैसियतमें हमसे काम लिया जायेगा हम उसीमें काम करके उपनिवेशियोंको दिखला देंगे कि हम सम्राज्ञीकी योग्य प्रजा हैं। हमने एक सभा की। उसमें इतना उत्साह था कि वहाँ उपस्थित प्रायः प्रत्येक व्यक्तिने अपना नाम सेवा करनेके लिए तैयार व्यक्तियोंकी सूचीमें लिखवा दिया। उस सूचीमें से हमने उपयुक्त व्यक्तियोंका चुनाव किया है। मैंने डॉ० प्रिंससे प्रार्थना की कि आप सबकी डॉक्टरी जाँच कर लीजिए, जिससे पता चल जाये कि कितने लोग मैदानमें जाकर काम करनेके योग्य हैं। डॉ० प्रिंसने २५ को पास किया और हमने उनके नामोंकी सूची सरकारको भेज दी। वहाँसे जवाब मिला कि आपकी सेवा अभी स्वीकृत नहीं की जा सकती। इसके

१. दफ्तरी प्रतिसे मालूम होता है कि यह तार गांधीजीने लिखा और भेजा था।

कुछ ही समय बाद डॉ० बूथ द्वारा आहत-सेवाका वर्ग आरम्भ किया गया और हम प्रायः प्रति रात्रि उनके व्याख्यान सुनते रहे हैं। सरकारने हमें बतलाया था कि उसे ५ या ६ भारतीयोंको मैदानमें भेजनेकी आवश्यकता होगी और जब प्रवासियोंके संरक्षक मुझसे मिलने आये तब मैंने उन्हें बतलाया कि हम चलनेकी सूचना मिलनेपर पल-भरमें चलनेको तैयार हो जायेंगे और हमसे जो-कुछ भी करनेको कहा जायेगा सो हम बिना कोई मेहनताना लिये करेंगे। परन्तु उपनिवेश-सचिवने यह काम हमारे लायक नहीं समझा। जब डॉ० बूथको यह पता लगा तब उन्होंने उपनिवेश-सचिवको स्वयं लिखा और बतलाया कि हम क्या काम कर सकते हैं। इसके बाद डॉ० बूथने मेरे साथ पीटरमैरित्सबर्ग जानेकी कृपा की और वहाँ हम बिशप बेन्स और कर्नल जॉन्स्टनसे मिले। कर्नल साहबका खयाल हुआ कि हम आहत-वाहक भारतीयोंके नायकोंका काम बहुत अच्छा कर सकेंगे। तब हमारा स्वप्न सिद्ध हो गया और यद्यपि दुर्भाग्यवश हमें रण-क्षेत्रके अग्र-भागमें नहीं लगाया गया तथापि हमें आशा है कि हम अपना काम अच्छी तरह करेंगे। डॉ० बूथने जो-कुछ किया उसके लिए हम उनके परम कृतज्ञ हैं। उन्होंने भी अपनी सेवाएँ सरकारको मुफ्त दी हैं और वे आज रात हमारे साथ चल रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
नेटाल मर्क्युरी, १४-१२-१८९९

९७. पत्र : डोनोलीको

[दिसम्बर १४, १८९९ के बाद][1]

श्री डोनोली
जिला इंजीनियर

प्रिय महाशय,

आपकी आज्ञासे मुझे भारतीय आहत-सहायक दलके कामके लिए पहले दर्जेके ५, दूसरे दर्जेके २ और तीसरे दर्जेके २८ रेल-टिकट दिये गये थे। उनमें से मैं पहले दर्जेका १ और तीसरे दर्जेके १ टिकट बिना काममें लिये इस पत्रके साथ वापस कर रहा हूँ।

तीसरे दर्जेके जो १८ टिकट काममें आ गये उनमें से तीन पीटरमैरित्सबर्गसे काममें लाये गये थे क्योंकि तीन सेवक उस स्टेशनसे हमारे साथ शामिल हुए थे। उन तीनों टिकटोंके नम्बर क्रमशः ९११३, ९२९ और ९१८५ थे। यह बात पीटरमैरित्सबर्गके स्टेशन मास्टरको उसी समय उन सेवकोंके गाड़ीमें बैठनेसे पहले बतला दी गई थी।

गांधीजीके अपने हाथसे लिखे अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३५८) से।

1. गांधीजी १४ दिसम्बरकी रातको ८.१ बजे युद्ध-स्थलके लिए रवाना हुए थे।

९८ पत्र पी० एफ० क्लेरेन्सको

[डर्बन
दिसम्बर २७ १८९९]

श्री पी० एफ० क्लेरेन्स
सार्वजनिक निर्माण-विभाग
पीटरमैरित्सबर्ग

प्रियवर,

मैं इस पत्रके साथ पौंड [1] का हिसाब भेज रहा हूँ। इसे आप जाँच लीजिए और यदि यह ठीक हो तो इतनी रकमका चेक मुझे भेज देनेकी कृपा कीजिए।

मुझे यह पता नहीं कि पीटरमैरित्सबर्गके श्री मायाडने भी सेवकोंकी भरती करते हुए कुछ व्यय किया था या नहीं। मैंने उनको लिखा है और यदि श्री मायाडका भी कुछ पावना निकला तो मैं उसका हिसाब फिर भेज दूँगा।

आपका,

[संलग्न]

खर्चका स्मृतिपत्र

डर्बन
दिसम्बर २७ १८९९

भारतीय आहत-सहायक दल (ऐम्बुलैंस कोर) के अधीक्षक
(सुपरिंटेंडेंट) द्वारा अधिकृत खर्चका स्मृतिपत्र

१२ दिसम्बर	गाड़ीवानको दिये सुपरिंटेंडेंट आदिसे मिलने जानेके लिए	– ९ –
	स्वयंसेवकोंको तार दिये तैयार रहने और छोड़ने आदि के जानेके लिए	
	किराया पी० के० नायडूको दूसरे दर्जेका — आहत भरती करनेके लिए डर्बन आनेको	–११ –१
	तार श्री पिल्लेका उपनिवेश-सचिवको	– १ –१
	सात नायडुओंका किराया — वेरुलमसे डर्बन	– ४ – १
	किराया — स्वयंसेवकके नायडूके लिए वेरुलम जानेका	– १ – ९
	किराया — एक स्वयंसेवकके वेरुलमसे आनेका	– १ – २
	किराया — स्वयंसेवकके टोंगाटसे आनेका	– ५ –

१ देखिए अगला पृष्ठ।

६९. हिसाबका ब्योरा[1]

[दिसम्बर २७, १८९९ के बाद]

श्री गांधीके अपने वाहकोंको (दिया)
स्वयंसेवकों — अवैतनिक कार्यकर्ताओं — को नहीं।

संख्या	पद	नाम	अवधि	दिन संख्या	दर प्रति सप्ताह	रकम
१	रात-पहरेदार	गुलाबभाई	११ से २	८	२ /–	१ – ५ –
२	,,	देसाई प्रागजी दयाल	,,	,,	,,	१ – ५ –
४[2]	,,	डाह्याभाई मो	,,	,,	,,	१ – ५ –
५	,,	गोविन्दजी प्रेमजी	,,	,,	,,	१ – ५ –
६	,,	नागर रतनजी	,,	,,	,,	१ – ५ –
७		दुलभभाई प्रागजी	,,	,,	,,	१ – ५ –
८		डाह्याभाई भाणी	,,	,,	,,	१ – ५ –
९	वाहक	पेरवामल	,,	,,	,,	१ – २ – १
१		केवलराम	,,	,,	,,	१ – २ – १
११	,,	पेरमल	,,	,,	,,	१ – २ – १
						१२ – ११ – २
		हिसाब संलग्न — फुटकर बँटवारा				५ – ११ – ४
					पौं	१८ – ४ – ६
						१७ – १६ – १
		घटाया — दोनों पेरमलको आपने जो दिया				२ – ५ – ८
						१५ – ११ – २
		आपके चेकसे				१८ – ४ – ६
		शेष आपका पावना				२ – १३ – ४
						१८ – ४ – ६

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३५९) से।

१. यह ब्योरा गांधीजीके एक साथीने तैयार किया था। गांधीजीने उसमें पौं १–२–१ के समान हिसाबसे ११ वाहकोंका मिलनेवाला ब्योरा (देखिए, परिशिष्ट)। इसमें फुटकर बँटवारेके पौं ५–११–४ जोड़कर कुल पौं १८–४–६ की माँग की गई और यह रकम सरकारसे नकद ले ली गई। गांधीजीने हिसाबमें कुछ गलतियाँ निकालीं और उन्हें ठीक करके बताया कि पौं २–१३–४ की रकम सरकारको वापस करनी चाहिए। यह ब्योरा उसी हिसाबका है।

२. यह और इसके बादकी क्रम-संख्याएँ पूरकमें जोड़ दी गई थीं।

७० तार : कर्नल गालवेको

[डर्बन
जनवरी ७, १९०० से पूर्व][1]

सेवामें
कर्नल गालवे
पी० एम० ओ० का प्रधान कार्यालय
नेटाल

५ स्वतंत्र भारतीय युद्धकी समाप्ति पर्यन्त पूर्ववत् आहतोंकी सहायताका कार्य और सेनापतिकी आज्ञाका पालन करनेके लिए तैयार हैं। उन्होंने अपने नाम मेरे कार्यालयमें लिखा दिये हैं और वे सूचना मिलते ही चलनेको तैयार हैं। पहलेके अधिकतर नायक भी तैयार हैं। डॉ० बूथ ने छुट्टी ले ली है और वे पूर्ववत् चिकित्साधिकारीका कार्य करेंगे। हमारे प्रार्थना करनेपर वे सुपरिटेंडेंटके पदपर अथवा आप अन्य जिस किसी पदपर चाहें उसपर कार्य करना मान गये हैं। इस प्रकार अब हमारा दलनायक दल अपने-आपमें पूरा हो चुका है और यदि काम करनेकी कोई गुंजाइश हो तो वह काम आरम्भ करनेके लिए उत्सुक है।

गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३७२–सी नं० २)से।

[1] दिसम्बर १९, १८९९ को गांधीजीको एक पत्र मिला था (एस० एन० ३३१९)। उसमें पूछा गया था कि डोली (स्ट्रेचर) उठानेके अलावा काम किस वे कितने भारतीय दे सकते हैं। उसका उत्तर गांधीजीने उपर्युक्त तार द्वारा जनवरी, १९०० के पहले सप्ताहमें किसी दिन भेजा था। इस बीच उन्होंने एक उत्तर तार द्वारा (जो उपलब्ध नहीं है) उनके परामर्श सप्ताहमें भी भेजा था, जैसा कि उपर्युक्त (मूल) तारके प्रथम मसविदे (एस० एन० ३३७२–सी) में बताया गया है। जनवरी ७, १९०० को स्मरणपत्रमें उसका पुनर्लेख किया गया था।

७१. आहत-सहायक दल[1]

[डर्बन]
जनवरी १, १९

प्रिय महोदय,

स्पीयरमैनकी पहाड़ीपर, चौरस्तम युद्धके बीच हमारे भारतीय आहत-सहायक दलने जो कार्य किया उसके विषयमें लेख लिखनेके लिए आपका पत्र मिला। हममें से कुछको डोलियोंकी जिम्मेदारी लेनेके अतिरिक्त दलकी भोजन-व्यवस्थाका कार्य भी करना पड़ रहा था। इसलिए हमें सोने या खाने-पीनेतकका समय नहीं मिलता था। इसी कारण मैं अबतक आपके पत्रकी प्राप्ति भी स्वीकार नहीं कर सका। आशा है कि आप मेरी कठिनाई समझकर मुझे क्षमा करेंगे।

परन्तु मुझे समय मिल जाता तो भी मैं लेख न लिखता। कारण यह है कि कोलेंजोकी लड़ाईमें हमारे दलने जो कार्य किया था उसके विषयमें *ऐडवर्टाइज़र*में प्रकाशित मेरी टिप्पणियाँ देखकर, एक सम्मानित अंग्रेज मित्रने मुझे सलाह दी है कि भारतीय लोगोंको युद्धमें अपने कार्यके विषयमें स्वयं कुछ नहीं कहना चाहिए; उनका कर्तव्य मौन साधकर काम कर देने भरका है। उसके बादसे अबतक अपने कामके विषयमें प्रकाशनके लिए कुछ भी लिखनेके प्रलोभनसे मैं बचता आया हूँ।

आपका सच्चा,

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें एक मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३७२) से।

७२. पत्र: उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
फरवरी १२, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं देखता हूँ कि सैनिकों और स्वयंसेवकोंके लिए महारानीके पाससे प्राप्त चॉकलेट अब बाँटा जा रहा है। मुझे मालूम नहीं कि यह चॉकलेट उपनिवेशमें बने आहत-सहायक दलमें भी बाँटा जानेको है या नहीं। परन्तु हो या न हो भारतीय स्वयंसेवक-नायकों (करीब १)[2] ने जो आहत-

१. *नेटाल ऐडवर्टाइज़र*के सम्पादकके जनवरी १२, १९ के पत्रके उत्तरमें गांधीजीने उन्हें यह व्यक्तिगत पत्र लिखा था।

२. ये उपलब्ध नहीं हैं।

७१. आहत-सहायक दल[1]

[डर्बन]
जनवरी ३१, १९००

प्रिय महोदय,

स्पीयरमैनकी पहाड़ीपर, घोरतम युद्धके बीच हमारे भारतीय आहत-सहायक दलने जो कार्य किया उसके विषयमें लेख लिखनेके लिए आपका पत्र मिला। हममें से कुछको डोलियोंकी जिम्मेदारी लेनेके अतिरिक्त दलकी भोजन-व्यवस्थाका काम भी करना पड़ रहा था। इसलिए हमें सोने या खाने-पीने तकका समय नहीं मिलता था। इसी कारण मैं अबतक आपके पत्रकी प्राप्ति भी स्वीकार नहीं कर सका। आशा है कि आप मेरी कठिनाई समझकर मुझे क्षमा करेंगे।

परन्तु मुझे समय मिल जाता तो भी मैं लेख न लिखता। कारण यह है कि कोलेंसोकी लड़ाईमें हमारे दलने जो कार्य किया था उसके विषयमें ऐडवर्टाइज़रमें प्रकाशित मेरी टिप्पणियाँ देखकर, एक सम्मानित अंग्रेज मित्रने मुझे सलाह दी है कि भारतीय लोगोंको युद्धमें अपने कार्यके विषयमें स्वयं कुछ नहीं कहना चाहिए; उनका कर्तव्य मौन साधकर काम कर देने भरका है। उसके बादसे अबतक अपने कामके विषयमें प्रकाशनके लिए कुछ भी लिखनेके प्रलोभनसे मैं बचता आया हूँ।

आपका, आदि,

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें एक मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ३३७२) से।

७२. पत्र: उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
फरवरी १२, १९००

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं देखता हूँ कि सैनिकों और स्वयंसेवकोंके लिए महारानीके पाससे प्राप्त चॉकलेट अब बाँटा जा रहा है। मुझे मालूम नहीं कि यह चॉकलेट उपनिवेशमें बने आहत-सहायक दलमें भी बाँटा जानेको है या नहीं। परन्तु हो या न हो, भारतीय स्वयंसेवक-नायकों (करीब १) ने जो आहत-

१. नेटाल ऐडवर्टाइज़रके सम्पादकने जनवरी २९, १९०० के एक पत्रमें गांधीजीसे इन्हें का अभिलेख पत्र लिखा था।

२. ये उपलब्ध नहीं हैं।

सहायक दलमें बिना वेतन भरती हुए हैं मुझे आपसे प्रार्थना करनेको कहा है कि यदि सम्भव हो तो आप उनके लिए यह उपहार प्राप्त कर लें। इसकी वे बहुत कद्र करेंगे। और अगर जिन शर्तोंपर महारानीने कृपापूर्वक यह उपहार प्रदान किया है उनके अन्तर्गत यह चार टीम नायकोंमें वितरित किया जा सके तो वे इसे मूल्यवान निधिके समान संचित रखेंगे।[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक,

[अंग्रेजीसे] मो० क० गांधी

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १४६२/९९ ।

७३ तार उपनिवेश-सचिवको

[डर्बन]
मार्च १, १९००

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
[पीटरमैरित्सबर्ग]

भारतीय आहत-सहायक दलके भारतीय स्वयंसेवक-नायक चाहते हैं, मैं उनकी ओरसे जनरल बुलरकी शानदार जीत और लेडीस्मिथकी मुक्तिपर उन्हें आदरपूर्ण बधाई प्रेषित करूँ।

[अंग्रेजीसे] गांधी

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १६५/९९ तथा दफ्तरी प्रतिकी फोटो नकल (एस एन १४) से।

७४ सर वि० वि० हंटरकी मृत्युपर

डर्बन
मार्च ८, १९००

सर विलियम हंटर गुजर गये। इससे हमारा जबरदस्त खैरख्वाह दुनियासे चला गया। कांग्रेसकी ओरसे लेडी हंटरको समवेदनाका संलग्न तार भेजनेका विचार किया गया है। जो खर्च उठानेके पक्षमें हों वे कृपा कर सही कर दें।[2]

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें मूल अंग्रेजी तथा गुजराती परिपत्रकी फोटो-नकल (एस एन १४ २) से।

१ प्रार्थना इस आधारपर मंजूर कर दी गई थी कि इस उपहारका वितरण कमीशनके बिना भरती हुए अफसरों तथा सैनिकोंतक ही सीमित रखा गया है।

२. तारकी प्रति उपलब्ध नहीं है।

३ अंग्रेजी परिपत्रके नीचे उसका वही आशयका गुजराती परिपत्र दिया गया है। पत्रके अन्तमें प्रस्तावक सहमति देनेवाले चार प्रमुख कांग्रेस-कर्मियोंके हस्ताक्षर हैं।

कठिन परिस्थितियोंमें उसने दोपहरको कूच शुरू किया। १ बजेके लगभग स्टेशन पहुँचनेपर स्टेशन मास्टरने अधीक्षकको सूचना दी कि वह निश्चयपूर्वक नहीं बता सकता कि कब वाहन उनको मुहय्या कर सकेगा। वाहनसे मेरा मतलब खुले ठेलोंसे है जिनमें आदमी ठूँस-ठूँस कर भरे जानेवाले थे। यूरोपीय आहत-सहायक दलके आदमियों तथा भारतीयोंको ८ बजे शामतक स्टेशनके अहातेके आसपास रुकना पड़ा। बादमें यूरोपीयोंको एस्टकोर्टके लिए गाड़ीमें बिठा दिया गया और भारतीयोंसे कहा गया कि वे रातके लिए खुले मैदानमें जमे जायें और उसका जितना उत्तम उपयोग हो सके करें। थके-मांदे भूखे और प्यासे (स्टेशनपर अस्पतालके बीमारों और स्टेशनके अमलेको छोड़कर और किसीके लिए भी पानी उपलब्ध नहीं था) आदमियोंको अपनी भूख-प्यास बुझाने तथा थोड़ी देर आराम करनेके लिए साधन ढूंढ़ने थे। स्टेशनसे करीब आधा मील दूर एक तालाबसे वे गन्दा पानी ले आये और आधी रात होते-होते उन्होंने चावल पकाये। इस तरह जो-कुछ मिला उसे ही उन परिस्थितियोंमें सर्वोत्तम भोजन समझकर खानेके बाद वे सोना चाहते थे। परन्तु रातको धनरस पुलपरकी लगभग सारी ही घुड़सवार सेना यहाँसे गुजरी इसलिए उन लोगोंको बहुत कम आराम मिला। दूसरे दिन वे ठसाठस खुले डिब्बोंमें लाद दिये गये और ५ घंटेतक प्रतीक्षा करनेके बाद गाड़ी एस्टकोर्टके लिए रवाना हुई। वहाँ दलको भयानक आँधी-पानीमें धूप तथा हवाकी मार झेलते हुए, बिना किसी छायाके दो दिनतक पड़े रहना पड़ा। इसके बाद आदेश मिला कि इस दलको अस्थायी तौरपर भंग कर दिया जाये। दलने जो सेवाएँ की थी उन्हें धनरस युद्ध-स्थलमें अधिकृत रूपसे मान्यता प्रदान की थी।

जनवरी ७ को दलका पुनर्गठन हुआ और उसने एस्टकोर्टकी ओर कूच किया। इस बार उसने कुछ अच्छी परिस्थितियोंमें प्रस्थान किया था क्योंकि इस दलके भी सीधे ऊपर डोली-वाहकोंको भी रख लिये गये। किन्तु उनका असली काम पूरा पखवारा बीत जानेके बाद शुरू हुआ। इस बीच स्वयंसेवक और नायक अथक परिश्रमी डॉ० बूथकी देखरेखमें काम करनेका अभ्यास करते रहे। डॉ० बूथ भी नायकोंकी जैसी शर्तोंपर (अर्थात् बिना किसी पारिश्रमिकके) स्वेच्छया चिकित्सा-अधिकारीकी हैसियतसे इस दलके साथ आये थे। अभ्यासमें डोली-वाहकोंको सिखाया जाता था कि घायलोंको किस प्रकार उठाना तथा डोलीमें रखना और ले जाना चाहिए। उन्हें अत्यन्त ऊबड़ खाबड़ भूमिपर दूर-दूरतक ले जाया जाता था। यह प्रशिक्षण अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ। इसमें बहुत सख्ती भी कुछ नहीं था। चूँकि यह दल न्यूनाधिक रूपमें सैनिक अनुशासनके लिए इस प्रकार तैयार कर लिया गया था इसलिए जब उसे २ बजे रातको आदेश मिला कि वह ६ बजे फ्रीयर जानेके लिए गाड़ी पकड़े और १ घंटेके अन्दर डेरा उठाये सामान दो डिब्बोंमें लाद दे तथा स्टेशनकी ओर कूच कर दे तब उसे कोई कठिनाई अनुभव नहीं हुई। स्पीमरमैन छावनीके सदर मुकामपर पहुँचनेसे पहले फ्रीयरसे २५ मीलका सफर पैदल तय करना था। इस सफरके अनुभवों और कठिनाइयोंके बारेमें मैं *नेटाल विटनेसके* विशेष संवाददाताके शब्द ही उद्धृत करूँगा :

> तीसरे पहरके प्रारम्भमें क्षितिजपर घने बादल घिरने लगे थे और ११ बजे ऐसा लगा कि आँधी अभी आई। इसी बीच गाड़ियाँ आ गईं और उनमें सामान लाद दिया गया। प्रस्थान शुभ नहीं हुआ। स्टेशन तथा हमारे शिविरके बीचके पहले ही उतारमें हमारी खानेकी गाड़ी गहरी धँस गई। उसे वहाँसे निकालनेमें पूरा आधा घंटा खर्च हुआ। उसी समय भयानक आँधी आ गई। लगता था कि वह हमारी ओर आते हुए तूफानको हमसे दूर दक्षिणकी ओर धकेल रही है। तीन घंटेसे भी कम समयमें हवाने अचानक अपना रुख बदला और वह भयानक वेगसे तूफानको और साथ-साथ ओलोंको वापस ले आई। कुछ देरके बाद ओले तो जरूर बन्द हो गये लेकिन

गोलीबारकी सीमाके अन्दर काम नहीं किया जायेगा। सरकारने विभिन्न खेतों और बागोंके मालिकों (जिनके नियन्त्रणमें बहुतसे भारतीय मजदूर हैं) तथा भारतीय समाजके नेताओंकी क्रिया और प्रतिक्रिया तुरन्त हुई। तीन दिनसे भी कम समयमें १ से भी अधिक भारतीयोंका एक डोली-वाहक दल तैयार कर लिया गया। इन डोली-वाहकोंका पुरस्कार २ शिलिंग प्रति सप्ताह तय किया गया जबकि यूरोपीय डोली-वाहकोंको १५ शिलिंग प्रति सप्ताह मिलता था। यह उल्लेखनीय है कि नायकोंके शक्तिशाली दलने अत्यन्त शुभ परिस्थितियोंमें अपना कार्य प्रारम्भ किया। स्व. श्री एस्कम्बने जो किसी समय नेटालके प्रधानमन्त्री थे तथा जिन्होंने हीरक जयंतीके अवसरपर हुए उपनिवेशीय प्रधानमन्त्रियोंके सम्मेलनमें उपनिवेशका प्रतिनिधित्व किया था अपने घरमें स्वयंसेवकोंका स्वागत किया। इस अवसरपर डर्बनके मेयर, जोहानिसबर्ग डीलरके श्री पेकमैन तथा अन्य मान्य-मान्य स्त्री-पुरुष निमन्त्रित किये गये थे। श्री एस्कम्बने अपने भाषणमें — जो कि उनका अन्तिम सार्वजनिक भाषण था — उनके प्रति प्रोत्साहक शब्द कहे और खुले हृदयसे अपने उद्गार व्यक्त किये कि भारतीय समाज अपने ढंगसे वफादारीके साथ उपनिवेश तथा साम्राज्यकी जो सेवा कर रहा है उसे नेटाल भुला नहीं सकता। मेयरने भी अपने भाषणमें इसी आशयकी बातें कहीं। बादमें उसी सन्ध्याको डर्बनके श्री रुस्तमजीने मोर्चेपर जानेवाले नायकोंके सम्मानमें एक भोज दिया। इस अवसरपर विभिन्न वर्गोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले सभी प्रमुख भारतीयोंने एक ही मेजपर भोजन किया। यह आहत-सहायक दल १५ दिसम्बरको ११ बजे शामको चिवेली पहुँचा। जैसे ही ये लोग वहाँ गाड़ीसे उतरे, डोली-वाहकोंको रेडक्रासके चिह्न दे दिये गये और उन्हें हुक्म मिला कि वे मोर्चेके अस्पतालको कूच करें। अस्पताल वहाँसे ६ मीलसे भी अधिक दूर था। जिन अवस्थाओंमें इस दलने काम किया वे सम्भवतः साधारणसे कुछ अधिक कठोर थीं। जहाँ वे जाते उन्हें आवश्यकताके अनुसार महीने या पखवारे भरकी भोजन-सामग्री अपने साथ ले जानी पड़ती। इसमें पकानेकी लकड़ी भी शामिल थी। इसके लिए पहले-पहल सामान-गाड़ी या पानीकी गाड़ी कुछ भी उपलब्ध नहीं थी। चिवेली जिला अत्यन्त सूखा प्रदेश है और यहाँ आसानीसे पानी नहीं मिलता। नेटाल भरमें सड़कें ऊबड़-खाबड़ तथा कम-ज्यादा पहाड़ी हैं। मोर्चेके अस्पतालमें पहुँचनेपर हमने कोलेंजोके युद्धके बारेमें सुना। हमने देखा कि बीमारोंको ले जानेवाली गाड़ियाँ तथा यूरोपीय डोली-वाहक मोर्चेसे घायलोंको उठाकर मोर्चेके अस्पतालमें ला रहे हैं। इस सबसे दलके स्वयंसेवकों तथा नायकोंको स्थितिकी पूरी जानकारी हो गई। इससे पहले कि तम्बू डाले जा सकें (मेरा मतलब है नायकोंके लिए — डोली-वाहकोंको तो जैसे भी बने खुलेमें सोना पड़ता था और कुछके पास तो कम्बल भी नहीं थे) या लोग कुछ खा-पी सकें चिकित्सा-अधिकारीने चाहा कि ५ घायलोंको चिवेली स्टेशन पहुँचा दिया जाये। ११ बजे राततक सभी घायल जिन्हें कि चिकित्सा-अधिकारी तैयार कर सका आदेशानुसार चिवेली पहुँचा दिये गये। उसके बाद ही दलको भोजन मिल सका। इसके बाद दलके अधीक्षकने चिकित्सा-अधिकारीके पास जाकर और डोलियाँ ले जानेका प्रस्ताव रखा किन्तु उस धन्यवाद देकर कहा गया कि सुबह ६ बजे आदमियोंको तैयार रखा जाये। उस समयसे लेकर दोपहरतक आदमियोंने १ डोलियाँ ढोईं। अपने कामको लौटते समय उन्हें आदेश मिला कि वे तम्बू उठाकर तुरन्त चिवेली स्टेशन चले जायें और वहाँसे एस्टकोर्टकी गाड़ी पकड़ें। बेशक यह पीछे हटना था। देखकर आश्चर्य होता था कि किस प्रकार घड़ीकी नियमितताके साथ १५, से भी अधिक व्यक्तियोंने अपना शिविर उठाकर भारी तोपों तथा परिवहनके साथ प्रस्थान किया। उनके पीछे टूटे कनस्तरों तथा खाली बक्सोंके अलावा और कोई चीजें नहीं छूटीं। कूचके लिए वह दिन बेहद गर्म था। नेटालका यह भाग पेड़ और पानी दोनोंसे खाली है। इस प्रकारकी

कठिन परिस्थितियोंमें दलने दोपहरको कूच शुरू किया। ३ बजेके लगभग स्टेशन पहुँचनेपर स्टेशन मास्टरने अधीक्षकको सूचना दी कि वह निश्चयपूर्वक नहीं बता सकता कि कब वाहन उनका मुहय्या कर सकेगा। वाहनसे मेरा मतलब खुले ठेलोंसे है जिनमें आदमी ठूँस-ठूँस कर भरे जानेको थे। यूरोपीय आहत-सहायक दलके आदमियों तथा भारतीयोंको ८ बजे शामतक स्टेशनके अहातेके आसपास रुकना पड़ा। बादमें यूरोपीयोंको एस्टकोर्टके लिए गाड़ीमें बिठा दिया गया और भारतीयोंसे कहा गया कि वे रातके लिए खुले मैदानमें पड़े रहें और उसका जितना उत्तम उपयोग हो सके करें। थके-मांदे भूखे और प्यासे (स्टेशनपर अस्पतालके बीमारों और स्टेशनके अमलेको छोड़कर और किसीके लिए भी पानी उपलब्ध नहीं था) आदमियोंको अपनी भूख-प्यास बुझाने तथा थोड़ी देर आराम करनेके लिए साधन ढूँढ़ने थे। स्टेशनसे करीब आधा मील दूर एक तालाबसे वे गन्दा पानी ले आये और आधी रात होते-होते उन्होंने चावल पकाये। इस तरह जो-कुछ मिला उसे ही उन परिस्थितियोंमें सर्वोत्तम भोजन समझकर खानेके बाद वे सोना चाहते थे। परन्तु रातको अगरतन दुकरकी लगभग सारी ही घुड़सवार सेना वहाँसे गुजरी इसलिए उन लोगोंको बहुत कम आराम मिला। दूसरे दिन वे ठसाठस खुले डिब्बोंमें लाद दिये गये और ५ घंटेतक प्रतीक्षा करनेके बाद गाड़ी एस्टकोर्टके लिए रवाना हुई। वहाँ दलको भयानक आँधी-पानीमें धूप तथा हवाकी मार झेलते हुए, बिना किसी छायाके दो दिनतक पड़े रहना पड़ा। इसके बाद आदेश मिला कि इस दलको अस्थायी तौरपर भंग कर दिया जाये। दलने जो सेवाएँ की थीं उन्हें जनरल बुलर-मरेने अधिकृत रूपसे मान्यता प्रदान की थी।

जनवरी ७ को दलका पुनर्गठन हुआ और उसने एस्टकोर्टकी ओर कूच किया। इस बार उसने कुछ अच्छी परिस्थितियोंमें प्रस्थान किया था क्योंकि इस बारके भी सौसे ऊपर डोली-वाहकोंको भी तम्बू दिये गये। किन्तु उनका असली काम पूरा पखवारा बीत जानेके बाद शुरू हुआ। इस बीच स्वयंसेवक और नायक लगभग परिश्रमी डॉ० बूथकी देखरेखमें काम करनेका अभ्यास करते रहे। डॉ० बूथ भी नायकोंकी जैसी शर्तोंपर (अर्थात् बिना किसी पारिश्रमिकके) स्वेच्छया चिकित्सा-अधिकारीकी हैसियतसे इस दलके साथ आये थे। अभ्यासमें डोली-वाहकोंको सिखाया जाता था कि घायलोंको किस प्रकार उठाना तथा डोलीमें रखना और ले जाना चाहिए। उन्हें अत्यन्त ऊबड़ खाबड़ भूमिपर दूर-दूरतक ले जाया जाता था। यह प्रशिक्षण अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ। इसमें बहुत तत्त्व भी कुछ नहीं था। चूँकि यह दल न्यूनाधिक रूपमें सैनिक अनुशासनके लिए इस प्रकार तैयार कर लिया गया था इसलिए जब उसे २ बजे रातको आदेश मिला कि वह ६ बजे फ्रीयर जानेके लिए गाड़ी पकड़े और १ घंटेके अन्दर डेरा उठाये सामान दो डिब्बोंमें लाद दे तथा स्टेशनकी ओर कूच कर दे तब उसे कोई कठिनाई अनुभव नहीं हुई। स्पीयरमैन छावनीके सदर मुकामपर पहुँचनेसे पहले फ्रीयरसे २५ मीलका सफर पैदल तय करना था। इस सफरके अनुभवों और कठिनाइयोंके बारेमें मैं *नेटाल विटनेस*के विशेष संवाददाताके शब्द ही उद्धृत करूँगा

> तीसरे पहरके प्रारम्भमें क्षितिजपर घने बादल घिरने लगे थे और ११ बजे ऐसा लगा कि आँधी अभी आई। इसी बीच गाड़ियाँ आ गईं और उनमें सामान लाद दिया गया। प्रस्थान शुरू नहीं हुआ। स्टेशन तथा हमारे शिविरके बीचके पहले ही उतारमें हमारी जानेकी गाड़ी गहरी धँस गई। उसे वहाँसे निकालनेमें पूरा आधा घंटा खर्च हुआ। उसी समय भयानक आँधी आ गई। लगता था कि वह हमारी ओर आते हुए तूफानको हमसे दूर दक्षिणकी ओर उड़ा रही है। तीन घंटेसे भी कम समयमें हवाने अचानक अपना रुख बदला और वह भयानक वेगसे तूफानको और साथ-साथ ओलोंको वापस ले आई। कुछ देरके बाद ओले तो अकस्मात बन्द हो गये लेकिन

मूसलाधार पानी बराबर बरसता रहा। अन्तमें निर्णय हुआ कि रुका जाये और गाड़ियोंकी प्रतीक्षा की जाये। वर्षा अब बन्द हो गई थी — यद्यपि बादल बता रहे थे कि अभी और वर्षा होगी — इसलिए बबूलोंके चूल्हे बनाये गये जिनपर हमने अपने भीगे कपड़ोंको सुखानेकी कोशिश की (अधिकतर बिना सफलताके)। ८ बजे जब कि हम कुछ-कुछ सूख गये थे और आगके प्रभावसे हममें ताजगी आ रही थी अकस्मात् मूसलाधार वर्षा पुनः प्रारम्भ हो गई। सारे समय जोरोंकी हवा चलती रही और असुविधाके लिहाजसे मुश्किलसे ही इससे बदतर हालत हमारी हो सकती थी। आगेकी गाड़ी इतनी बढ़कर इकट्ठी हुई बालूके ढेरमें गहरी धँस गई जिससे बैलों (१२) का संयुक्त बल भी उसे निकालनेमें बिलकुल असमर्थ रहा। दूसरी सुबह ५ डोलियाँ अस्थायी अस्पतालके साथ निकल गईं। यहाँ मुख्य चिकित्सा-अधिकारीके सचिव मेजर बेप्टीने नायकोंको कहला भेजा कि यह उनकी इच्छापर निर्भर है कि वे डोलियोंको नदीके उस पार करीब दो मीलकी दूरीपर स्थित स्पियोन कोपके आधार-शिविरमें ले जायें या नहीं; क्योंकि वह स्थान बोअर गोलियोंकी पहुँचके भीतर है, और यह भी निश्चयसे नहीं कहा जा सकता कि वे एक-दो गोले नावके पुलपर भी न फेंक देंगे। यह भूमिका इसलिए बाँधी गई कि जैसा मैंने ऊपर बताया है लोगोंसे कहा गया था उन्हें गोली-बारकी सीमासे बाहर काम करना पड़ेगा। किन्तु स्वयंसेवक तथा नायक सभी खतरेकी परवाह न करके आधार शिविरमें जाने तथा वहाँका काम अपने हाथमें लेनेके लिए बिलकुल तैयार थे। शाम तक करीब सभी घायल स्थायी अस्पतालमें पहुँचा दिये गये। डोली-वाहकोंको अस्थायी अस्पतालसे अक्सर तीन या चार बार आधार शिविर जाना पड़ता था। एकके बाद दूसरे अस्पताल — मुख्यतः स्थायी अस्पताल — को लगातार खाली करनेमें पूरे तीन सप्ताह लग गये। इस बीच ५ चक्कर फ्रीयरके लगाने पड़े। तीन बार तो वाहकोंको एक दिनमें पूरे २५ मील चलकर घायलोंको ले जाना पड़ा और दो बार उन्होंने स्प्रिंगफील्डके निकट दुबेला ब्रिज या उसके नजदीक यूरोपीय डोली-वाहकोंसे घायलोंको लेकर पहुँचाया।

दलको कुछ ऊँचे अफसरोंको ले जानेका भी सम्मान मिला। मेजर जनरल वुडगेट उनमें से एक थे। जब-जब इनके पाँववाले छबीले कदमवाले डोली-वाहक चिलचिलाती धूपमें कठिन मार्ग पार कर पूरे २५ मील घायलोंको उठाकर ले गये तब-तब प्रत्येक बार, मुझे आम कहा गया कि यह करामात सिर्फ वे ही कर सकते थे। *नेटाल विटनेस* का विशेष संवाददाता लिखता है

> एक आदमीके लिए जिसके पास अपना शरीर और अपने कपड़ोंके सिवा और कुछ भी बोझ न हो ५ दिनमें १ मील चलना चलनेके लिहाजसे काफी अच्छा माना जा सकता है। किन्तु जब आदमियोंको उससे आधी दूरीतक भी घायलोंको डोलियोंपर उठा कर ले जाना हो और शेष मार्गका अधिकतर भाग भारी सामानके साथ पार करना हो तब यह पैदल चलना मेरे खयालमें अत्यन्त सराहनीय कार्य माना जायेगा। इसी प्रकारका कठिन कार्य हाल ही में भारतीय आहत-सहायक दलने किया है और इस कार्यपर कोई भी व्यक्ति गर्व कर सकता है।

इस प्रकार सम्मानित तथा अपना कर्तव्य पूरा कर देनेके विचारसे सन्तुष्ट दलको दुबारा अस्थायी तौरपर भंग कर दिया गया। किन्तु हालकी घटनाएँ बताती हैं कि शायद इस दलकी सेवाओंकी पुनः आवश्यकता नहीं होगी।

भारतीय व्यापारियोंने वाहकोंके लिए बड़ी मात्रामें सिगरेट, चुरुट पाइप तथा तम्बाकू — सभी चीजें नायकोंको भेजी थी और ये सब वाहकोंमें खुले हाथों बाँटी गई थीं। और, बेशक इन चीजोंका खूब स्वागत किया गया विशेषकर इसलिए कि शिविरमें या शिविरके आसपास सिग रेट आदि कोई भी चीज नहीं मिल सकती थी। नायक और डोली-वाहक वाहकोंको उनके सफरपर भली भाँति सुरक्षित पहुँचा देनेसे ही सन्तुष्ट नहीं थे बल्कि लम्बे मार्गपर जहाँ भी वे ठहरते खुद अपने आरामकी परवाह न करके भी वाहकोंकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए कुछ भी उठा नहीं रखते थे। उदाहरणके लिए, वे उन्हें चाय पीने और फल खानेमें मदद देते — प्राय अपने ही पैसों या अपनी ही राशनसे। भारतीय समाजने युद्धमें केवल यही भाग अदा नहीं किया। सभी नायक जो बिना वेतनके गये थे अपनी अनुपस्थितिमें अपने आश्रितोंका निर्वाह करनेमें समर्थ नहीं थे। इसलिए भारतीय व्यापारियोंने एक निधि खोली जिससे उन नायकोंके परिवारोंको सहायता दी गई, जिन्हें इसकी आवश्यकता थी। और स्वयंसेवकोंको उपकरणोंसे लैस करनेमें भी उन्होंने कम खर्च नहीं किया। देशभक्तिकी लहरके साथ अधिक प्रभावपूर्ण ढंगसे ऐक्य स्थापित करने तथा यह दिखानेके लिए कि आम खतरेके समय वे अपने मतभेदोंको भुला देनेमें समर्थ हैं उन्होंने एक स्थानिक संगठन डर्बन महिला देशभक्त संघ (डर्बन विमेन्स पैट्रिऑटिक लीग) को जो कि घायल सैनिकों तथा स्वयंसेवकोंको चिकित्सा सुविधाएँ देनेके लिए बनाया गया था १५ पौंडकी एक भारी राशि चन्देमें दी। इन स्वयंसेवकोंमें से कुछ तो अत्यन्त उग्र भारतीय-विरोधी उपनिवेशी हैं। कुछ भारतीय महिलाएँ भी आगे आईं। उन्होंने भी इसी उद्देश्यसे भारतीय व्यापारियों द्वारा दिये गये कपड़ेके तकियोंके गिलाफ तथा रूमाल तैयार किये। नैटाल मर्क्युरीने चन्देके बारेमें इस प्रकार लिखा है

> स्त्रियोंकी देशभक्त-निधिमें चन्देके इस दानसे जो विशेष रूपसे रणभूमिपर बीमार और घायल स्वयंसेवकोंकी सेवाके लिए दिया गया है भारतीयोंकी भावनाओंकी बहुत ही प्रशंसाके योग्य और सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। उनके विचारसे भारतीय शरणार्थियोंके विशाल समूहको ही सहायता दे देना — जैसा कि वे खुले हाथों कर रहे हैं — काफी नहीं है; बल्कि उन्हें हमारा खयाल है, सम्राज्ञीके प्रति और जिस देशमें आकर वे रह रहे हैं उसके प्रति अपनी भक्तिके प्रतीकके रूपमें यह अतिरिक्त दान देना जरूरी मालूम हुआ है। हमारी आबादीका वह अंश — जिसकी ओरसे अक्सर बहुत कम बोला जाता है — जिस सच्ची भावनासे अनुप्राणित है उसे ऐसे राजभक्ति-प्रदर्शनसे ज्यादा भली भाँति और कोई भी बात व्यक्त नहीं कर सकती।

भारतीयोंने हजारों भारतीय शरणार्थियोंके निर्वाहका भार पूरी तरह अपने कन्धोंपर ले लिया है। ये शरणार्थी न केवल ट्रान्सवालके हैं बल्कि नेटालके उन ऊपरी जिलोंके भी हैं जो कि अस्थायी तौरसे दुश्मनके हाथमें हैं। इस तथ्यने उपनिवेशके मस्तिष्कको इस तरह प्रभावित किया है कि डर्बनके मेयरने उसे निम्न शब्दोंमें सार्वजनिक रूपसे स्वीकार किया है

> हम सब भली भाँति जानते हैं कि भारतीय राष्ट्रके लोगोंमें से अनेकको मजबूरन अपने स्थान छोड़कर शरणार्थियोंके रूपमें यहाँ आना पड़ा है। वे बड़ी संख्यामें आये हैं और भारतीयोंने स्वयं ही उनका खर्च उठाया है। इसके लिए मैं उन्हें हृदयसे धन्यवाद देता हूँ।

इस अवसरपर इसका अपना एक विशेष महत्त्व है। संघकी केन्द्रीय समितिने तार दिया है कि उसने समर्थ शरीरवाले यूरोपीय शरणार्थियोंको सहायता देना बन्द कर दिया है और उसे केवल महिलाओं तथा अपंगोंतक ही सीमित रखा है। यह मामला डर्बनकी शरणार्थी सहायता

समितिके आर्थिक साधनोंको खूब निचोड़ रहा है। यहाँपर सैनिकोंके लिए सहानुभूतिके कुछ व्यक्तिगत उदाहरणोंका उल्लेख करना अनुचित नहीं होगा। कहा जाता है कि एक भारतीय महिलाने जो प्रतिदिन फल बेचकर अपना निर्वाह करती है, सैनिकोंके डर्बन बन्दरगाहपर उतरनेपर अपनी टोकरीका सारा माल यह कहते हुए एक टॉमीके ठेलेमें उँडेल दिया कि आज देनेका मेरे पास इतना ही है। हमें यह नहीं बताया गया कि उस उदार हृदयवाली महिलाने उस दिन भोजन कहाँसे प्राप्त किया। इसी प्रकार कहा जाता है कि बहुत-से भारतीयोंने अत्यन्त उत्साहित होकर नेटालके योद्धाओंपर सिगरेट तथा अन्य स्वादिष्ठ वस्तुओंकी वर्षा की। जब किम्बर्ले और लेडीस्मिथके मुक्त होनेकी सूचना तार द्वारा सर्वत्र फैलाई गई, तब भारतीयोंने अपनी दूकानोंको सजानेके लिए देशभक्तिके उत्साहमें यूरोपीयोंसे स्पर्धा की। उन्होंने १४ [illegible]को एक सभा भी की। उसकी अध्यक्षता करनेके लिए उत्तरदायी सरकारके अधीन नेटालके सर्वप्रथम प्रधानमन्त्री माननीय सर जॉन रॉबिन्सन के० सी० एम० जी० को आमन्त्रित किया गया और उन्होंने अत्यन्त अनुग्रहके साथ आमन्त्रण स्वीकार कर लिया। इस सभामें उपनिवेशके सभी भागोंसे १   से भी अधिक भारतीय और ६ से भी अधिक प्रमुख यूरोपीय शामिल हुए थे।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया (साप्ताहिक संस्करण) ११-६-१९ ।

७८ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मार्च १७, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं इसके साथ परमश्रेष्ठ गवर्नरके विचारार्थ डर्बनके अमद अब्दुल्लाकी बीबी आवाका प्रार्थनापत्र भेज रहा हूँ। उसने अपने पतिपर, जो इस समय डर्बनकी सेंट्रल जेलमें कैदकी सजा भोग रहा है, रहम करनेकी प्रार्थना की है। मेरा खयाल है कि इस आदमीको रिहा कर देनेका अर्थ इस स्त्रीकी इज्जतको बचा लेना होगा। यह अकेली है, जवान है और कुछ [illegible]में पाली-पोसी गई है, इसलिए प्रलोभनोंमें पड़ जानेके खतरेमें है, जो इसे हमेशाके लिए बरबाद कर सकते हैं।

इसने लेडीस्मिथकी मुक्तिके अवसरकी दोहाई दी है। उसे इस मामलेमें दयाके अधिकारका प्रयोग सार्थक करनेके लिए पर्याप्त माना जा सकता है।[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी० एस० ओ० ८१४६/१९ ।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. [illegible] ... कर दी गई थी; देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको," जून ११, १९ ।

७९ ब्रिटिश सेनापतियोंका अभिनन्दन

[मार्च २८, १९   से पूर्व]

सेवामें
सम्पादक
नेटाल विटनेस

प्रिय महोदय

मैं इसके साथ जनरल लॉर्ड रॉबर्ट्स, जनरल सर रेडवर्स बुलर और जनरल सर जॉर्ज व्हाइटके पाससे तार द्वारा प्राप्त सन्देशोंकी नकलें प्रकाशनार्थ भेज रहा हूँ। ये सन्देश गत १४ तारीखको डर्बनमें हुई भारतीयोंकी सभाके अध्यक्षकी हैसियतसे माननीय सर जॉन रॉबिन्सन के सी एम जी को प्राप्त हुए हैं। ये अभिनन्दनके उन प्रस्तावोंके उत्तरमें हैं जो सभामें पास हुए थे और सभाके आदेशसे अध्यक्षने नामांकित सेनापतियोंको भेजे थे। उपर्युक्त प्रस्तावोंकी नकलें भी साथ भेज रहा हूँ।

आपका,
मो क० गांधी
अवैतनिक मन्त्री ने भा कां

[प्रस्तावादि संलग्न]

प्रस्ताव १ : सम्राज्ञीके भारतीय प्रजाजनोंकी यह सभा दक्षिण आफ्रिकी फौजोंके प्रधान सेनापति परम माननीय फील्ड मार्शल फ्रेडरिक स्ले कन्दहारके लॉर्ड रॉबर्ट्स वी सी के पी जी सी बी जी सी एस आई जी सी आई ई का आदरपूर्वक अभिनन्दन करती है। उन्होंने किम्बरलेको मुक्त कराया एक घमासान युद्धके बाद जनरल क्रोंज तथा उनकी टुकड़ीको गिरफ्तार किया और इस प्रकार विजयश्रीका मुख ब्रिटिश फौजोंकी ओर फेर दिया। इस सभाको यह अंकित करते हुए भी हर्ष होता है कि दक्षिण आफ्रिकी सेनाओंको विजयके बाद विजयकी ओर ले जानेवाले वही कन्दहारके विजेता हैं जो एक समय भारतीय सेनाओंके सेनापति थे।

प्रस्ताव २ : सम्राज्ञीके भारतीय प्रजाजनोंकी यह सभा परम माननीय जनरल सर रेडवर्स हेनरी बुलर, वी सी जी सी बी का हृदयतापूर्वक अभिनन्दन करती है। उन्होंने प्राकृतिक दृष्टिसे दुर्भेद्य मोर्चोंपर डटे हुए शत्रुपर, अजेय कठिनाइयोंके बावजूद अत्यन्त विजय प्राप्त की है और अस्थायी पराजयोंसे घबराये बिना लेडीस्मिथमें फँसी हुई सेनाको मुक्त कराया है। इस प्रकार उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्यकी शक्ति और ब्रिटिश सैनिकोंके पराक्रमका मान रखा है।

प्रस्ताव ३ सम्राज्ञीके भारतीय प्रजाजनोंकी यह सभा सर्वशक्तिमान परमात्माको प्रार्थनामय धन्यवाद देती है कि उसने जनरल सर जॉर्ज स्टुअर्ट व्हाइट वी सी जी सी बी जी सी एस आई जी सी आई ई और उनकी बहादुर टुकड़ीको साम्राज्यको फिरसे बख्शा। उस टुकड़ीमें इस भूमिके अनेक सपूत — नेटाल तथा दक्षिण आफ्रिकी अन्य प्रदेशोंके स्वयंसेवक

८० भारतीय अस्पताल[1]

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अप्रैल ११ '१९

प्रिय

मैं इस पत्रके साथ भारतीय अस्पतालकी मासिक कार्यवाहीकी एक प्रति भेज रहा हूँ।

आपको ज्ञात ही है कि इस अस्पतालको स्थापित हुए लगभग १८ महीने हो चुके हैं।[2] इसकी सचमुच कितनी आवश्यकता है, यह इस कार्यवाहीसे प्रकट हो जायेगा। भारतीय समाजके सभी वर्गोंको इस अस्पतालसे लाभ पहुँचा है। गरीबोंके लिए तो यह एक वरदान ही है।

यदि डर्बनके भारतीय इसके लिए चन्दा न देते और डॉ० बूथ और डॉ० लिलियन रॉबिन्सन इसमें रोगियोंकी सेवा न करते तो इसे शुरू ही नहीं किया जा सकता था। यहाँके भारतीय इसके लिए ८४ पौंडका चन्दा दे चुके हैं। डॉ० रॉबिन्सन बीमार हैं इस कारण उनके स्थानपर अब डॉ० क्लारा विलियम्स काम कर रही हैं।

अबतक चन्दा देनेका प्रायः सारा बोझ डर्बनवालोंपर ही पड़ता रहा है। इसलिए अब उपनिवेशके अन्य भागोंके भारतीयोंको भी गरीबोंकी सर्वोत्तम सम्भव तरीकेसे सेवा करने अर्थात् उनका शारीरिक कष्ट मिटानेके सौभाग्यका उपभोग करनेके लिए निमन्त्रित करना अनुचित नहीं होगा।

चिकित्सालयको दो वर्षतक चलाने और पिछला किराया चुकानेके लिए कमसे-कम ८ पौंडकी आवश्यकता है। परन्तु यदि इसे आगे भी चलाना हो तो इससे बहुत अधिक धन-राशिकी आवश्यकता पड़ेगी। अबतक इससे एक बहुत बड़ी आवश्यकताकी पूर्ति होती रही है, इसलिए मेरा तो खयाल है कि इसे आगे भी चलाना ही चाहिए।

मुझे पूरा विश्वास है कि आप अपना हिस्सा तो देंगे ही औरोंको भी वैसा करनेके लिए प्रेरित करेंगे।

समस्त चन्देकी प्राप्ति स्वीकार की जायेगी और आय-व्ययका हिसाब दिया जायेगा।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

हस्तलिखित दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३७२५) से।

१. यह परिपत्र।
२. यह अस्पताल सितम्बर १४, १८९८ को खोला गया था।

८१. धनके लिए अपील[1]

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अप्रैल ११, १८९९

महाशय,

आप सभी जानते हैं कि भारतीयोंके लिए जो अस्पताल डर्बनमें खोला गया है उसे आज लगभग डेढ़ वर्ष हो गया है। उसमें डॉक्टर बूथ और एक अन्य डॉक्टर भाई मुफ्त काम करते हैं। अस्पताल खुलनेके पहले डर्बनमें एक सभा हुई थी। उसमें यह तय हुआ था कि अस्पतालके किराया-खातेमें प्रतिवर्ष ८५ पौंड भारतीय दें। यह निश्चय दो वर्षके लिए किया गया था। तुरन्त ही चन्दा किया गया जिसमें ६१ पौंड वसूल हो गये। २४ पौंड वसूल करनेको बाकी हैं। परन्तु इतनेसे तो खर्च पूरा होनेवाला नहीं है। मार्चके ९ महीनोंसे ज्यादाके पैसे चढ़ गये हैं। डर्बनमें बहुत चन्दा उगाहा जा चुका है। बाकी पैसेका बोझ भी अकेले डर्बनपर डालना ठीक नहीं माना जायेगा, इसलिए यह पत्र लिखा है।

अस्पतालकी पहली छमाही कार्यवाही इसके साथ है। उससे आप देखेंगे कि अस्पताल कितने कामका है।

उसमें बहुत खराब हालतमें गई हुई मद्रासी स्त्रियाँ अच्छी होकर निकली हैं। गुजरातियोंको भी आराम उसमें मिला है। कोई कौम बाकी नहीं रही। हमेशा सैकड़ों लोग वहाँसे मुफ्त दवा ले जाते हैं। और भिखकी पेटी रखी है, उसमें मरीजोंसे जितना बनता है उतना डाल देते हैं जिनसे नहीं बनता उनको भी दवा मिलती है। इस पेटीसे जो पैसा निकलता है उससे दवाएँ ली जाती हैं। जो घटता है उसे पारसी कौम पूरा कर देते हैं।

अगर हमसे मदद न हो सके तो अस्पताल बन्द करना पड़ेगा। दो डॉक्टर मुफ्त काम करते हैं इसलिए थोड़े खर्चमें अस्पताल चल सकता है और बहुत-से मरीजोंको फायदा होता है। एक अन्धा अपंग गुजराती बूढ़ा था। उसे बहुत दिनोंतक अस्पतालमें मुफ्त रखा गया था।

ऐसे काममें आपसे जितना बने उतना आपको देना ही चाहिए। और दूसरोंके पाससे भी वसूल करके भेजना चाहिए। जो भी पैसा मिलेगा उसकी रसीद भेजी जायेगी। आशा है, आप पूरी कोशिश करेंगे।

मो० क० गांधी

मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३७२५) से।

[1] [illegible] परिशिष्ट।

८२ भारतीय आहत-सहायक दल[1]

डर्बन

मार्च १८ [१९   ]

बोअर-युद्धका जो विवरण दैनिक पत्रोंमें प्रतिदिन प्रकाशित होता रहता है उसे पढ़ते हुए आपका ध्यान शायद इस युद्धमें भारतीय लोगों द्वारा किये गये उस कामपर तो गया ही होगा जिसका समाचारपत्रोंने तारीफवार उल्लेख कर दिया है। परन्तु मैं जानता हूँ कि समाचारपत्र दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके कामका पूरा विवरण प्रकाशित नहीं कर सके। मुझे यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि युद्धकी घोषणा होते ही भारतीयोंने युद्धके औचित्यानौचित्यके विषयमें अपने मतका विचार किये बिना इस संकट-कालमें अपने तुच्छ सामर्थ्यके अनुसार ब्रिटिश सरकारकी सहायता करनेका निश्चय कर लिया था। इससे मतभेद एक भी भारतीयका नहीं था। इस भावनाका फल यह हुआ कि तत्काल ही डर्बनके अंग्रेजी बोल सकनेवाले भारतीयोंकी एक सभा बुलाई गई। उसमें हाजिरी बहुत ही अच्छी थी और जितने आदमियोंके लिए सम्भव था उतनोंने वहीं और उसी समय इस आशयकी घोषणापर हस्ताक्षर कर दिये कि हम अपनी सेवा बिना किसी शर्त और तनख्वाहके सैनिक अधिकारियोंके सुपुर्द करते हैं वे हमें जिस लायक समझें वह काम हमसे ले लें। घोषणामें रण-क्षेत्रके चिकित्सालय और रसद-विभागका जिक्र विशेष रूपसे करके यह भी लिख दिया गया था कि हम शस्त्र चलाना नहीं जानते।

यह सहायता अन्तमें स्वीकार कर ली गई और सैनिक अधिकारियोंकी सलाहसे नेटालमें एक भारतीय आहत-सहायक दलका संगठन कर दिया गया। इस दलमें घायलोंको लाने-ले जाने वाले अधिकतर गिरमिटिया भारतीय थे जिन्हें, गिरमिटिया-संरक्षक विभाग या ऊपर निर्दिष्ट स्वयंसेवकोंकी मारफत नेटालके जायदादवालोंने दिया था। वाहकोंके नायक ये स्वयंसेवक ही थे। इन भारतीयोंको रण-क्षेत्रमें जाने या न जानेकी स्वतन्त्रता थी। इस प्रकार, कोलेंजोकी लड़ाईके बाद लगभग १   भारतीय वाहकों और १   नायकोंने घायलोंको लाने-ले जानेका काम किया था (वस्तुतः इतनेसे अधिक नायकोंकी आवश्यकता नहीं थी)। उनके कठिन कामकी सभी सम्बद्ध लोगोंने प्रशंसा की थी और घायल सिपाही तो उनकी सेवासे परम सन्तुष्ट हुए थे। इस दलके यूरोपीय सुपरिटेंडेंट और इसके सम्पर्कमें आनेवाले अन्य यूरोपीयोंने निःसंकोच माना था कि वाहकोंके बिना घायलोंको लाने-ले जानेका यह काम सन्तोषजनक रीतिसे नहीं हो सकता था। इस दलका संगठन कोलेंजोके रास्ते लेडीस्मिथतक बढ़नेके लिए किया गया था परन्तु जब सेनाको पीछे हटना पड़ा तब यह तोड़ दिया गया और जब जनरल बुलरने स्पियॉन कॉपके रास्ते बलपूर्वक बढ़ जानेका प्रयत्न किया तब इसका पुनर्गठन कर लिया गया था।

इस बार काम सम्भवतः अधिक कड़ा और निश्चय ही अधिक जोखिमका था। घोषणा तो यह की गई थी कि भारतीयोंको गोलाबारीकी सीमासे बाहर काम करना होगा परन्तु प्रत्यक्ष काम इसके विपरीत हुआ। उन्हें घायलोंको गोलाबारीकी सीमासे ही लाना पड़ता था और कभी कभी तो उनसे भी गजके अन्दर ही बम आकर गिरते थे। बेशक इस सबका अनिवार्य कारण स्पियॉन

१. गांधीजीका यह पत्र "भारतीय सेवादल द्वारा सेवा" रूपमें इंडियामें प्रकाशित हुआ था। इसके साथ पूरा विवरण टाइम्स ऑफ इंडिया (साप्ताहिक संस्करण) को पत्रके ही रूपमें लिखा था। देखिए "नेटालमें भारतीय आहत-सहायक दल," १४-३-१९   के बाद।

कोपकी पराजय और बाल क्रांससे पीछे हटना था। वाहकों और उनके नायकोंको स्पियरमैन कैम्पसे फ्रीयरतक २५ मील घायलोंको लेकर जाना पड़ा था। और यह नेटालकी सड़कोंपर, जो, आप जानते ही हैं बहुत ऊबड़-खाबड़ और पहाड़ी हैं। एक बार तो उन्हें एक हफ्तेमें १२५ मीलका फासला तय करना पड़ा था। इसके अलावा हमारे व्यापारियोंने घायलोंके लिए सिगरेट आदि भेजे जो कि भारतीय आहत-सहायक दलका एक बिलकुल विशिष्ट कार्य था। अनेक यूरोपीयोंने जिन्हें इन सब बातोंका ज्ञान होना चाहिए, मुझसे कहा है कि भारतीय वाहकों और उनके नायकोंने भोजन तथा आश्रय-स्थलकी ऐसी गंभीर कठिनाइयोंके होते हुए भी घायलोंको लेकर एक-एक दिनमें जो पच्चीस-पच्चीस मीलका फासला तय किया वैसा कोई भी यूरोपीय दल नहीं कर सकता था।

इतनेसे ही सन्तोष न मानकर, देशभक्तिकी भावनासे अधिक सफल ऐकात्म्य स्थापित करने और यह साबित करनेके लिए कि इस संकटके समय अपने स्थानिक मतभेदोंको भुला देनेमें पूर्णतः समर्थ हैं हमारे व्यापारियोंने ६५ पौंड चन्दा इकट्ठा किया और यह डर्बन महिला देशभक्त संघ (डर्बन विमेन्स पैट्रिऑटिक लीग) को सौंप दिया। यह एक स्थानिक संघ है जो घायल सैनिकों तथा स्वयंसेवकोंको — और स्वयंसेवकोंमें से कुछ तो घोर भारतीय-विरोधी हैं — सुख-आराम पहुँचानेके लिए बनाया गया है। हमारे व्यापारियोंने घायलोंके लिए कपड़ा भी दिया जिससे हमारी भारतीय महिलाओंने तकियोंके गिलाफ और रूमाल बना दिये। सारेके-सारे, हजारों भारतीय शरणार्थियोंका निर्वाह पूरी तरह भारतीय समाजने ही किया। यह एक ऐसा काम था जिसके लिए डर्बनके मेयरने सार्वजनिक रूपसे कृतज्ञता प्रकाशित की और इस वस्तुस्थितिका महत्त्व इस समय जो-कुछ हो रहा है उसकी दृष्टिसे और भी बढ़ जाता है। शरणार्थी-सहायक समितिको यूरोपीय शरणार्थियोंका भी पर्याप्त निर्वाह करना बहुत कठिन मालूम हो रहा है। लंदन-स्थित केन्द्रीय समिति अबतक बूढ़ों और कमजोरों तथा हृष्ट-पुष्ट मर्दों और औरतों सबको सहायता देती आ रही थी। अब उसने सहायता बन्द कर दी है और इसकी सूचना तार द्वारा भेजी है। जब किम्बर्ले और लेडीस्मिथके छुटकारेकी शुभ-खबरी मिली थी तब भारतीयोंने यूरोपीयोंके साथ-साथ अपनी दूकानें बन्द करके उनकी सजावट आदि करके अपना हर्ष प्रकट किया था। उन्होंने एक सार्वजनिक सभा भी की थी। सर जॉन रॉबिन्सनको जो उत्तरदायी शासनमें नेटालके पहले प्रधानमन्त्री थे अध्यक्षता करनेके लिए निमंत्रित किया गया था और उन माननीय महानुभावने बहुत कृपापूर्वक निमन्त्रण स्वीकार किया था। सभा खूब सफल रही। उसमें उपनिवेशोंके सभी हिस्सोंके लगभग १   भारतीय एकत्र हुए थे। साठसे ज्यादा प्रमुख यूरोपीय भी शामिल थे।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया १८–५–१९

८३. पत्र: आहत-सहायक दलके नायकोंको

डर्बन
मार्च २, १९००

रा०[1]

आप भारतीय आहत-सहायक दल [इंडियन ऐम्बुलेन्स कोर] में नायकके तौरपर शामिल हुए — इससे आपने स्वाभिमानका उत्साह बढ़ाकर अपने आपको तथा अपने देशको मान प्रदान किया है और अपनी तथा अपने देश — दोनोंकी सेवा की है। अगर आप मानें कि यही बदला बस है तो शोभनीय बात होगी।

परन्तु मैं समझता हूँ कि आपके शामिल होनेका कुछ कारण तो मेरे प्रति आपका प्रेम भाव है। जिस अंशमें मेरे प्रति प्रेम भावके ही कारण शामिल हुए उस अंशतक मैं आपका आभारी हुआ हूँ। उसका बदला मैं पैसा देकर चुका नहीं सकता। पैसा देनेका सामर्थ्य मुझमें नहीं है। परन्तु आपके प्रेमको मैं भूल नहीं गया हूँ। और देशकी सेवा करनेमें खरे समयपर आपने मेरी मदद की उसके स्मरणार्थ नीचे लिखी हुई भेंट आपको अर्पित कर रहा हूँ। आशा करता हूँ कि आप इसे स्वीकार करेंगे और इससे जो काम लिया जा सकता हो वह लेंगे।

आपसे एक वर्षतक या इस बीच मुझे देश जाना हो तो जबतक मैं दक्षिण आफ्रिकामें रहूँ तबतक आपका या आपके मित्रका पाँच पौंड तकका ऐसा वकीली काम मुफ्त कर देनेको आबद्ध होता हूँ जो अर्जनमें रहते हुए मुझसे बन सके।

मो० क० गांधी

मूल गुजराती पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० ३४४५) से।

८४. पत्र: डोली-वाहकोंको

[डर्बन
मार्च १४, १९००][2]

प्रियवर,

जब युद्ध-क्षेत्रमें हम घायलोंको लाने-ले जानेका काम कर रहे थे मैंने अपने जिम्मेके डोली-वाहकोंसे वादा किया था कि यदि आपने अपना काम भलीभाँति ढंगसे किया तो मैं खुद आपको एक छोटी-सी भेंट अर्पित करूँगा।

अधिकारी आपके कामसे खुश हैं जैसे कि सचमुच सभी वाहकोंके कामसे। इसलिए मेरे अपने वादेके अनुसार काम करनेका समय आ गया है। आपके कामकी सराहनाके चिह्न-स्वरूप मैं आपको सादगी भेंट[3] दे रहा हूँ। मुझे भरोसा है कि आप कृपापूर्वक इसे स्वीकार करेंगे।

१. गुजराती राजमान्य राजेश्री का संक्षिप्त रूप।

२. यह तारीख एक डोली (स्ट्रेचर)-वाहक भगवानदास नाम लिखे इसी तरहके गुजराती पत्र (एस० एन० ३७२९) से ली गई है।

३. उपलब्ध कागजपत्रोंसे यह पता नहीं चलता कि भेंट क्या थी।

आप रणभूमिपर गये यह आपने समाजकी एक सेवा की है। यह दृढ़ विश्वास रखते हुए कि अपने देशवासियोंकी सेवा करनेमें अपनी भी सेवा होती ही है आप हमेशा अच्छे काम करें अपनी रोटी ईमानदारीसे कमायें और अपने कर्तव्योंका पालन करते रहें — यही प्रार्थना करता है आपका शुभाकांक्षी —

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अंग्रेजी साइक्लोस्टाइल्ड पत्र (सी डब्ल्यू २२१९) से।

८५ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मई २८, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं इसके साथ प्रतिनिधि-भारतीयोंके एक सन्देशकी नकल भेज रहा हूँ जिसमें उन्होंने महामहिमामयी सम्राज्ञीको उनके इक्यासीवें जन्म-दिनके उपलक्ष्यमें अपनी विनम्र तथा राजभक्तिपूर्ण बधाई अर्पित की है। प्रतिनिधि-भारतीय इसे इसी महीनेकी २४ तारीखको सम्राज्ञीके मुख्य उपनिवेश-मन्त्रीकी सेवामें तारसे भेजना चाहते हैं। उनकी इच्छा है मैं आपसे निवेदन करूँ कि आप इसे आगे रवाना कर दें।

यह भी निवेदन है कि मुझे अधिकार दिया गया है जो खर्च हो उसकी सूचना आपके पाससे मिलनेपर आपको चेक भेज दूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[संलग्न सन्देश]

नेटालके भारतीय सम्राज्ञीको उनके इक्यासीवें जन्म-दिनके उपलक्ष्यमें नम्रता और राजभक्तिपूर्वक बधाई देते हैं। हार्दिक प्रार्थना करते हैं कि सर्वशक्तिमान उनपर सर्वोत्तम सुख-समृद्धिकी वर्षा करे।

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १०९/१९०।

८६. पत्र: उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
जर्मिस्टन
जून ११, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मुझे आपके ९ तारीखके पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनेका मान प्राप्त है। उसमें यह सूचना दी गई है कि परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयने अमद मनुस्साको दी गई १ वर्ष कैदकी सजामें से १८ महीनेकी सजा माफ कर दी है।[1]

मैंने यह सूचना अमद मनुस्साकी बीबीको दे दी है। यद्यपि उसने आशा तो यह की थी कि इतने आनन्द-उत्साहके बीच उसका पति उसको तुरन्त वापस कर दिया जायेगा फिर भी परमश्रेष्ठने उसके पतिपर और उसपर जो दया की है उसके लिए वह अत्यन्त कृतज्ञ है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी० एस० ओ० ८९४६/१९ १।

८७. परिपत्र: धन्यवादके प्रस्तावके लिए[2]

जर्मिस्टन
जुलाई १६, १९

ईस्ट इंडिया असोसिएशनकी वार्षिक रिपोर्टमें हमारे बारेमें बहुत अच्छा लिखा गया है। असोसिएशनने अपना यह इरादा भी जाहिर किया है कि वह जितना हो सकेगा हमारे हकोंकी रक्षा करनेका प्रयत्न करेगा। इसके लिए उसके प्रति एक धन्यवादका प्रस्ताव[3] इसके साथ है। इस प्रस्तावको भेजनेकी सम्मति देनेवाले सज्जन नीचे अपनी सही कर दें।[4]

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें मूल गुजराती पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० ५४६७) से।

1. देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको," मार्च १७, १९ ।
2. मूल पत्रमें गुजरातीके नीचे इसी आशयका वक्तव्य इसके ठीक अंग्रेजीमें भी है।
3. उल्लिखित प्रस्ताव उपलब्ध नहीं है।
4. परिपत्रमें प्रस्तावके पक्षमें अनेक सहियाँ हैं।

८८ तार : गवर्नरके सचिवको

[डर्बन]
जुलाई २८, १९

सेवामें
परमश्रेष्ठ गवर्नरके निजी सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

तार मिला। आपसे प्रतिकूल खबर न मिली तो मैं अगले शुक्रवारको प्रात १०–१ बजे परमश्रेष्ठकी सेवामें उपस्थित हूँगा।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १४७४) से।

८९ भारतका अकाल

डर्बन
जुलाई ३, १९

सेवामें
नेटाल ऐडवर्टाइज़र
सम्पादक

महोदय

भारतमें इस समय भयंकर अकाल फैल रहा है। उससे पीड़ित लोगोंकी सहायतार्थ धन एकत्र करनेकी अपीलके पत्रक कलकत्ताके नेटाल-प्रवास-प्रतिनिधिने यहाँ भारतीय प्रवासियोंके संरक्षकके पास भेजे हैं कि वे उन्हें यहाँके गिरमिटिया तथा स्वतन्त्र भारतीयोंमें बाँट दें। मेरी सम्मतिमें इस अपीलका अर्थ भयानक है। इससे संकटकी तीव्रताका परिचय मिलता है। यह भी मालूम होता है कि एक विशाल साम्राज्यके साधनोंके रहते हुए भी गरीब भारतीयोंतक से उनका अंश-दान माँग लेना जरूरी समझा गया है।

यह स्मरणीय है कि जब १८९६ में भारतमें दूर-दूरतक अकाल फैल गया था तब सीधे दक्षिण आफ्रिकाके मेयरसे एक अपील की गई थी और उसका इस महाद्वीपके सभी भागोंने तुरन्त ही अच्छा उत्तर दिया था। इस बार वैसी सीधी अपील नहीं की गई। उसका कारण स्पष्ट है। हम स्वयं ही कठिनाईमें पड़े हुए हैं। यही कारण है कि नेटालके भारतीयोंने भी वैसी कोई अपील सब उपनिवेशवासियोंसे नहीं की। वे अबतक केवल अपना चन्दा भारतके शाखा-कार्यालयको सीधा भेजकर सन्तोष मानते रहे। उनको भारतके हालातकी जानकारी भी बहुत कम थी। परन्तु अब भारतसे वाइसरायने लन्दनके लॉर्ड-मेयरके पास एक नई और करुणा भरी अपील भेजी है। उसमें विशाल साम्राज्यके प्रत्येक भागसे सहायतार्थ आगे बढ़नेके लिए कहा गया है। उस अपीलकी प्रतियाँ और कलकत्ताके पत्रक यहाँ एक साथ ही पहुँचे हैं। इससे स्थिति

१ देखिए खण्ड २, पृष्ठ १८९–९ ।

बहुत बदल गई है। अब मेरी नम्र सम्मतिमें यहाँके भारतीयोंका कर्तव्य हो गया है कि वे स्वयं तो पुनः प्रयत्न करें ही इस मामलेकी ओर उपनिवेशियोंका ध्यान भी आकृष्ट करें जिससे कि वे भी अपने करोड़ों भूखे बन्धुजनोंकी सहायता करनेके सम्मानित अधिकारका (मैं इसे यही कहना पसन्द करता हूँ) प्रयोग कर सकें — और वे बन्धुजन भी तो उसी एक सम्राज्ञीकी प्रजा हैं जिसकी प्रजा उपनिवेशी हैं। साथ ही इस समय इस तथ्यकी उपेक्षा करना भी बहुत अनुचित होगा कि इस उपनिवेशको युद्धके कारण बहुत कष्ट उठाना पड़ा है, और अभी और भी उठाना पड़ेगा। परन्तु मुझे यह कहनेके लिए क्षमा किया जाये कि भारतके करोड़ों लोगोंकी शोचनीय दशाकी तुलनामें हमारा देश बहुत अधिक समृद्ध है। उन्हें एक ऐसे युद्धमें उलझना है जिसमें जीत तो होती ही नहीं कोई पारितोषिक मिलता है तो शायद सिर्फ कष्ट उठाकर और तिल-तिल करके मर जानेका। भारतके अकाल-पीड़ित प्रदेशोंमें एक पेनी एक आदमीके दिन-भरके भोजनके लिए काफी होगी। इस उपनिवेशमें ऐसा आदमी कौन है जो बिना किसी कठिनाईके एक शिलिंग न बचा सके और इस प्रकार एक दिनमें १२ भूखोंको भोजन न करा सके? यद्यपि यह सर्वथा सत्य है कि अकेले-अकेले बड़ी-बड़ी राशियाँ देनेमें समर्थ व्यक्ति बहुत नहीं हैं परन्तु ऐसे तो सैकड़ों — नहीं हजारों — हैं जिनमें से हरएक कमसे-कम कुछ शिलिंग दे सकता है।

युद्ध बुरा तो है ही परन्तु नेटालके लॉर्ड बिशपने बतलाया है कि उससे एक भलाई भी हुई है। उसके कारण इस शक्तिशाली साम्राज्यके जिसके प्रजाजन होनेका हमें गौरव है, विभिन्न अंग एक-दूसरेके अधिक निकट आ गये हैं। सम्भव है कि इसी प्रकार, भारतपर आया हुआ अकाल प्लेग और हैजेका तिमुँहा संकट, अशुभ होते हुए भी उस जंजीरमें एक कड़ी और जोड़ देनेका काम कर जाये जिसने कि हम सबको एक सूत्रमें गूँथ रखा है।

अकेली सरकारको भारतमें कोई ६ लाख अकाल-पीड़ितोंकी सहायता प्रतिदिन करनी पड़ रही है। निजी दानकी उस धाराका तो कोई जिक्र ही नहीं जिससे लाखोंके प्राण बच रहे हैं। *टाइम्स ऑफ इंडियाके अनुसार, अकेले श्री आदमजी पीरभाई गत मईमें प्रतिदिन १६,१* व्यक्तियोंको भोजन कराते थे। डॉ॰ क्लॉप्सने बतलाया है कि सहायतार्थियोंमें प्रतिदिन १ की वृद्धि होती जा रही है।

अधिकतर अकाल-पीड़ित प्रदेशमें मूसलधार वर्षा हो गई है। परन्तु अभी तो उसके कारण सहायतार्थियोंकी संख्या बढ़ेगी ही। सरकारपर भी उसके कारण जन और धनके व्ययका बोझ बढ़ जायेगा। प्लेग अपना विनाशका कार्य गत चार वर्षसे निरन्तर कर रहा है और अकालके दायें हाथ हैजा-राक्षसने इस विनाशकी रही-सही कमी भी पूरी कर दी है। विविध ब्रिटिश उपनिवेशों और बस्तियोंके अतिरिक्त अमेरिकाने भी एक कोष एकत्रित किया है और उसका वितरण करनेके लिए डॉ॰ क्लॉप्सको अपना विशेष प्रतिनिधि बनाकर भेजा है। जर्मनी भी सहायताके लिए आगे बढ़ आया है। भारतका संकट इतना बड़ा है कि मित्र और अमित्र सभी उसके निवारणमें समान रूपसे सहायक हो सकते हैं। नेटाल ही पीछे क्यों रहे?

अन्तमें मैं यह घोषणा कर देनेका प्रिय कर्तव्य पालन करना चाहता हूँ कि नेटालके परमश्रेष्ठ गवर्नर, माननीय महान्यायवादी और माननीय सर जॉन रॉबिन्सनने भी भारतके करोड़ों भूखे लोगोंके साथ भारी सहानुभूति प्रकट की है और वचन दिया है कि उनकी सहायताके लिए जो भी कोष खोला जायेगा उसके वे संरक्षक बन जायेंगे।

आपका, आदि,
मो॰ क॰ गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेटाल ऐडवर्टाइजर ११-७-१९

९० पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
जुलाई ११, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

नेटालके मुसलमान ब्रिटिश प्रजाजन अपने समाजके आध्यात्मिक नेता महामहिम तुर्की-सुल्तानको उनकी रजत-जयन्तीके अवसरपर, अभिनन्दन-पत्र अर्पित करनेका आयोजन कर रहे हैं। मुझसे सलाह माँगी गई है कि अभिनन्दन-पत्र भेजनेका सबसे अच्छा तरीका कौन-सा होगा। मुझे लगता है कि अधिक रस्मी और उचित तरीका उसे परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयके द्वारा भेजनेका होगा क्योंकि यह सम्राज्ञीके प्रजाजनोंकि पाससे यूरोपके एक अन्य सुल्तानके पास भेजा जानेवाला है।

आप इस शिष्टाचारके सम्बन्धमें मेरा मार्ग-प्रदर्शन करनेकी कृपा करें तो मैं आभारी हूँगा।

अभिनन्दन-पत्र शनिवारको भेज देना होगा इसलिए अगर आप शीघ्र सूचना दें तो मैं उपकार मानूँगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी० एस० ओ० ६ ११/१९ ।

९१ पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
जुलाई ११, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं इसके साथ उस पत्र-व्यवहारकी नकल भेज रहा हूँ जो अधिवास-प्रमाणपत्रकी एक अर्जीके सम्बन्धमें मेरे और प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीके बीच हुआ है। इस पत्र-व्यवहारमें जिस नियमका उल्लेख हुआ है वह हाल ही में मंजूर किया गया मालूम पड़ता है।

मैं समझता हूँ इस नियमसे छुटकारा पानेके लिए, इसे सरकारकी नजरमें लानेकी धृष्टता करनेके सिवा कोई चारा नहीं है। जिन कारणोंसे यह नियम मंजूर किया गया है उन्हें प्रवासी

१३ तार गवर्नरके सचिवको

[डर्बन]
अगस्त ४ १९

सेवामें
परममेष्ठ गवर्नरके निजी सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

आपका कलका [सन्देश] मिला। मैं सोमवारको प्रात ११-१ बजे परमश्रेष्ठ की सेवामें उपस्थित हूँगा।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन ३४८) से।

१४ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अगस्त १६, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

आपका ९ तारीखका कृपापत्र मिला जिसमें आपने मुझे सूचना दी है कि परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयने सम्राज्ञीके प्रति हमारा समवेदना-सन्देश जो मेरे २ तारीखके पत्रमें निहित था उपनिवेश-मंत्रीको भेज दिया है। इसके लिए मैं परमश्रेष्ठको धन्यवाद देता हूँ।

मैं इसके साथ सर्टिस भेजनेके खर्चके पौंड २-१४-० का चेक भेज रहा हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजी]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ ११४२/१९ ।

९५ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अगस्त १३, ११

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

आपका ११ तारीखका कृपापत्र मिला। उसमें यह सूचना दी गई है कि परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयको उपनिवेश-मंत्रीके पाससे एक तार मिला है जिसमें कहा गया है सम्राज्ञीकी इच्छा है कि नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंको उनके समवेदना-सन्देशके लिए, सम्राज्ञीका धन्यवाद पहुँचा दिया जाये।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ ११४२/११।

९६ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अगस्त १४, ११

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

आपके १ तारीखके तारके उत्तरमें मुझे सूचित करना है कि राज्य-अभिषेकका अवसर बहुत निकट आ रहा है इसलिए महामहिम सुलतानके प्रति अभिनन्दन-पत्र[1] के आयोजकोंने वह अभिनन्दन-पत्र इस शनिवारको लन्दन-स्थित तुर्की राजदूतको भेज दिया है। यदि परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदय मानते हैं कि अभिनन्दन-पत्र परम माननीय उपनिवेश-मन्त्रीके द्वारा भेजा जाना चाहिए, तो मेरा खयाल है तुर्की राजदूतसे निवेदन किया जा सकता है कि वे उसे औपनिवेशिक कार्यालय लन्दनमें दे दें। किसी भी हालतमें मुझे खुशी होगी अगर ऐसे मामलोंमें भविष्यमें उपयोग करनेके लिए तत्सम्बन्धी राय मुझे मिल जाये।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १ ११/११।

१ देखिए "पत्र : अभिनन्दनपत्रको" जुलाई ११, ११।

१७. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अगस्त १८, ९९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

ओसा देसा नामक व्यक्तिके अधिवास-प्रमाणपत्रकी अर्जीके बारेमें आपका इसी माहकी १४ ता० का कृपापत्र प्राप्त हुआ।

खेद है कि मुझे इस विषयमें फिरसे आपको कष्ट देना पड़ रहा है।

मैंने प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीसे वे कारण जाननेकी कोशिश की जिनसे उपर्युक्त नियम जारी करना जरूरी हुआ है। परन्तु मैं असफल रहा।

बिलकुल सम्भव है कि कुछ लोगोंने पहलेकी प्रथाका दुरुपयोग किया हो। और, हम मान लें कि वह दुरुपयोग अब भी होता है। ऐसी हालतमें अगर उसे भारतीयोंकी नजरमें लाया जाता तो भले ही वह पूरी तरहसे रुकता नहीं फिर भी कम तो हो ही जाता। अगर हलफनामे झूठे पेश किये गये हैं तो अपराधियोंको कानूनके अनुसार दण्ड दिया जा सकता है। परन्तु, निवेदन है कि प्रस्तावित नियम भले ही सख्त व बेमुरौवत न हो वह ज्यादा गरीब लोगोंके लिए खास तौरसे भारी कठिनाई पैदा करनेवाला होगा। वर्तमान स्थितिमें भी उन्हें प्रमाणपत्र प्राप्त करनेमें बहुत खर्च उठाना पड़ता है, नया नियम तो बिलकुल नई ही बाधाएँ मार्गमें उत्पन्न कर देगा। व्यवहारमें यह सम्भव नहीं कि लोगोंसे भारतमें रहते हुए ही प्रमाणपत्रकी अर्जियाँ भेजनेकी अपेक्षा की जाये। पत्रको भारत पहुँचनेमें साधारणतः १ दिन और अक्सर इससे ज्यादा दिन लगते हैं। और अगर हलफनामेमें कोई भूल रह गया तो कहना मुश्किल है कि प्रमाणपत्र दिया जानेमें कितना समय नहीं लग जायेगा। इसके अलावा यह आशा कैसे की जा सकती है कि प्रवासी-अधिकारी जिन थोड़े-से भारतीयोंको इज्जतदार मानता है, वे उन लोगोंको जानते हों जिनके लिए अधिवास-प्रमाणपत्रोंकी जरूरत हो?

इन परिस्थितियोंमें मेरा निवेदन है कि प्रस्तावित नियम बिलकुल उठा लिया जाये और अगर प्रमाणपत्र देनेकी पुरानी प्रथामें प्रवासी-अधिनियमका[1] कोई दुरुपयोग होता हो तो उसका मुकाबला करनेके लिए साधारण तरीके काममें लाये जायें।

यह लिख कर देना अनुचित न होगा कि प्रमाणपत्रके अर्जदार, मेरे मुवक्किल ओसा देसाको प्रमाणपत्र प्राप्त करनेमें विलम्बके कारण बहुत असुविधा हुई है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी० एस० ओ० ९१३/९९।

१ देखिए खण्ड २, पृष्ठ २६८–२७१।

१८. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
जनवरी ३१, १९००

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

शेख हैदर नामक व्यक्तिके अधिवास-प्रमाणपत्रकी अर्जीके बारेमें आपका इसी माहकी २० तारीखका कृपापत्र मिला।

मैं देखता हूँ कि सरकार एक नियमके अस्तित्वकी बात कहती है और उसे लगता है कि उसका उल्लंघन करके कार्रवाई करनेके लिए काफी कारण नहीं बताये गये हैं। सच बात यह है कि जिस नियमकी शिकायत की गई है, वह अभी हालकी प्रथामें एक नवीनीकरण है। इसे जारी करनेका कोई कारण उस समाजको नहीं बताये गये जिसका उससे निकटतम सम्बन्ध है। उक्त प्रवेशार्थी तो यह समाज अबतक जानता ही नहीं।

तब क्या मैं जान सकता हूँ कि हालतक ही जो प्रथा प्रचलित थी उसके अन्तर्गत प्रवासी-अधिनियमकी किस प्रकार अवहेलना की गई है।

मैं मानता हूँ कि यह नवीनीकरण जो असुविधा उत्पन्न कर रहा है उसके परिमाणको सरकार नहीं समझती।

अगर इसका असर सिर्फ उन लोगोंपर होता जो भविष्यमें उपनिवेशमें आनेवाले हों तो इसमें कोई कठिनाई पैदा न होती। परन्तु भारत गये हुए उन सैकड़ों भारतीयोंका जो जाते समय इसके बारेमें कुछ जानते ही नहीं थे और जिन्हें ऐसे प्रमाणपत्रोंकी जरूरत है, उपनिवेशमें आना बहुत कठिन होगा हालाँकि यहाँ आनेका उनका अधिकार है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज़ सी० एस० ओ० १, ६३/१९ ।

९९ पत्र उपनिवेश-सचिवको

२४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
दिसम्बर ३, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मुझे डोसा देसा सम्बन्धी पत्र-व्यवहारके सिलसिलेमें आपको सूचित करना है कि इसफनामा-लेखकने अपनी विश्वसनीयताका प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया और उसे इस अर्जीके समर्थनमें पेश करनेपर प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीने अब प्रमाणपत्र दे दिया है।

तथापि मेरी नम्र रायमें इस अर्जीके निपटारेसे मेरे पिछली १ तारीखके पत्रमें उल्लिखित नवीनीकरण-सम्बन्धी सामान्य प्रश्नका निपटारा नहीं होता।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १ ११/१९ ।

१०० टिप्पणियाँ

दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी वर्तमान स्थितिपर टिप्पणियाँ[1]

[दिसम्बर ३, १९ के बाद][2]

दक्षिण आफ्रिका-सम्बन्धी प्रश्नोंका निर्णय निकट भविष्यमें हो जानेकी सम्भावना है, इसलिए एक सुझाव दिया जा रहा है कि दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए भारतीयोंके जो मित्र इंग्लैण्डमें रहते हैं उनको दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी शिकायतोंके विषयमें नवीनतम तथ्योंसे परिचित करा दिया जाये जिससे वे मामलेको विचारके लिए सम्बद्ध अधिकारियोंके सामने उपस्थित कर सकें। एक सुझाव यह भी है कि उपनिवेश-मन्त्रीकी सेवामें एक प्रार्थनापत्र प्रस्तुत करके उसका समर्थन सार्वजनिक सभाओं द्वारा कर दिया जाये जिससे कि इंग्लैण्डके कार्यकर्ताओंका बल बढ़े। इस दूसरे सुझावको, सभी प्रकार विचारके पश्चात् छोड़ देनेका निश्चय

१. यह "एक पैसा संवाददाता" से प्राप्त रूपमें १९-२०-१९ के इंडियनमें प्रकाशित हुआ था।

२. यह तारीख "टिप्पणियों" में दिये गये प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम (देखिए पृ० १०३-१०४) सम्बन्धी आंकड़ोंके आधारपर निश्चित की गई है। उपनिवेश-सचिवको लिखे गये नवम्बर ११ लगभग १८ तथा १ एवं दिसम्बर ३, १९ के पत्रोंमें इस अधिनियमके अन्तर्गत एक विशिष्ट मामलेपर विचार किया गया है।

किया गया है। कारण यह है कि यदि इसे अपनाया गया तो यहाँ कई प्रकारके भ्रम फैल जायेंगे। यह कल्पना निराधार नहीं है। यहाँ सबकी धारणा यह है कि जबतक युद्ध समाप्त न हो जाये और उसके कारण उत्पन्न हुए झगड़ोंका अन्त न हो जाये तबतक ऐसे किसी प्रश्नको नहीं उठाना चाहिए, या उसपर चर्चा नहीं करनी चाहिए, जिसका सम्बन्ध युद्धसे ही न हो। यह भी सम्भव है कि इस समय यूरोपीय और भारतीय कौमोंमें अच्छे सम्बन्ध दीखते हैं उनमें इस प्रार्थनापत्रके कारण गड़बड़ी उत्पन्न हो जाये।

आज यह बतलाना बहुत ही कठिन है कि भविष्यमें क्या होनेवाला है, अथवा शान्तिकी पुनःस्थापना होते ही पुरानी कटुता फिर तो नहीं जाग उठेगी। यह सन्देह निराधार नहीं है कि यूरोपीयोंका पुराना रुख बदलता नहीं। कुछ ही दिन हुए, मैथ्यूज़ विटमैनने एक अग्रलेखमें लिखा था कि स्थानीय भारतीयोंने आहत-सहायकोंके रूपमें और अन्य प्रकारसे जो सेवाएँ की हैं उनके कारण उपनिवेशवासियोंको भारतीय प्रश्नपर सदा तीखी नजर रखनेकी आवश्यकताकी ओरसे अपनी आँखें मींच नहीं लेनी चाहिए। साथ ही उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि सम्भव है, कोई एॅडवर्ड्स अपने भारतीय सम्बन्धोंके कारण भारत-पक्षपाती विचार रखते हों। इसलिए कहीं ऐसा न हो कि उनके सेनापतित्वमें नेटालको जिस अस्थायी सैनिक-शासनमें रहना पड़ा है वह उस स्थितिमें भी हस्तक्षेप करने लगे जो कि नेटालने अबतक भारतीयोंके यहाँ प्रवेश और व्यापार करनेके सम्बन्धमें सफलतापूर्वक स्थिर रखी है। भारतीयोंने जो सेवाएँ की हैं वे उन्होंने इस सम्बन्धमें नेटालकी नीतिको न्यायपूर्ण मानकर ही की हैं अपनी शिकायतोंको उचित माननेके बावजूद नहीं।

भारतीयोंने १ से ऊपर स्वयंसेवकोंका एक डोली-वाहक दल (वालंटियर स्ट्रेचर बेयरर कोर) संगठित किया था। उसके प्रत्येक स्वयंसेवकको प्रति सप्ताह १ पौंड मिलता था जो कि यूरोपीय वाहकोंके पारिश्रमिकके आधेसे कुछ ही अधिक था। १ से अधिक नायक उनकी सहायता बिना कोई पारिश्रमिक लिये करते थे। ये समाजके अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्ति थे और केवल समाजकी सेवा करनेके लिए अपना व्यापार तथा अन्य काम-काज छोड़कर स्वयंसेवक बने थे। इन्होंने वैसा करते हुए स्पष्ट कह दिया था कि हम शिकायतोंके होते हुए भी इस समय घरेलू झगड़ोंको भुला देना अपना कर्तव्य समझते हैं। भारतीय व्यापारी यद्यपि स्वयंसेवक-दलमें सम्मिलित नहीं हो सके फिर भी उन्होंने नायकोंको आवश्यक सामान देकर और उनमें से जिनके परिवारोंको सहायताकी आवश्यकता थी उनके निर्वाहका भार उठाकर, इस कार्य में भाग लिया। इस दलने कोलेंजो स्पियानकोप और वालक्रांजकी भाग्य-निर्णायक लड़ाइयोंमें सेवाका कार्य किया। इसके कामकी बहुत प्रशंसा हुई है। नेटालके प्रथम प्रधानमंत्री सर जॉन रॉबिन्सनने इसके विषयमें कहा है

> इस संकटमें भारतीय लोगोंने जो योग दिया उसके विषयमें मैं इतना ही कह सकता हूँ कि वह आप सबके यश और देशभक्तिका द्योतक है। ऐसे कारण मौजूद थे — और उन्हें आप भली भाँति समझ सकते हैं — जिनसे रण-क्षेत्रमें ब्रिटिश सैनिकोंके अतिरिक्त अन्य सैनिकोंका प्रयोग नहीं किया जा सकता था। परन्तु आपके राजभक्तिपूर्ण उत्साहका जो कुछ उपयोग किया जा सकता था और आपकी साम्राज्यके पक्षमें कुछ कर दिखानेकी इच्छा तथा उत्सुकताकी पूर्तिके लिए जो अवसर दिया जा सकता था, उसके लिए अधिकारी प्रसन्नतापूर्वक तुरन्त तैयार हो गये। यद्यपि आपको मैदानमें लड़ने नहीं दिया गया फिर भी आपने घायलोंकी शुश्रूषा करके बहुत अच्छा काम किया। आपके सुयोग्य देशभाई भी चाँपीने डीव लयपर, रण-क्षेत्रसे घायल सैनिकोंको लानेके लिए

> स्वयंसेवकोंका संगठन करके जो निःस्वार्थ और अति उपयोगी काम किया उसके लिए मैं उनका जितना भी हार्दिक धन्यवाद करूँ वह थोड़ा ही होगा। उन्होंने यह कठिन कार्य ऐसे समय किया जब कि इसकी भारी आवश्यकता थी; और अनुभवसे पता चला कि यह काम जोखिमसे भी खाली नहीं था। जिस-जिसने यह सेवा की वे सब समाजकी कृतज्ञताके पात्र हैं।

भारतीयोंने देशभक्त महिला संघ (विमन्स पैट्रिऑटिक लीग)के कोषमें भी एक रकम (५७ पौंडसे ऊपर) दी जिसे बहुत अच्छी रकम बतलाया गया है। श्रीमती मक्कुँजीने इसके विषयमें लिखा था

> स्त्रियोंकी देशभक्त-निधिमें धनके इस दानसे जो विशेष रूपसे रणभूमिपर बीमार और घायल स्वयंसेवकोंकी सेवाके लिए दिया गया है, भारतीयोंकी भावनाओंकी बहुत ही स्वागतके योग्य और मुखर अभिव्यक्ति हुई है। उनके विचारसे भारतीय शरणार्थियोंके विशाल समूहको ही सहायता दे देना — जैसा कि वे चुके हाथों कर रहे हैं — काफी नहीं है बल्कि उन्हें हमारा खयाल है सम्राज्ञीके प्रति और जिस देशमें आकर वे रह रहे हैं उसके प्रति अपनी भक्तिके प्रतीकके रूपमें यह अतिरिक्त दान देना जरूरी मालूम हुआ है। हमारी भावनाओंका यह अंश — जिसकी ओरसे अक्सर बहुत कम बोला जाता है — जिस सच्ची भावनासे उत्प्रेरित है, उसे ऐसे राजभक्ति-प्रदर्शनसे ज्यादा अच्छी भाँति और कोई भी बात व्यक्त नहीं कर सकती।

भारतीय स्त्रियोंने इस सेवा-कार्यमें योग घायलोंके लिए तकियोंके गिलाफ और रूमाल आदि बनाकर, दिया था। इनके लिए कपड़ा भी भारतीय व्यापारियोंने दिया था जोकि उनके ऊपर उल्लिखित दानके अतिरिक्त था। इस सारे कठिन समयमें भारतीय अपने देशवासी उन हजारों शरणार्थियोंकी भी सहायता करते रहे जो कि ट्रान्सवाल और इस उपनिवेशके बोअर-अधिकृत भागोंसे आये थे। और यह सब उन्होंने लंदनसे आये हुए और यहाँ एकत्र किये हुए धनमें से कुछ भी लिये बिना किया। उस धनकी व्यवस्था शरणार्थी-सहायक समिति द्वारा पृथक की जाती रही।

डर्बनके मेयरने इस सेवाकी प्रशंसा (गत मार्चमें कहे हुए) इन शब्दोंमें की थी

> इस अवसरपर मेयरने भारतीय लोगोंको उनकी गत चार महीनोंकी सम्मानपूर्ण राजभक्तिके लिए धन्यवाद दिया। उनके बहुत-से बन्धुओंको उपनिवेशके अन्दरी भाग छोड़कर, शरण लेनेके लिए, यहाँ आना पड़ा था। उन्हें इन्होंने अपने आपमें मिला लिया, और उनके निर्वाहका व्यय भी ये ही उठाते रहे। इस सबके लिए मेयरने उनको हार्दिक धन्यवाद दिया।

यहाँ इस बातका उल्लेख भी बिना किसी अभिमानके किया जा सकता है कि ये सब सेवाएँ कोई पारितोषिक पानेकी इच्छासे नहीं की गई थीं। ब्रिटिश प्रजा होनेके कारण विशेषाधिकारोंका दावा करते हुए हम इन कर्तव्योंकी ओरसे मुँह नहीं मोड़ सकते थे। तिसपर ये सेवाएँ भी निःसन्देह तुच्छ ही थीं। इनका इनाम कुछ हो भी नहीं सकता था।

यह उल्लेखनीय होगा कि कैप्टेन न्यूमान आई० एम० एस० ने जो भारतीय सैन्य-सहायक कोष (इंडियन कैम्प फालोअर्स फंड) खोला था उसमें भी स्थानिक भारतीयोंने अच्छी सहायता की थी। उनका दान ५ पौंडसे ऊपर था। उपनिवेशमें बसे भारतीयोंने इसी प्रयोजनसे एक नाटक

किया था और उसकी सारी आमदनी जो २ पौंडसे अधिक थी इस कोषमें दे दी थी। यूरोपीयों और भारतीयोंके सम्बन्ध कितने अच्छे थे इसका एक उदाहरण यह है कि लेडीस्मिथ और किम्बरलेकी लड़ाइयाँ जीत लेनेपर ब्रिटिश सेनापतियोंको बधाई देनेके लिए भारतीयोंने जो बड़ी सभा की थी उसके सभापति सर जॉन रॉबिन्सन बने थे और उसमें पचाससे अधिक प्रमुख यूरोपीय नागरिक सम्मिलित हुए थे। उधर, भारतकी अकाल-पीड़ित जनताके लिए चन्देकी जो अपील निकाली गई थी उसका उत्तर नेटालके यूरोपीयोंने अति उदारतासे दिया था उनके चन्देकी राशि २ पौंडसे ऊपरतक पहुँच गई थी। इस निधिके संरक्षक नेटालके गवर्नर, अध्यक्ष डर्बनके मेयर, अवैतनिक कोषाध्यक्ष प्रवासी भारतीयोंके संरक्षक मन्त्री एक भारतीय सज्जन और कार्यकारिणीके सदस्य अनेक प्रमुख यूरोपीय धर्म-नायक और व्यापारी हैं। एक वर्ष पूर्व ऐसा मेल मिलना असम्भव था।

नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंके विषयमें प्रमुख यूरोपीयोंकी ये सम्मतियाँ उद्धृत करनेके पश्चात् शिकायतोंकी चर्चा करनेके लिए जमीन साफ हो गई है। २७ मार्च १८९७ की गश्ती चिट्ठीके साथ-साथ निम्न सारांशको भी पढ़ लेना अच्छा होगा

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशके विषयमें अभी इसके अतिरिक्त और कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं कि *जिन सब शिकायतोंको दूर करनेमें उपनिवेश-कार्यालयने इन दोनों राज्योंकी* पहलेकी स्थितिके कारण भारतीयोंके साथ कितनी ही सहानुभूति रखते हुए भी पहले अपनी असमर्थता प्रकट की थी उनमें से कोई भी अब नये शासन प्रबन्धमें बिलकुल नहीं रहने दी जायेगी क्योंकि इनमें नेटालकी तरह, उपनिवेशके स्वशासित होनेकी भावनाका विचार भी नहीं करना पड़ेगा।

जूलूलैंड अब नेटालका ही एक भाग है। इस कारण उसकी पृथक चर्चा करनेकी आवश्यकता नहीं। परन्तु यहाँ इतना अवश्य बतला देना चाहिए कि जब इसका शासन सीधा सम्राज्ञीके नामपर होता था तब कुछ नियम ऐसे थे जो जमीनोंकी नीलामीमें भारतीयोंको बोली लगानेसे रोकते थे। ये नियम इस इस उपनिवेशमें मिलानेसे पहले हटा दिये गये थे।

नेटालमें स्थिति पूर्ववत् ही है। प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमका पालन भारतकी परिस्थितियोंमें जितनी कठोरतासे किया जा सकता है उतनी कठोरतासे किया जा रहा है।

इसके अनुसार, ऐसा कोई भी व्यक्ति इस उपनिवेशमें प्रविष्ट नहीं हो सकता जो इस अधिनियमके साथ संलग्न फार्ममें किसी यूरोपीय भाषामें प्रार्थनापत्र न लिख सकता हो। अपवाद केवल उन व्यक्तियोंके लिए किया जाता है जो पहलेसे यहाँके निवासी बन चुके हों। अधिनियममें अनुमति न होते हुए भी जहाजी कम्पनियोंको इस आशयकी चेतावनी दे दी गई है कि जिन भारतीयोंके पास यहाँका निवासी होनेके प्रमाणपत्र न हों उनको वे यहाँ न लायें। ये प्रमाणपत्र पहले सम्बद्ध व्यक्ति अथवा उसके किसी मित्र द्वारा मौखिक प्रार्थना करनेपर ही बिना मूल्य दे दिये जाते थे। फिर इनका २ शिलिंग ६ पेंस मूल्य लिया जाने लगा। इसके बाद निवासी होनेके प्रमाणके रूपमें हलफनामा माँगा जाने लगा। फिर तो हलफनामोंकी शर्तें कड़ी की गईं और इसका प्रमाण भी माँगा जाने लगा कि प्रमाणपत्रके लिए प्रार्थना करनेवाला व्यक्ति कमसे-कम दो वर्षसे इस उपनिवेशका नागरिक है। और अब नवीन नई बात यह की गई है कि या तो उपनिवेशमें प्रवेश पानेके अभिलाषी व्यक्तिको अधिवासका प्रमाणपत्र लेनेका प्रार्थनापत्र स्वयं देना चाहिए, या किसी ऐसे व्यक्तिसे शपथ लेकर अधिवासका प्रमाण पेश करना चाहिए, जिसकी प्रतिष्ठा सुविदित हो। इस प्रकार प्रकट है कि प्रतिबन्धका अमल समय

१. देखिए खण्ड १, पृष्ठ ११२।

बीतनेके साथ दूहसे दूढ़तर होता गया है। इस सबका परिणाम व्यवहारमें यह है कि चन्द लोगोंके अतिरिक्त सब लोगोंके लिए उपनिवेशमें आनेके द्वार बन्द हो गये हैं। इस सम्बन्धमें सरकारकी ओरसे सफाई यह दी जाती है कि जो लोग अधिवासका प्रमाणपत्र लेना चाहते हैं उनके लिए, उपनिवेशसे बाहर जानेसे पूर्व अपने हस्ताक्षरोंसे प्रार्थनापत्र देना कुछ कठिन नहीं होना चाहिए। यह सफाई सर्वथा संगत हो जाती यदि नई पाबन्दी केवल उन लोगोंपर लगाई जाती जो कि अबके बाद उपनिवेशसे बाहर जानेवाले होते। जो पहलेसे उपनिवेशके बाहर हैं उनकी इसके कारण अवश्य ही भारी हानि हो जायेगी। भारतमें बैठा हुआ कोई व्यक्ति यदि यह प्रमाणपत्र लेना चाहे तो उसे एक वर्षतक भी राह देखनी पड़ सकती है। भारत और दक्षिण आफ्रिकाके बीचमें डाकका आना-जाना जितना हो सकता है उतना अनियमित है। तिसपर इस बातका कोई निश्चय नहीं कि प्रवासी-अधिकारीके पास प्रार्थनापत्र पहुँच जानेपर अधिवासका प्रमाणपत्र मिल ही जायेगा क्योंकि यह असम्भव नहीं है — ऐसा पहले कई बार हो चुका है — कि प्रार्थनापत्रको कोई वास्तविक अथवा कल्पित भूलें सुधारनेके लिए बार-बार भारत लौटाया जाता रहे। कहनेको तो जिन गोटियोंके पीछे कानूनकी ताकत नहीं उनमें जहाजी कम्पनियाँ अवज्ञा कर सकती हैं और जो भारतीय उपनिवेशमें आना चाहते हैं वे ऐसे अधिवास-प्रमाणपत्र लेनेसे इनकार कर सकते हैं जिनका कानूनमें विधान नहीं है परन्तु व्यवहारमें जहाजी कम्पनियाँ उक्त प्रमाणपत्र देखे बिना यात्राका टिकट देनेसे इतनी दृढ़तापूर्वक इनकार कर देती हैं कि जो लोग अंग्रेजीमें प्रार्थनापत्र लिखनेकी योग्यताके बलपर टिकट खरीद सकते हैं उनको भी उक्त प्रमाणपत्र दिखाये बिना टिकट नहीं दिया जाता। कम्पनियाँ कानूनकी इस शर्तपर कोई ध्यान नहीं देतीं कि ऐसे व्यक्तियोंके लिए अधिवास प्रमाणपत्र लेनेकी आवश्यकता नहीं। इन लम्बे चौड़े प्रतिबन्धोंको लगानेका कारण यह बतलाया जाता है कि कोई कानूनसे बचकर न निकल जाये। इस प्रकार बच-निकलनेके कुछ मामले हुए अवश्य हैं परन्तु इस सम्बन्धमें निवेदन है कि उनका उपयोग स्वभावतः कठोर कानूनको अनुचित रूपसे और भी कठोर बनानेके लिए और ब्रिटिश संविधानके आधारभूत सिद्धान्तोंका उल्लंघन करनेके लिए, नहीं किया जाना चाहिए। कानूनको तरकानेकी सुल्लम-सुल्ला निन्दा करनी चाहिए। आवश्यकता हो तो उसके लिए दण्ड भी देना चाहिए। अधिनियममें ही इसके लिए पर्याप्त व्यवस्था कर दी गई है। दुर्भाग्यवश इस व्यवस्थाका लाभ नहीं उठाया गया। इसका परिणाम यह है कि उन थोड़े-से अपराधी व्यक्तियोंके दोषके कारण निरपराधियोंको परेशान होना पड़ रहा है। कानूनकी कठोरतामें कमी करानेके उद्देश्यसे स्थानीय अधिकारियोंको प्रेरित करनेके लिए जो कुछ किया जा सकता है वह सब किया गया है और किया जा रहा है। और यहाँ इस बातका जिक्र न करना अनुचित होगा कि अधिकारियोंने भारतीयोंकी इच्छा पूरी करनेका प्रयत्न एक हदतक किया भी है। परन्तु उपनिवेश-कार्यालयके दबावसे इससे अधिक बहुत-कुछ किया जा सकता है — अभी नहीं तो युद्धकी समाप्तिके पश्चात्। हमने देखा है कि सरकारने युद्धकालमें उपनिवेश-कार्यालयकी बात मानी भी है।

इस कानूनका एक और परिणाम यह है कि जो लोग इस उपनिवेशसे गुजरना या यहाँ कुछ समय रहकर जाना चाहते हैं उनपर कष्टदायक प्रतिबन्ध लगाये जा रहे हैं यद्यपि ये दोनों ही काम कानून द्वारा निषिद्ध नहीं हैं। परन्तु सरकारने भारतीयोंका कानूनसे बचकर उपनिवेशमें बसना रोकनेके लिए दो प्रकारके परवाने चला दिये हैं। एकको आगमन-पत्र (विजिटिंग पास) और दूसरेको प्रस्थान-पत्र (एम्बार्केशन पास) कहा जाता है। यह शायद उसने ठीक ही किया है। इन कारण आपत्ति इन परवानोंपर इतनी नहीं है जितनी इन्हें जारी करनेकी शर्तोंपर

है। पहले यात्रा-पत्र देनेके लिए २५ पौंडकी जमानत जमा करवाई जाती थी और आगमन-पत्र या प्रस्थान-पत्र देते हुए १ पौंडकी फीस ली जाती थी। पीछे भारतीय लोगोंके प्रार्थना करनेपर, सरकारने २५ पौंडकी रकम घटाकर १ पौंड कर देने और १ पौंडकी फीस हटा देनेकी कृपा कर दी। १ पौंडकी जमानत अब भी ली जाती है। यह रकम सरकारकी दृष्टिमें भले ही छोटी हो परन्तु इसके कारण यहाँ आनेके अभिलाषियोंको बहुत कठिनाई होती है, और उनमें से सब उसे दे भी नहीं सकते। इस अधिनियमके कारण ही ट्रान्सवालके भारतीय शरणार्थियोंसे भरे हुए एक जहाजको डेलागोआ-बेसे अपना मार्ग बदल लेना पड़ा था। इन शरणार्थियोंको नेटाल आने दिया जाता तो इनका युद्धके बाद भारतसे डेलागोआ-बेतक लौटनेका खर्च तो बच ही जाता पहले ही जो भारत अकालसे पीड़ित है, उसपर इनका भी बोझ न पड़ता।

दूसरा अधिनियम है — विक्रेता-परवाना अधिनियम (डीलर्स लाइसेन्सेज ऐक्ट)। इसे दूसरा कहनेसे यह नहीं समझ लेना चाहिए कि इसका नम्बर महत्त्वकी दृष्टिसे भी दूसरा ही है। यह तो सबसे खराब है। हाँ इस समय इसके दुष्प्रभावका अनुभव नहीं हो रहा है। टांगोआटे परेका देस अब भी सैन्य-सैनिक शासन में है। न्यूकैसिल डेनीसिम और डंडीके निगम (कारपोरेशन) १८९८ में इस अधिनियमका कड़ाई तथा कठोरतापूर्वक प्रयोग करनेके कारण बदनाम हो गये थे। वे दुर्भाग्यवश अबतक बोअरोंके शासनके कष्टोंसे मुक्त नहीं हो सके। डर्बन और मैरित्सबर्गके परवाना-अधिकारियोंने बहुत परेशान नहीं किया। जनवरीमें जब नये परवाने लेनेका समय आयेगा तब क्या होगा यह अभीसे बतलाना कठिन है। परन्तु व्यापारी बेचारे अभीसे घबरा रहे हैं क्योंकि उन्हें इस अधिनियमके कारण प्रतिवर्ष अनिश्चित अवस्थाओंका सामना करना पड़ता है। जनताके मित्रोंको स्मरण होगा कि श्री चेम्बरलेनने नेटाल-सरकारको सुझाया था कि वह उस कानूनमें इस आशयका संशोधन करवा दे कि जिस धाराके अनुसार सर्वोच्च न्यायालयको पर वाना-अधिकारियों या नगरनिगमोंके फैसलोंके विरुद्ध अपील सुननेके अधिकारसे वंचित कर दिया गया है, उसे अधिनियममें से निकाल दिया जाये। इसपर नेटाल-सरकारने सब नगरपालिकाओंको लिखा था कि यदि आपने इस अधिनियमके द्वारा मिले हुए अधिकारोंका प्रयोग न्यायपूर्वक न किया तो सरकारको इसमें उक्त संशोधन कर देना पड़ेगा। यहाँतक जितना-कुछ हुआ वह अच्छा ही हुआ परन्तु आशा करनी चाहिए कि उपनिवेश-कार्यालय इतने मात्रसे सन्तुष्ट नहीं होगा। न्यूनतम आवश्यकता यह है कि प्रत्येक भारतीय परवानेदारके सिरपर अनिश्चितताकी जो तलवार लटक रही है उसे हटा लिया जाये और यह काम सर्वोच्च न्यायालयको उसके अधिकार पुनः देकर ही किया जा सकता है। प्रिटोरियामें जब श्री क्रूगरने उच्च न्यायालयके अधिकार छीनकर अपने हाथमें ले लिये थे तब बड़ा शोर मचा था (और ठीक ही मचा था)। परन्तु इस छीना-झपटीसे थोड़ी-बहुत रक्षा बाहर ट्रान्सवालके संविधानके स्वरूपके कारण ही हो जाती थी। परन्तु नेटालका संविधान सुव्यवस्थित है उसमें सब सावधानताएँ विद्यमान हैं इस कारण देशके सर्वोच्च न्यायालयको अधिकार-च्युत कर दिये जानेपर संविधानसे सहायता नहीं मिल सकती और खतरा बहुत भारी वास्तविक तथा भयंकर हो जाता है क्योंकि उसे विधान मण्डलकी भी गम्भीर अनुमति मिल चुकी है।

इस कथनकी यथार्थताको समझनेके लिए इतना स्मरण कर लेना पर्याप्त होगा कि ट्रान्सवालमें कानूनोंकी अनिश्चितता होते हुए भी वहाँ क्या-कुछ होना सम्भव हो गया था। यहाँकी नगर-परिषदें ब्रिटिश संस्थाएँ होनेके कारण न्यायालयोंसे डरती और उनका सम्मान अवश्य करती हैं परन्तु जब उनपर न्यायालयोंका स्वस्थ प्रतिबन्ध नहीं रहेगा तो वे क्या-कुछ कर डालनेका प्रयत्न करेंगी इसकी कल्पना सुगमतासे की जा सकती है। युद्धके कारण इस मामलेमें

उपनिवेश-कार्यालयतक जानेका रास्ता भी बन्द पड़ा है। इस सम्बन्धमें स्थानीय सरकारके हमारा पत्र-व्यवहार यस हो रहा था कि युद्ध छिड़ गया और यह उचित समझा गया कि मामलोंके विचार जानेतक उनकी कार्रवाई रोक दी जाये।

९ बजेके बाद घरोंसे बाहर न रहनेके नियम और अन्य अनेक कठिनाइयोंका पत्रों-चिट्ठीमें जिक्र किया जा चुका है। उन्हें यहाँ दुहरानेकी आवश्यकता नहीं। उनसे यह पता चल ही जाता है कि इस उपनिवेशमें भारतीयोंको क्या-क्या कष्ट उठाने पड़ते हैं। ब्रिटिश प्रजा होनेके कारण कागज-पत्रोंमें तो हम और उपनिवेशवासी एक ही हैं परन्तु वास्तविकता ऐसी नहीं है। सचमुच एक हो जायें इसके लिए तो हम बहुत-कुछ देनेको तैयार हैं। यदि प्रवासी प्रतिबन्धक और विक्रेता-परवाना कानूनोंकी परेशानियाँ दूर हो गईं, तो अपेक्षाकृत छोटी-छोटी और शिकायतोंके कारण जनताके अपने मित्रोंको कष्ट देनेके लिए बहुतेरा समय मिल जायेगा।

एक बात हमारे हृदयको प्रतिदिन बड़ा कष्ट पहुँचा रही है और वह है भारतीय बालकोंकी शिक्षाका प्रश्न। यहाँका शासन बहुमतसे चलता है। इस कारण शायद सरकार भी भारतीयोंकी सहायता करनेमें अपनेको असमर्थ पाती है। यह अस्वाभाविक भी नहीं है। परन्तु इसका परिणाम यह हो रहा है कि भारतीय बालकोंके लिए साधारण प्राइमरी और हाईस्कूलोंके दरवाजे बिलकुल बन्द हो गये हैं। सुनते हैं कि डर्बन हाईस्कूलके मुख्याध्यापकने कुछ समय पूर्व शिक्षा-मन्त्रीको लिखा था कि यदि एक भी भारतीयको दाखिल किया गया तो सब माता-पिता अपने बालकोंको निकाल लेंगे। परन्तु हमारा तर्क यह है कि सरकारी स्कूल जिन करोंके द्वारा चलाये जाते हैं उन्हें भारतीय और यूरोपीय दोनों देते हैं, इसलिए उपनिवेश-कार्यालयको चाहिए कि वह स्थानीय सरकारको स्पष्ट बता दे कि इन स्कूलोंमें शिक्षण पानेका भारतीयों और यूरोपीयोंका अधिकार समान है। मुख्याध्यापकने जो धमकी दी है (वह धमकीसे कम कुछ नहीं है) उसका तर्क-संगत परिणाम यह होगा कि यदि जीवनके हरएक पहलूमें उसपर अमल किया जाने लगा तो उपनिवेशमें भारतीयोंकी मान-मर्यादा बिलकुल नहीं रहेगी। यदि उपनिवेशमें किसी व्यापारिक स्थानके थोड़े-से यूरोपीय व्यापारियोंका गिरोह सरकारको यह धमकी देने लगे कि हमारे पड़ोससे कुछ भारतीय व्यापारियोंको हटा दो वरना हम सारा बाजार खाली कर देंगे तो उन्हें ऐसा करनेसे रोक कौन सकेगा?

आवश्यकता हो तो अधिक जानकारीके लिए निम्न वस्तुओंका संकेत किया जाता है

प्रार्थनापत्र (प्रवेश और व्यापारके परवानों आदिके विषयमें) २ जुलाई १८९७।

प्रार्थनापत्र (व्यापारके परवानोंके विषयमें) ११ दिसम्बर १८९८।

सामान्यपत्र (परवाने) ११ जुलाई, १८ ९।

टाइम्स ऑफ इंडिया (साप्ताहिक संस्करण) के ११ मार्च १८९९, १५ और २२ अप्रैल १८९९, १९ अगस्त १८९९, ९ दिसम्बर १८९९, ६ जनवरी १९ और १६ जून १९ के अंकोंमें दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी समस्याओंपर प्रकाशित विशेष लेख और सम्पादकीय टिप्पणियाँ।

छपी हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १४७४-ए) से।

१ वाक्य तीनों प्रार्थनापत्र, सामान्यपत्र, नेटाल-मर्क्युरीके नाम प्रार्थनापत्र तथा विशेष लेख इस खण्डमें तिथिक्रमसे दिये गये हैं।

१०१ पत्र टाउन क्लार्कको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन, नेटाल
सितम्बर २४ १९

सेवामें
श्री विलियम कूली
टाउन क्लार्क
डर्बन

महोदय

जैसे ही यह प्रकट हुआ था कि नगर-परिषद एक ऐसा उपनियम जारी करना चाहती है जिससे कि "सिर्फ यूरोपीयोंके लिए" लिखी हुई तख्तीवाले रिक्शोंमें रंगदार लोगोंको बैठाना रिक्शा चलानेवालोंके लिए अपराध ठहरा दिया जाये वैसे ही अनेक भारतीयोंने मुझसे एक विरोध-पत्र लिखनेको कहा था। परन्तु उस समय मुझे लगा था कि ऐसा करना उचित नहीं होगा। मैंने सोचा था कि जबतक भारतीयोंके लिए भी वैसी ही सवारियाँ उपलब्ध हैं तबतक अगर यूरोपीय उनके साथ स्थान बैठानेमें आपत्ति करते हैं तो भारतीयोंका उनके द्वारा काममें लाये जानेवाले रिक्शोंमें बैठनेके अधिकारका आग्रह करना भारतीय समाजके स्वाभिमानके विपरीत है। परन्तु अब मैं महसूस करने लगा हूँ कि मैंने वह सलाह देनेमें एक गम्भीर गलती की।

उपनियमके व्यावहारिक प्रयोगसे सभी वर्गोंके भारतीयोंमें चिढ़ पैदा हुई है और हो रही है। उस परिषदकी नजरमें न लाना मेरी हिमाकत होगी।

मैं निस्संकोच स्वीकार करता हूँ कि समस्याका हल आसान नहीं है। फिर भी शायद वह बिलकुल ही हलके परे नहीं है। इस पत्रमें मैं कानूनी प्रश्न उठाना नहीं चाहता हालाँकि मेरी नम्र मान्यता यह है कि उक्त उपनियम गैर-कानूनी है। मैं अगर सम्भव हो तो परिषदकी सद्भावनाको प्रेरित करके आंशिक राहत प्राप्त करना चाहता हूँ।

मुझे भरोसा है कि आपत्ति सवारीके रंगपर उतनी नहीं की जाती जितनी कि उसके बरे कपड़ों या रूपपर। अगर यह सही है तो क्या रिक्शा चलानेवालोंको यह निर्देश दे देना सम्भव न होगा कि वे ऐसी सवारियोंको न लें? मुझे बताया गया है कि रिक्शा चलानेवाले ऐसे निर्देशोंको समझने और उनका पालन करनेके लिए काफी चतुर हैं। यह सुझाव स्पष्टतः कठिन है और दिक्कतों व अन्यायसे मुक्त तो होगा ही नहीं परन्तु इससे अमीकी तीव्र कटुता कम हो जानेकी सम्भावना है।

उपनियम बहुत कठोरतासे काममें लाया जा रहा है। ऐसी हालतमें वह अपने ही उद्देश्यको विफल कर सकता है। और, मेरी नम्र रायसे उसको संपर्दक बिना तभी कार्यान्वित किया जा सकता है जब कि उसके प्रयोगमें विवेकका काफी अच्छा पुट हो। मेरा निवेदन है यह कोई छोटी बात नहीं है कि जो सैकड़ों रंगदार लोग अबतक रिक्शोंको स्वतंत्रतापूर्वक एक प्रकारके वाहनके रूपमें काममें लाते रहे हैं वे अब एकाएक अपने-आपको उनके उपयोगसे वंचित पाते हैं क्योंकि मुझे मालूम हुआ है ऐसे रिक्शे बहुत ही कम हैं जिनमें उपर्युक्त तख्ती न लगी हो।

नकलें भी मैं अलग लिफाफेमें भेज रहा हूँ। ये टिप्पणियाँ सर विलियम वडरबर्नकी इच्छासे तैयार की गई थीं। इनसे वर्तमान स्थितिकी कुछ कल्पना मिल जायेगी और जो सज्जन प्रस्तावकी जिम्मेदारी लेंगे उनके शायद कुछ काम आयेंगी। बेशक प्रस्तावमें विषय-समिति जो परिवर्तन या संशोधन करना उचित समझे वह किया जा सकता है।

इस विषयका महत्त्व केप-विधानमण्डलके एकाएक और अनपेक्षित रूपसे सजग हो उठनेके कारण विशेष बढ़ गया है। आप जानते ही हैं कि उसके सदस्य बहुत मुश्किलसे दो वर्गोंमें बँटे हुए हैं। यों तो उनके विचार एक-दूसरेके बिलकुल विरोधी हैं परन्तु भारतीय प्रश्नपर दोनों दल एकमत दिखलाई पड़ते हैं। केप टाइम्सकी एक कतरन[1] इसके साथ नत्थी है। उसमें केप विधान सभामें हुई बहसकी कार्यवाही प्राय: पूर्ण रूपमें दी गई है। उससे आपको कुछ कल्पना हो जायेगी कि दक्षिण आफ्रिकाके उस हिस्सेमें क्या हो रहा है। स्पष्टत: केपके सभासद नेटालसे भी आगे बढ़ जानेको आतुर हैं मानो नेटालने भारतसे आनेवाले नये लोगोंके लिए अपने दरवाजे करीब करीब बिलकुल ही बन्द न कर दिये हों। वे तो भारतीय मात्रको बरदाश्त करना नहीं चाहते — फिर वे व्यापारी हों मुंशी हों या मजदूर हों। श्री चेम्बरलेनके रूपमें उन्हें एक ऐसे उपनिवेश मन्त्री मिल गये हैं जो स्वशासित उपनिवेशोंकी इच्छाओंको मान देनेके लिए किसी भी हदतक बढ़नेको तैयार हैं। दूसरी ओर, इंडिया आफिस भयकर रूपसे निष्क्रिय दिखलाई पड़ता है। परन्तु, यह देखते हुए कि इस प्रश्नपर भारतीयों और आंग्ल-भारतीयोंके बीच ऐकमत्य है उक्त कार्यालयको उचित रूपसे काम करनेके लिए जगा देना और कुछ राहत प्राप्त कर लेना सम्भव हो सकता है। एक प्रभावशाली शिष्टमंडल लॉर्ड कर्जनसे मिले तो संभव है इस दिशामें बहुत-कुछ हो जाये।

केप उपनिवेशका रुख यह बतलाता मालूम होता है कि भारतने जो सेवाएँ प्रदान की हैं वे बिलकुल भुला दी जायेंगी और, अगर केप उपनिवेशके लोगोंकी बात चली तो भारतीयोंके साथ सामाजिक कोढ़ियों जैसा व्यवहार किया जायेगा। भारत द्वारा प्रदान की गई सेवाएँ ये थीं कि जो आदमी शत्रुकी प्रबल बाढ़को रोकनेके लिए सबसे पहले आगे गया वह था अपनी भारतीय टुकड़ीके साथ सर जॉर्ज व्हाइट और लेडीस्मिथके घेरेमें तथा प्रारम्भिक पराजयोंमें जो अक्सर पर काम आये — और इसे सबने मंजूर किया है — वे थे सैकड़ों डोली-वाहक।[2] इनके अलावा स्वयंसेवकों (लम्सडेन्स हॉर्स) का जिसका सारा साज-सामान भारतीयोंके चन्देसे खरीदा गया था भिश्ती-दलका और अन्य भारतीय सेवकोंका जो जहाज भर-भर कर भारतसे भेजे गये थे और उस डोली-वाहक दलका तो जो स्थानिक रूपसे संगठित किया गया था कहना ही क्या है।

नेटाल फिलहाल नाराज नहीं मालूम होता। परन्तु उसकी नाराजी फूट पड़नेमें और, भय है भारतीय-विरोधी अपनी स्थितिपर उसके और जमनेमें बहुत-कुछ अरसा न होगा। जो सज्जन प्रस्तावपर भाषण दें उनसे यह विनय किया जाये कि वे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करें भारतीय अकाल-निधिमें नेटालने उदारतापूर्ण योग दिया है और प्रभुसिंहके लिए १ पौंड चन्दा भी इकट्ठा किया है। प्रभुसिंह एक गिरमिटिया भारतीय है जिसने लेडीस्मिथमें बिलकुल अनोखी सेवा की थी और जिसकी बहादुरीकी सर जॉर्ज व्हाइटने सार्वजनिक रूपसे प्रशंसा की थी। (यही वह आदमी है जिसके लिए लेडी कर्जनने एक चोगा भेजा था। वह पिछले दिनों सार्वजनिक

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. डोली-वाहक।

सभामें उसे भेंट किया गया था)। अकाल-निधिका चन्दा ४५ पौंडसे ज्यादा है। उसका करीब आधा हमारे समाजने दिया है।

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशके द्वार भारतीयोंके लिए बिलकुल खुले होने चाहिए। परन्तु हम सब इस मामलेमें घबराये हुए हैं कि क्या होगा क्या नहीं।

यह बतानेके लिए कि दक्षिण आफ्रिकाके लोग किस हदतक बढ़नेको तैयार होंगे एक साल पहले उत्तरी रोडेशिया में जो-कुछ हुआ था[1] ।

[अपूर्ण]

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस एन १७४१।

१०३ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अक्तूबर २६, १९

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं आदरपूर्वक पूछना चाहता हूँ कि भारतीयोंको सम्राज्ञी-सरकारकी जमीन बेचनेपर कोई प्रतिबन्ध है या नहीं।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ ८९५८/९९ ।

१०४ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
नवम्बर ८ १९००

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मेरे पिछले महीनेकी २६ तारीखके पत्रके उत्तरमें आपका ७ तारीखका कृपापत्र प्राप्त हुआ। मैंने आपसे पूछा था कि भारतीयोंको सम्राज्ञी-सरकारकी जमीन बेचनेपर कोई प्रतिबन्ध है या नहीं और आपने जो पूरा-पूरा उत्तर देनेकी कृपा की है तथा साथमें जो कागजात भेजे हैं उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

१ देखिए "रोडेशियामें भारतीय व्यापारी" मार्च ११, १८९९ ।

मुझे पता चला है कि पोर्ट शेप्स्टनके श्री दाम मुहम्मदने वहाँके श्री वार्नेससे मई १८९८ में ४५ नम्बरकी मकानकी जमीन खरीदी थी। इसकी विज्ञप्तियाँ तैयार करके उनपर हस्ताक्षर भी कर दिये गये थे। मुझे यह भी बताया गया है कि जब विज्ञप्तियाँ बड़े पैमाइश-अफसरके दफ्तरमें ले जाई गईं उस अफसरने हस्तान्तरणको दर्ज करनेसे इनकार कर दिया। मालूम होता है कि विज्ञप्तियोंको दफ्तरमें श्री पिचर ले गये थे। उनसे पूछ-ताछ करनेपर मुझे पता चला है कि उक्त अफसरने अपनी इनकारीका कारण यह बताया था कि जिसको जमीन दी जा रही है वह व्यक्ति एक भारतीय है। और आगे पूछनेपर कि क्या बड़े पैमाइश-अफसरने अपने फैसलेका कोई कानूनी आधार बताया था श्री पिचरने मुझसे कहा कि उसने बताया था वह सरकारी आदेशोंके अनुसार कार्रवाई कर रहा है।

उपर्युक्त जानकारी आपके पत्रमें निहित जानकारीके विरुद्ध दिखाई पड़ती है।

क्या मैं जान सकता हूँ कि इस खास मामलेके सम्बन्धमें क्या हुआ और क्या सरकार बड़े पैमाइश-अफसरको कृपा कर यह आदेश भेज देगी कि वह हस्तान्तरणको दर्ज कर ले? मुझे बताया गया है कि मेरा मुवक्किल जमीनकी कीमतका कुछ हिस्सा पहले ही श्री वार्नेसको दे चुका है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ ८१५८/९९।

१०५ तार: गवर्नरके सचिवको

[डर्बन]
जनवरी ३, १९

सेवामें
परमश्रेष्ठ गवर्नरके निजी-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

लॉर्ड रॉबर्ट्सके डर्बन आने पर ब्रिटिश भारतीय उन्हें एक नम्र अभिनन्दनपत्र देना चाहते हैं। क्या मैं परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयसे निवेदन कर सकता हूँ कि वे लॉर्ड महोदयसे पता कर दें कि वे अभिनन्दनपत्र स्वीकार करनेकी कृपा करेंगे या नहीं। यदि करेंगे तो कृपया समय और स्थान नियत कर दें।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३५४२) से।

१०६. तार: "गुल[1]"

[डर्बन]
दिसम्बर ८, १९

सेवामें
गुल
केपटाउन

केपके भारतीयोंकी ओरसे कोई रॉबर्ट्सको अभिनन्दनपत्र दें। उनके पुत्रकी मृत्युका जिक्र नहीं करना चाहिए। दक्षिण आफ्रिकामें उनके शानदार कामों पर उन्हें बधाई दें। राजनीतिकी कोई चर्चा न हो।

गांधी

नकल अलीको
मारफत डर्बन रोड
मोब्रे

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५५५१) से।

१०७. भाषण: भारतीय विद्यालयमें

डर्बनके उम्बगर ग्रोवी (हमर ग्रेव) भारतीय विद्यालयके मध्य ग्रीष्मावकाश समारोहके मौकेका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है।

दिसम्बर २८, १९

प्रधानाध्यापकके कार्यके बारेमें बोलते हुए श्री गांधीने कहा कि अच्छीसे अच्छी संस्था भी निकम्मी हो सकती है, अगर उसे जीवन देनेवाले कोई व्यक्ति न हों। उम्बगर ग्रोवी (हायर ग्रेव) भारतीय स्कूल इस बातका अच्छा उदाहरण है। भारतीय पालकोंको चाहिए कि वे सरकारको धन्यवाद दें जिसने उनके स्कूलके लिए श्री कोलोजी जैसे प्रधानाध्यापकको भेजा जिन्होंने स्कूलको अपना लिया। उनके इस महान् कार्यमें श्रीमती कोलोजीने भी उनकी मदद की है और श्री कोलोजीके भाईने भी जो हाल ही में इंग्लैण्डसे आये हैं कृपापूर्वक अपनी सामोकी सेवा स्कूलको सौंप दी है। श्री कोलोजी और उनके साथी जिस लगन और उत्साहके साथ अपना काम कर रहे हैं उसके लिए सचमुच भारतीय समाज उनका आभारी है। स्कूलका अपना खेलका मैदान नहीं है। इसको लक्ष्य करते हुए श्री गांधीने कहा कि डेस्क और अन्य सामानकी टूटफूट तथा हटाने-धरनेके लायक थोड़ी और अच्छी थोड़ियाँ बहुत कम खर्चमें मिल सकती हैं। इससे कुछ अंशोंमें खेलके मैदानकी कमी पूरी हो जायेगी। श्री पोलकने माता-पिताओंको अपने ही बच्चोंके लिए खोले गये स्कूलका फायदा उठानेकी जो प्रेरणा दी है, उसका श्रेय उन्हें दिये बिना रहा नहीं जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २२-१२-१९

१. हाजी गुल केपटाउनके एक प्रमुख भारतीय।

इन आधारोंपर हमारी प्रार्थना है कि उक्त नियमको रद कर दिया जाये या उसमें ऐसा संशोधन कर दिया जाये जिससे कि जिन असुविधाओंकी शिकायत की गई है, वे उससे न हों।

और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए आपके प्रार्थी सदैव दुआ करेंगे आदि आदि।

एम सी० कमरुद्दीन ऐंड कम्पनी
और पच्चीस अन्य

[अंग्रेजीसे]

डर्बन टाउन कौंसिल रेकर्ड्स १९ १।

१०९ पत्र प्रवासी-संरक्षकको

ओल्ड बेरिया
फरवरी १६, १९ १

प्रवासी-संरक्षक
डर्बन

महोदय

वेल्लगासु और विलियम्सन[1]

यह मामला पुनर्विचारके लिए सर्वोच्च न्यायालयके सामने प्रस्तुत हुआ था। न्यायालयने निर्णय किया कि किसी मजिस्ट्रेटके निर्णयके विरुद्ध अपील करनेपर बड़ा अदालत (सर्किट कोर्ट) के न्यायाधीशने जो निर्णय किया हो उसपर पुनर्विचार करनेका इस (सर्वोच्च) न्यायालयको अधिकार नहीं है।

इससे तबादलेके सम्बन्धमें कानूनकी व्याख्याका प्रश्न वहीं अटका गया है जहाँ न्यायाधीश म्यूनीने उसे छोड़ा था। इस मामलेको लेकर जब मैं आपकी सेवामें उपस्थित हुआ था तब आपने यह वचन देनेकी कृपा की थी कि यदि सर्वोच्च न्यायालयने यह निर्णय किया कि उसे इसपर विचार करनेका अधिकार नहीं है तो आप गवर्नरसे सजाको माफ कर देनेकी सिफारिश करेंगे। यह एक ऐसा तथ्य है, जो स्वयं प्रकट करता है कि न्यायाधीश म्यूनीका निर्णय ठीक नहीं है।

इसलिए अब मैं इस मामलेको आपपर ही छोड़कर, इसके कागज-पत्र इसके साथ नत्थी कर रहा हूँ।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेटालके गवर्नर द्वारा १९ फरवरी १९ १ को सम्राटके मुख्य उपनिवेश-मन्त्रीके नाम भेजे गये खरीता नं० ४९ का सहपत्र।

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स साउथ आफ्रिका जनरल १९ १।

[1] वेल्लगासु नामके एक गिरमिटिया भारतीयको विलियम्सन नामक व्यक्तिकी बीबीकी बदनीयतीसे कामसे कतराकर भागनेके अभियोगमें १ पौंड जुर्माने या जुर्माना न देनेपर, बेंतकी सजा दी गई थी। चूँकि वेल्लगासुके मालिकने विलियम्सनका पक्ष लेकर दावा कर दिया था, गांधीजीने यह दलील पेश की थी कि किसी भी गिरमिटिया भारतीयका तबादला प्रवासी-संरक्षककी अनुमतिसे ही किया जा सकता है। बड़ा अदालत (सर्किट कोर्ट) के न्यायाधीशने उनकी यह दलील नामंजूर कर दी और सजा बहाल रखी।

११० महारानी विक्टोरियाकी मृत्यु

[डर्बन]
जनवरी २२, १९०१

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

नेटालकी भारतीय कांग्रेस-समितिने मुझे आपसे निवेदन करनेका निर्देश दिया है कि आप उसका निम्नलिखित सन्देश तार द्वारा राज-परिवारको भेज दें "नेटालके ब्रिटिश भारतीय राज-परिवारके प्रति उसके शोकमें अपनी विनम्र समवेदना प्रकट करते हैं और पृथ्वीकी महानतम तथा सबसे अधिक प्रिय सम्राज्ञीकी मृत्युके रूपमें साम्राज्यकी जो क्षति हुई है उसपर शोक मनानेमें सम्राज्ञीकी दूसरी सन्तानोंके साथ शामिल हैं।"

गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १७१/१९०१।

१११ महारानीकी मृत्युपर शोक

[डर्बन]
फरवरी १, १९०१

सेवामें
हाजी जमालखाँ
डंडी

आपका पत्र। हम शनिवारको सुबह महारानीकी प्रतिमापर फूल-माला चढ़ानेके लिए एक विराट जुलूस ले जा रहे हैं[1]। कृपया वहाँ भी कुछ ऐसा ही करें जैसे कि स्मृतिमें प्रार्थना। ध्यान रहे सारा कारोबार बन्द रहना चाहिए।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन ३७११) से।

१ गांधीजी तथा अब्बर जुलूसका नेतृत्व कर रहे थे। वे ही अपने कन्धोंपर फूल-माला लिये थे।

११२ महारानीकी मृत्युपर शोक

[डर्बन]
फरवरी १, १९०१

सेवामें
(१) अमद भायात
(२) गॉडफ्रे अमरेमी न्यायालय
(३) स्टीफन सर्वोच्च न्यायालय
पीटरमैरित्सबर्ग

हम कोशिश कर रहे हैं महारानीकी प्रतिमापर पुष्प-माला चढ़ानेके लिए शनिवारको सवेरे भारतीयोंका एक भारी जुलूस वेस्ट स्ट्रीटसे निकाला जाये। कृपया वहाँ भी कुछ ऐसा ही करें। ध्यान रहे, कल सारा कारोबार बिलकुल बन्द रहना चाहिए।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३७६७) से।

११३ महारानी विक्टोरियाको श्रद्धांजलि

डर्बनमें पुष्प-माला चढ़ानेके अवसरपर श्री गांधीने एक भाषण दिया था। निम्न उसका समाचारपत्रोंमें प्रकाशित एक संक्षिप्त विवरणके आधारपर दिया जा रहा है।

[फरवरी २, १९०१]

श्री मो० क० गांधीने स्वर्गीया महारानीके उदात्त गुणोंका बखान किया। उन्होंने १८५८ की भारतीय घोषणा तथा भारतीय कामोंमें महारानीकी गहरी दिलचस्पीका जिक्र किया और बताया कि किस प्रकार बुढ़ापेमें उन्होंने हिन्दुस्तानी भाषाका अध्ययन प्रारम्भ किया था और यद्यपि वे अपनी प्यारी प्रजासे मिलनेके लिए स्वयं भारत नहीं जा सकीं फिर भी किस प्रकार उन्होंने अपना प्रतिनिधित्व करनेके लिए अपने पुत्रों तथा पौत्रोंको वहाँ भेजा था।

[अंग्रेजीसे]
नेटाल ऐडवर्टाइज़र, ४-२-१९०१

११४. तार तैयबको[1]

[डर्बन]
फरवरी ५, १९०१

सेवामें
तैयब
मारफत मुल
केपटाउन

आपका तार। चार नाम[2] हैं — कमरुद्दीनवाले अब्दुल गनी, हाजी हबीब, सलीम (हलीम?) मुहम्मद और अब्दुल रहमान। अब्दुल हक साहबवाले अम्मूद्दीनके लिए भी कोशिश करें। हाजी हबीब प्रिटोरिया और दूसरे जोहानिसबर्ग जाना चाहते हैं। उत्तर दें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस० एन० ३७७।

११५. तार तैयबको

[डर्बन]
फरवरी ६, १९०१

सेवामें
तैयब
मारफत मुल
केपटाउन

सम्भव हो तो कृपा कर करीदियाके लिए भी कोशिश करें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस० एन० ३७३१।

१. केपटाउनके एक प्रमुख भारतीय।
२. ये उन भारतीय शरणार्थियोंके नाम हैं जिनकी ट्रान्सवालमें कुछ सम्पत्ति थी और जो बोअर-युद्धके समाप्त हो जानेपर वहाँ लौटना चाहते थे।

११६ तार तैयबको

[डर्बन]
फरवरी ९, १९११

सेवामें
तैयब
मारफत कुक
केपटाउन

केन्द्रीय समितिको जोहानिसबर्ग व प्रिटोरियाकी भारतीय दूकानों और सम्पत्तिकी जानकारी चाहिए। क्या आपको कुछ जानकारी है? है तो ठीक-ठीक बताइए क्या है। दूकानदारोंकी संख्या और उनकी सम्पत्तिके बारेमें अपना अन्दाज भी बताइए। आपसे नाम माँगनेवाले अफसरका नाम सूचित कीजिए।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस० एन० ५७७१।

११७ अकाल-निधि[1]

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
फरवरी १६, १९११

प्रिय महोदय

उपनिवेशमें संगृहीत अकाल-निधिको अब चूँकि बन्द कर दिया गया है इसलिए शायद आपको यह बता देना अच्छा होगा कि इसका प्रारम्भ कैसे हुआ था। जब यहाँके भारतीय समाजमें इस बातको लेकर हलचल मच रही थी कि दक्षिण आफ्रिकामें वर्तमान स्थितियोंके बावजूद सन् १८९७ की भाँति प्रयत्न करना सम्भव होगा या नहीं तभी वाइसरायका लन्दनके मेयरके नाम और अधिक सहायताकी माँगका पत्र स्थानीय समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुआ। और लगभग उसी समय नेटालके कलकत्ता-स्थित एजेंटने भारतीय प्रवासियोंके संरक्षकसे यह प्रार्थना की कि वे गिरमिटिया भारतीयोंसे चन्दा इकट्ठा करें। इससे हम सजग हुए और भारतीय समाजकी ओरसे परमश्रेष्ठ गवर्नरके पास पहुँचे ताकि उनका संरक्षण प्राप्त हो। उन्होंने बड़ी खुशीके साथ इस प्रकार निर्मित निधिका संरक्षक बनना स्वीकार कर लिया और ९ पौंड चन्दा देकर चन्दा-सूचीमें सर्वप्रथम अपना नाम लिखानेका श्रेय लिया। नेटालके भूतपूर्व

१ यह पत्र १८-२-१९११ के *इंडियन ओपिनियन* तथा १६-२-१९११ के *नेटाल मर्क्युरी* समाचारपत्रमें छपा था, और साथ ही दूसरे सभी पत्रोंको भेजा गया था।

प्रधानमन्त्री सर जॉन रॉबिन्सन और महान्यायवादी (अटर्नी जनरल) माननीय हेनरी बेलने इस आन्दोलनका बहुत सरगर्मीसे समर्थन किया। एक मजबूत केन्द्रीय समिति गठित की गई जिसके अध्यक्ष डर्बनके मेयर और अवैतनिक कोषाध्यक्ष प्रवासी-संरक्षक थे। समाचारपत्रोंमें धनके लिए अपील की गई और समाचारपत्रोंने भी बहुत सहायता की। एक स्थानीय चित्रकारने बाल्य चित्ताको लेकर एक व्यंग चित्र बनाया जिसे नेटाल मर्क्युरीने विशेष रूपसे छापना स्वीकार किया। टाइम्स ऑफ इंडियाके उत्कृष्ट चित्रमय स्तम्भोंका भी उपयोग किया गया। फलस्वरूप लगभग ५,   पौंड इकट्ठे हुए, जिनमें से लगभग ३   पौंड यूरोपीयोंसे १   पौंड भारतीयोंने और १   पौंड वतनी लोगोंने दिये। समितिके सदस्योंके अलावा विभिन्न विभागोंके मजिस्ट्रेटों स्थानिक निकायोंके अध्यक्षों पादरियों और भारतीय कार्यकर्ताओंकी टोलीने चन्दा इकट्ठा करनेमें एक-दूसरेसे खूब होड़ की। श्रीमती रॉबिन्सनने भी अपने मित्रोंके सहयोगसे अमूल्य सहायता प्रदान की। उस समय सब रंग-विद्वेष भुला दिया गया और इस मामलेमें सामाजिक चरित्रके सर्वोत्तम संस्कारोंका लाभ उठाया गया। सन् १८९० में अकाल-निधिमें यूरोपीयोंका भाग २   पौंडसे अधिक था और भारतीयोंका लगभग १ २   पौंड। उस समय यूरोपीयोंमें धनसंग्रह करनेके लिए कोई संगठन नहीं बनाया गया था।

वाइसरायने नेटालकी दानशीलता बहुत ही उपयुक्त शब्दोंमें स्वीकार की है।

आपका सच्चा
मो॰ क॰ गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस॰ एन॰ ३७०७) से।

११८ तार : उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
मार्च ७, १९ १

सेवामें
श्री सी॰ बर्ड

स्वर्गीय श्री एडलजी मी॰ बाई ई॰ के पुत्र श्री के॰ मी॰ दिनशा एडमिरल्टी एजेंट, मारीशो मारिशस एक यात्राके पूर्व डर्बनमें बेरुखागत गये थे। वे अब स्टीमर जहाज द्वारा लौट आये हैं। परन्तु रंगदार यात्री होनेके कारण उतरनेमें रोके जा रहे हैं। श्री दिनशाके पास कैसे पोर्ट मजिस्ट्रेटका प्रमाणपत्र है। डॉ॰ फ्लेचर कहते हैं उन्होंने सरकारसे पत्र-व्यवहार किया है। क्या मैं आपसे माँग कर सकता हूँ कि श्री दिनशाके उतरनेकी इजाजत तार द्वारा भेज दें? मामला बहुत संगीन है अतः समय बचानेके लिए मैं आपको व्यक्तिगत रूपसे तार दे रहा हूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज़ सी॰ एस॰ ओ॰ १ १/१ १।

१२२ तार : परवानोंके बारेमें

[डर्बन]
मार्च २५, १९०२

सेवामें
परवाना
केपटाउन

आपका २१ तारीखका तार। कल शरणार्थियोंकी भारी सभा हुई थी। उसमें परवाने पानेके लिए इन व्यक्तियोंको नामजद किया गया : मुहम्मद कासिम कमरुद्दीन ऐंड कम्पनीके श्री अब्दुलगनी, जोहानिसबर्गके श्री एम० एस० क्वादिया, प्रिटोरियाके श्री हाजी हबीब हाजी दादा, पॉचिफस्ट्रूमके श्री अब्दुर रहमान। सभाकी नम्र रायमें विशाल हितोंको नजरमें देखते हुए, कमसे-कम इतने लोगोंको तो परवाने मिलने ही चाहिए। सभा एक परवानेको बहुत कम मानती है। चार परवाने देना असम्भव हो तो उपर्युक्त प्रतिनिधि श्री अब्दुलगनीको सबसे पहले जानेको नियुक्त करते हैं।

मुझसे अनुरोध किया गया है कि मैं निवेदन कर दूँ, सैकड़ों अन्य शरणार्थियोंको परवाने मिल गये हैं और अब प्रिटोरिया तथा जोहानिसबर्गकी लगभग सभी यूरोपीय दूकानें खुल गई हैं। यह देखते हुए, भारतीयोंको बहुत दुःख हुआ है कि उन्हें उनके परवानोंका उचित भाग नहीं मिला। और चार परवानोंसे भी उनकी जरूरत पूरी नहीं होगी। परन्तु यदि परमश्रेष्ठ चार परवानोंके बारेमें भी सभाकी प्रार्थना स्वीकार कर सकें तो इस उपकारकी बहुत कद्र की जायेगी।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९१)से।

११९. तार : उपनिवेश-सचिवको

[डर्बन
मार्च ८, १९११]

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

आपके आजके तारके लिए जिसके द्वारा आपने उसमें बताई शर्तोंपर श्री विनयाके उतरनेकी इजाजत दी है, आपको धन्यवाद देता हूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ १९२५/१९११।

१२०. भारतीय विद्यालयोंके मुखियोंको
(परिपत्र)

डर्बन
मार्च १९, १९११

प्रियवर,

आप जानते हैं कि श्री एस्केम्बने नगर-भवनमें भारतीय बच्चोंके सामने हमारी प्रिय स्वर्गीया सम्राज्ञी कैसरे-हिन्दके शासनपर एक भाषण दिया था और भारतीय जनताकी ओरसे बच्चोंको एक स्मृति-चिह्न[1] भेंट किया गया था। समितिका विचार है कि जो भारतीय बच्चे उत्सवमें सम्मिलित नहीं हो सके थे उनको भी यह स्मृति-चिह्न दिया जाये। यह सँभालकर रखने योग्य है, इसलिए मेरा सुझाव है कि उसकी एक प्रति मढ़ाकर स्कूलके कमरेमें टाँग दी जाये और प्रत्येक विद्यार्थीको प्रेरित किया जाये कि यदि वह खर्च उठा सके तो उसे मढ़ाकर, और यदि ऐसा न कर सके तो किसी अच्छेसे गत्तेपर चिपकाकर, उसे अपने कमरेमें टाँगे।

कृपया मुझे बतलाइए कि आपके स्कूलमें कितने विद्यार्थी हैं, जिससे कि मैं स्मृति-चिह्नकी उतनी प्रतियाँ आपको भेज दूँ।

यदि आप स्थानीय दुकानदारोंको इस बातके लिए तैयार कर सकें कि वे इस चिह्नको सुन्दर चौखटेमें मढ़वाकर अपनी दुकानमें सजाकर लटका दें तो आपकी इसकी कुछ अधिक

१. इस स्मृति-चिह्नमें रानी विक्टोरियाका चित्र देकर उसके ऊपर भारतीय जनताके नाम उनकी १८५८की घोषणाका एक उद्धरण दिया गया था; और नीचे, भारतके साथ उनके सम्बन्धकी ५ ऐतिहासिक तारीखें दी गई थीं। साथ ही १९११ के मध्यका मजमून देकर दिखलाया गया था कि सारे देशमें [illegible] रहा है। जब विक्टोरिया १२ वर्षकी थीं और उन्हें बताया गया था कि भविष्यमें आप इंग्लैंडकी रानी बनेंगी, तब उन्होंने कहा था "मैं अच्छी रानी बनूँगी।" यह बात भी चित्रमें दिखलायी गयी थी।

१२२ तार : परवानोंके बारेमें

[केप टाउन]
मार्च २५, १९११

सेवामें
परवाना[1]
केपटाउन

आपका २१ तारीखका तार। कल व्यापारियोंकी भारी सभा हुई थी। उसमें परवाने पानेके लिए इन व्यक्तियोंको नामजद किया गया : मुहम्मद कासिम कमरुद्दीन ऐंड कम्पनीके श्री अब्दुलगनी जोहानिसबर्गके श्री एम एस क्वाडिया प्रिटोरियाके श्री हाजी हबीब हाजी दादा पचिफस्ट्रूमके श्री अब्दुल रहमान। सभाकी नम्र रायमें विशाल हितोंको ध्यानमें देखते हुए, कमसे-कम इतने लोगोंको तो परवाने मिलने ही चाहिए। सभा एक परवानेको बहुत कम मानती है। चार परवाने देना असम्भव हो तो उपर्युक्त प्रतिनिधि श्री अब्दुलगनीको सबसे पहले आनेको नियुक्त करते हैं।

मुझसे अनुरोध किया गया है कि मैं निवेदन कर दूँ : सैकड़ों अन्य व्यापारियोंको परवाने मिल गये हैं और अब प्रिटोरिया तथा जोहानिसबर्गकी लगभग सभी यूरोपीय दुकानें खुल गई हैं। यह देखते हुए, भारतीयोंको बहुत बुरा लगा है कि उन्हें उनके परवानोंका उचित भाग नहीं मिला। और चार परवानोंसे भी उनकी जरूरत पूरी नहीं होगी। परन्तु यदि परमश्रेष्ठ चार परवानोंके बारेमें भी सभाकी प्रार्थना स्वीकार कर सकें तो इस उपकारकी बहुत कद्र की जायेगी।

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९१) से।

१. केपटाउन सिटी काउन्सिलके परवाना-अधिकारीका संक्षिप्त पता

१२३ पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मार्च १, १९०१

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं आपके १८ तारीखके पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करता हूँ।

क्या मैं पूछ सकता हूँ कि श्री दिनशाके मामलेमें परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयने तत्सम्बन्धी कानूनके खण्ड १ के अन्तर्गत कोई निर्देश दिया था या स्वास्थ्य-अधिकारीने उक्त कानूनके खण्ड २ के अन्तर्गत अपनी जिम्मेदारीपर ही कार्रवाई की थी? और समाचारपत्रोंमें प्रकाशित इस आशयकी खबर सही है या नहीं कि जहाज-कम्पनियोंको निर्देश दिया गया है कि वे केपटाउनसे तथा बीचके बन्दर-स्थानोंसे किसी एशियाई यात्रीको डर्बन आनेके लिए न लें?

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी० एस० ओ० १९२९/१९०१।

१२४ पत्र : उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मार्च १, १९०१

सेवामें
उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

एक दयालु मित्रने जनरल बुलरके खरीतेके एक अंशकी नकल मुझे भेजी है। उसमें उल्लिखित अफसरोंमें मेरा नाम भी इस परिचयके साथ शामिल है : "श्री गांधी असिस्टेंट सुपरिटेंडेंट इंडियन ऐम्बुलैन्स कोर।"[1] अगर यह उद्धरण पूरा है तो मेरे पत्र-प्रेषकके कथनानुसार, उस दलके किसी अन्य अफसरके नामका उल्लेख इस तरह नहीं किया गया। अगर यह सही है और जो श्रेय दिया गया है वह असिस्टेंट सुपरिटेंडेंटके पदपर काम करनेवाले व्यक्तिको है तो उसके अधिकारी भी शायद हैं। हममें सिर्फ उन्हें ही असिस्टेंट सुपरिटेंडेंटके रूपमें पहचाना जाता

१. अधिनियम नं० १९, १८९९।

था। और अगर पत्रका उल्लेख कोई महत्त्व न रखता हो और मैं अपना कर्तव्य पालन करनेके लिए किसी भेदका पात्र माना गया होऊँ तो उसके अधिकारी शहरातमें डॉ॰ यूल — अब सेंट जॉन्सके डीन — और भी सागर हैं। हमको जो सफलता मिली उसतक उसे पहुँचानेमें उन्होंने कोई प्रयत्न उठा नहीं रखा। यदि मैं उनके कामका मूल्यांकन करने बैठूँ तो यह कहना उनके प्रति मेरा कर्तव्य होगा कि डॉ॰ यूलकी सेवाएँ — खास तौरसे चिकित्सा-अधिकारीके और आम तौरसे सलाहकार तथा मार्गदर्शकके रूपमें — अतुलनीय थीं। और, खास तौरसे अन्दरूनी व्यवस्था तथा अनुशासनके सम्बन्धमें भी सागरकी सेवाएँ भी वैसी ही थीं।

क्या मैं निवेदन कर सकता हूँ कि आप इस पत्रकी बातें सैनिक अधिकारियोंकी दृष्टिमें ला दें?

आपका आज्ञाकारी सेवक,

मो॰ क॰ गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी॰ एस॰ ओ॰ १९ १/२८८८।

१२५ तार : परवानोंके बारेमें[1]

[डर्बन]

अप्रैल १८, १९०१

सेवामें

(१) इनकाब

(२) पूर्व भारतीय संघ (ईस्ट इंडिया असोसिएशन)

(३) सर मंचरजी भावनगरी

लन्दन

सैकड़ों यूरोपीय स्त्री-पुरुष नागरिकोंको ट्रान्सवाल वापस जानेकी अनुमति दे दी गई है। भारतीय दूकानोंके अलावा और सभी दूकानें खुली हैं। अधिकारियोंने एक मास पूर्व हजारों भारतीय शरणार्थियोंके लिए जो परवाने देनेका वादा किया था। अभी तक एक भी दिया नहीं गया। भारी हानि उठा रहे हैं। कृपया भारतीय समितिको सहायता दें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

भावनगरी संग्रहालय एम॰ एन॰ ३/१।

1. [illegible] निम्नलिखित टिप्पणी दी थी [illegible] कि [illegible] [illegible] था, [illegible] था। [illegible] कि [illegible] [illegible] ही [illegible] है [illegible] [illegible] ... [illegible] ... [illegible] १८ [illegible] [illegible] १८ [illegible] ... [illegible] भी [illegible] [illegible]

लिये हुए थे फिर भी अमलमें उसका अर्थ प्रायः कुछ नहीं था। बस्तियोंका कानून लागू करनेकी धमकी बार-बार दी जाती थी परन्तु उसका प्रयोग सम्मानित भारतीयोंके विरुद्ध कभी नहीं किया जाता था। दूकानदारों और दूसरे लोगोंमें से थोड़ोंको — बहुत थोड़ोंको — ही पटरियों और दूसरे उपनियमोंके कारण अपमानका सामना करना पड़ता था। अब सब-कुछ बदल गया है। पुरानी सरकारके एक-एक भारतीय-विरोधी अध्यादेश (आर्डिनेन्स) को खोदकर निकाला जा रहा है और कठोर ब्रिटिश नियमशीलताके साथ उसके शिकारोंपर लागू किया जा रहा है। जो मुट्ठीभर गरीब भारतीय युद्ध छिड़नेसे पहले ट्रान्सवाल छोड़कर नहीं जा सके थे और जो इसी कारण अब वहाँ रह गये हैं उन्होंने इन कानूनोंको लागू करनेका विरोध किया है, परन्तु अबतक उसका फल कुछ नहीं निकला। गत २५ मार्चको उच्चायुक्त (हाई कमिश्नर) के नाम निम्न तार भेजा गया था

परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तके निजी सचिव प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गमें इस समय मौजूद कुछ ब्रिटिश भारतीयोंने भारतीय शरणार्थी समितिको लिखा है कि उन्हें बस्तियोंमें चले जानेका नोटिस मिला है। उन्हें पटरियोंपर नहीं चलने दिया जाता और पुराने गणराज्यके भारतीय-विरोधी कानूनोंका आम तौरपर कठोरतासे प्रयोग किया जाता है। मुझसे कहा गया है कि मैं परमश्रेष्ठका ध्यान सम्राट्-सरकारके द्वारा यह मान लिया जानेकी ओर आदरपूर्वक खींचूँ कि उक्त प्रकारके कानून आपत्तिजनक हैं और वह उन्हें हटा देनेका प्रयत्न करेगी। ये कानून अब जैसी कठोरतासे लागू किये जा रहे हैं वैसे शायद पुराने शासनमें कभी नहीं किये गये थे। समितिकी प्रार्थना है कि जबतक आम निबटारा न हो जाय तबतक रियायत की जाये।

हम इसके उत्तरकी व्यग्रतासे प्रतीक्षा कर रहे हैं। ऊपर पुराने गणराज्यके अधिकारियोंकी जिस ढीलका जिक्र किया गया है उसका एक बड़ा कारण इस प्रकारके कानूनोंके विरुद्ध उस समयके ब्रिटिश एजेंट और उपनिवेश-मन्त्री द्वारा किये हुए प्रतिवाद भी थे। भारतीय लोगोंने बस्तियोंके कानूनके विरुद्ध जो प्रार्थनापत्र दिया था उसका उत्तर श्री चेम्बरलेनने बहुत सहानुभूतिपूर्ण दिया था। उससे प्रकट होता है कि वे इसे बहुत नापसन्द करते थे और तभी चुप हुए थे जब कि वे विवश हो गये। उनके उत्तरके कुछ अंश ये हैं

> मेरी सहानुभूति प्रार्थियोंके साथ है। इसलिए मुझे अत्यन्त खेद है कि मैं अपने सामने उपस्थित प्रार्थनापत्रका उत्तर अधिक उत्साहपूर्वक नहीं दे पा रहा हूँ। मेरा विश्वास है कि वे सब शान्ति-प्रेमी कानूनका पालन करनेवाले और पुण्यशील लोग हैं। अब तो मैं इतनी आशा ही कर सकता हूँ कि इस समय जो हालात हैं उनके होते हुए भी वे अपने निरन्तर परिश्रम, अतन्द्रित बुद्धिमत्ता और अदम्य दृढ़तासे उन बाधाओंको पार करनेमें सफल हो जायेंगे जिनका उन्हें इस समय अपने पेशोंमें सामना करना पड़ रहा है।
>
> अन्तमें मैं इतना ही कहना हूँ कि मेरी इच्छा संधि-कन्वेन्शनका पालन ईमानदारीसे करनेकी है और मैं चाहता हूँ कि उसके द्वारा दोनों सरकारोंके बीचके कानूनी और अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ोंका अन्त हो जाये। परन्तु उसके पश्चात् भी, मैं दक्षिण आफ्रिकी गण राज्यके सामने इन व्यापारियोंकी मित्रतापूर्वक वकालत करने और शायद उस सरकारसे यह कहनेके लिए तो स्वतन्त्र रहूँगा ही कि अपने कानूनी अधिकारोंका निर्बन्ध प्रयोग करनेपर क्या उसके लिए सिरेसे नई दृष्टिसे पुनर्विचार कर लेना बुद्धिमत्ताका कार्य न होगा? और यदि वह भारतीयोंके साथ अधिक उदारतासे व्यवहार करनेका निश्चय करे और

व्यापारिक ईर्ष्याको जरा भी सहारा न दे तो क्या यह उसके अपने नागरिकोंके लिए भी अधिक अच्छा न होगा? मेरा विश्वास है कि व्यापारिक ईर्ष्या या प्रतिस्पर्धाकी भावनाका उदय गणराज्यके शासकवर्गोंकी ओरसे नहीं होता।

इससे स्पष्ट है कि भारतीयोंकी कठिनाइयोंसे उपनिवेश-मन्त्री कितने क्षुब्ध हुए थे। अभीतक सब-कुछ उनके अधिकारमें है। फिर भी क्या भारतीयोंको इन तमाम निर्योग्यताओंके नीचे कराहते रहना पड़ेगा? भारतीयोंका एक शिष्टमण्डल युद्ध छिड़नेसे कुछ ही सप्ताह पहले प्रिटोरियामें ब्रिटिश एजेंटसे मिला था। उसे उन्होंने विश्वास दिलाया था कि सिर्फ युद्धकी घोषणा छोड़कर मैं सब-कुछ करके देख चुका हूँ बातचीत अब भी चल रही है और यदि कहीं दुर्भाग्यवश सम्भावित युद्ध छिड़ ही गया तो आपको इस सम्बन्धमें फिर चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी। लॉर्ड लैंसडाउनने सार्वजनिक रूपसे घोषणा की है कि भारतीय-विरोधी कानून युद्धका एक प्रधान कारण है। तो क्या जिन बुराइयोंका प्रतिकार करनेके लिए युद्ध आरम्भ हुआ है उनमें से एकको ब्रिटिश झंडेकी छायामें ही जारी रखा जायेगा? अब तो उपनिवेश कार्यालय यह बहाना भी नहीं कर सकता कि स्वशासित उपनिवेशोंपर हमारा पूरा वश नहीं है। ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीमें से किसीको भी अभी स्वशासनके अधिकार नहीं मिले।

ब्रिटिश संसदका उद्घाटन करते हुए, सम्राट्ने अपने भाषणमें विशेष रूपसे कहा है कि आगामी समझौतेके समय सरकारका एकमात्र लक्ष्य जम्बेजी नदीके दक्षिणमें बसी हुई गोरी जातियों के साथ समान और वतनी जातियोंके साथ उचित व्यवहारका रहेगा। हमने सम्राट्के इस भाषणको बड़े खेद और शंकाके साथ सुना है। युद्धसे पहले यह लक्ष्य दक्षिण आफ्रिकावासी सब सभ्य जातियोंके समान अधिकार बतलाया जाया करता था। इसलिए यदि अब लक्ष्यमें जान बूझकर परिवर्तन करके गोरी जातियाँ कर दिया गया है तो यह गम्भीर चिन्ताका विषय है।

इसके साथ हम पुराने गणतन्त्री राज्योंके उन कानूनोंका सार नत्थी कर रहे हैं जिनका प्रभाव भारतीयोंपर पड़ता है। यह प्रश्न अति गंभीर और हमारी स्थिति अति कष्टदायक है। अत्याचारका जुआ खींचते-खींचते हम इतने थक चुके हैं कि हममें और प्रयत्न करने तकका उत्साह नहीं रहा। अब तो हम दर्दके मारे केवल कराह सकते हैं। अब इस दारुण भारसे मुक्त होनेमें हमारी मदद करना आपका काम है। हम अधिक अच्छे व्यवहारके अधिकारी बननेके लिए सब-कुछ कर चुके हैं। युद्धमें हमने उपनिवेशियोंके साथ कन्धेसे-कन्धा भिड़ाकर योग दिया है — भले ही वह कितना ही तुच्छ क्यों न हो। हमने यह सिद्ध कर दिखानेका यत्न किया है कि जहाँ हम ब्रिटिश प्रजाओंके अधिकार और विशेषाधिकार पानेके लिए उत्सुक हैं वहाँ उनके जिम्मेदारी ओरसे भी विमुख नहीं हैं। हमने निर्विवाद रूपसे यह भी सिद्ध कर दिया है कि दक्षिण आफ्रिकामें हमें जो तिरस्कार सहना पड़ता है उसका औचित्य प्रतिपादित करनेवाला एक भी कारण विद्यमान नहीं है।

भारतमें सार्वजनिक संस्थाएँ तथा जनताके पत्र और इंग्लैंडमें हमारे मित्र यदि मिलकर जोरोंसे प्रयत्न करें तो न्याय मिले बिना नहीं रह सकता। हमारे पक्षके न्यायसंगत होनेके बारेमें दो रायें नहीं हैं — हो नहीं सकतीं। इसलिए यह पूर्णतः सम्भव है। अवसर भी या तो अभी है या कभी नहीं होगा क्योंकि अनुभवसे स्पष्ट है कि निबटारा हो जानेके बाद राहत मिलना असम्भव हो जायगा।

आपके आज्ञाकारी सेवक,
मुहम्मद कासिम कमरुद्दीन ऐंड कं॰
और उन्नीस अन्य

कानूनोंका सारांश

भूतपूर्व दक्षिण आफ्रिकी गणराज्य और ऑरेंज फ्री स्टेटके उन कानूनोंका सारांश जो सिर्फ भारतीयोंपर असर करते हैं।

दक्षिण आफ्रिकी गणराज्य

प्रत्येक भारतीयको ३ पौंड देकर अपनी रजिस्ट्रीका टिकट लेना होगा।

उन सरकारी अधिकारी भारतीयोंके साथ उस देशके वतनियों जैसा व्यवहार करते थे तब वे उन्हें एक विभिन्न यात्रा-परवाना लेनेके लिए मजबूर करते थे।

रेलोंके नियम भारतीयोंको पहले या दूसरे दर्जेमें यात्रा करनेसे रोकते हैं।

कोई भी भारतीय अपने पास न तो देशी सोना रख सकता है, न सोना निकालनेका परवाना पा सकता है। (इस कानूनके कारण भारतीयोंको किसी कठिनाईका सामना नहीं करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने सोनेका धंधा कभी नहीं किया)।

कानून ३, १८८५ सरकारको अधिकार देता है कि वह सफाईके खयालसे भारतीयोंके निवासके लिए कुछ खास बस्तियाँ तय कर सकती है। इससे पहले एक बार जोहानिसबर्गके इन भारतीयोंको, नगरके मध्य-भागसे पौन मील दूरकी एक बस्तीमें भेजनेका प्रयत्न किया गया था। यह विचार भी किया गया था कि उनके व्यापारको उसी क्षेत्रमें सीमित कर दिया जाये।

प्रिटोरियाके कुछ उपनियम भारतीयोंको प्रिटोरियामें पैदल-पटरियोंपर चलने और सार्वजनिक गाड़ियोंमें बैठनेसे रोकते हैं।

आधार: पूर्व उपनिवेशोंके लिए देखिए, सर मिचिल मर्योकी, २१ जुलाई १८९९ तथा मार्शनाथ अभियोग मंत्रीकी, [१६] मई, १८९९।

ऑरेंज फ्री स्टेट

१८९० के अध्याय ३३ के अनुसार, कोई भी एशियाई (१) राज्यके अध्यक्षकी अनुमतिके बिना दो महीनेसे अधिक समयतक राज्यमें नहीं रह सकता (२) जमीनका मालिक नहीं हो सकता; और (३) व्यापार या खेती नहीं कर सकता।

यदि उपर्युक्त व्यक्तियोंके साथ राज्यमें रहनेकी अनुमति मिल जाती भी हो, अध्याय ७१ के अनुसार, १ शिलिंग वार्षिकका व्यक्ति-कर देना पड़ता था।

आधार: पुरानी ऑरेंज फ्री स्टेटके एशियाई-विरोधी कानूनोंका पूर्ण पाठ फरवरी १४, १८९६ के सामान्य रूपमें लिया गया है।

छपी हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३/१८५) से।

१ यह स्रोत उपलब्ध नहीं है।

१२८ अभिनन्दनपत्र : बम्बईके भूतपूर्व गवर्नरको

डर्बनके पारसियोंने मेसर्स ... भवनमें एक स्वागत-समारोह करके लॉर्ड हार्ड्रिंग हैरिसको निम्न अभिनन्दनपत्र भेंट किया था। लॉर्ड हैरिस किसी समय बम्बईके गवर्नर थे और वे इंग्लैंड जाते हुए डर्बनसे गुजर रहे थे।

डर्बन
अप्रैल २, १९ १

परमश्रेष्ठकी सेवामें निवेदन है :

हम नेटालवासी ब्रिटिश भारतीयोंके निम्न-हस्ताक्षरकर्ता प्रतिनिधि अपने बीच महानुभावका आदरपूर्वक स्वागत करते हैं। भारतके साथ और विशेषतः बम्बईके साथ महानुभावके घनिष्ठ सम्बन्धसे हम परिचित हैं, इसलिए हम महसूस करते हैं कि अगर हमने आप महानुभावके प्रति अपना आदर प्रकट करनेके अवसरका लाभ न लिया होता तो हम अपना कर्तव्य पालन करनेसे चूक जाते। हम महानुभावके प्रति कृतज्ञता अनुभव करते हैं कि आपने इतने थोड़े समयकी सूचना पानेपर भी कृपापूर्वक हमसे मिलना मंजूर किया और हमें अपनी प्रिय कैसरे-हिन्दके भूतपूर्व भारत-स्थित प्रतिनिधिके प्रति अपना आदर भाव सिद्ध करनेका अवसर दिया।

हम कामना करते हैं कि महानुभावकी यात्रा सुखद हो और आप हमारी कृपालु महारानीकी सेवाके लिए दीर्घ जीवन पायें। हम यह आशा करनेकी धृष्टता भी करते हैं कि आप महानुभाव इस उद्यान-उपनिवेशमें बसे हुए भारतीयोंके लिए, कुछ स्थान अपने हृदयमें सदैव रखेंगे।

विनीत,

[अंग्रेजीसे]

नेटाल ऐडवर्टाइज़र, २२-४-१९ १।

१२९. भारतीय और परवाने[1]

पो० ऑ० बॉक्स १८२
डर्बन
अप्रैल २०, १९ १

प्रिय महोदय,

मैं इसके साथ उस तार[2]की एक प्रतिलिपि भेजता हूँ जो ट्रान्सवालके भारतीय शरणार्थियोंकी ओरसे आपको भेजा गया है। ट्रान्सवाल जानेके लिए परवाने पानेवाले यूरोपीयोंकी सूची दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है, किन्तु इस पत्रके लिखनेतक भारतीय शरणार्थियोंको एक भी परवाना नहीं दिया गया है। लॉर्ड रॉबर्ट्स जब दक्षिण आफ्रिकामें थे तब उनसे और उच्चायुक्तसे भी निवेदन किया गया था, किन्तु सब व्यर्थ हुआ। श्री एच० टी० बोमानजी (अवकाश प्राप्त आई० सी० एस०) जो उच्चायुक्तके परवाना-सचिव नियुक्त किये गये हैं, हमारे लिए भी कुछ परवाने प्राप्त करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। पत्र मास उन्होंने यहाँतक किया था

1. यह पत्र अर्थात् संशोधित किया गया था, जिसे १९-४-१९ १ का तार भेजा गया था।
2. १९ अप्रैल, १९ १ का तार।

हेर-फेरके बरकरार है। क्योंकि "बड़ा व्यापार करनेवाले" परवानोंके व्यापारियोंका सम्बन्ध है उनके हकमें रहने दिये अनेक निवेदनपर विचार किया जा सकता है। परन्तु ऐसे कोई भी लोग इस समय प्रिटोरियामें नहीं हैं; इसलिए यह हुक्म बरकरार है कि प्रिटोरियामें अभी मौजूद उन परवानेदारोंको पृथक् बस्तियोंमें रहना होगा। लेकिन गवर्नरने इतनी बात अनुमति दे दी है कि दो आदमी "मस्जिद" की हिफाजत करनेके लिए उसमें रह सकते हैं। साथ मैंने उन परवानेदारोंको, जो इस समय नगरमें रह रहे हैं, पृथक् बस्तीमें चले जाने और वहीं रहनेका आदेश दे दिया है।

(हस्ताक्षर) जे० ए० पिसम

१३० पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अप्रैल ३, १८९६

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैं इस सप्ताहके सरकारी गज़टमें प्रकाशित भारतीय प्रवासी-अधिनियम संशोधन विधेयकपर आपको लिखनेकी धृष्टता कर रहा हूँ।

विधेयकके पहले खण्डमें कहा गया है कि किसी भी भारतीय स्त्रीको १८९५ के कानूनके अनुसार जिस दरसे मजदूरी दी जायेगी वह उस कानूनमें बताई हुई दरकी आधी होगी। या फिर, ऐसी विशेष दरसे दी जायेगी जो मालिक और उस स्त्रीके बीच तय हो जाये। मैं मानता हूँ कि सरकारका इरादा यह है कि १८९५ के कानूनमें बताई गई दरकी आधी दर कमसे-कम हो। परन्तु मेरा खयाल है कि उक्त खण्डके शब्दोंसे यह इरादा काफी स्पष्ट नहीं होता। क्या मैं सुझा सकता हूँ कि उसमें ये शब्द जोड़ दिये जायें — "परन्तु किसी भी हालतमें यह दर पूर्वोक्त दरकी आधीसे कम न होगी।"

मैं आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचनेकी इजाजत लेता हूँ कि १८९१ के कानून २५ में भारतीय स्त्रीकी मजदूरी पुरुषोंकी मजदूरीसे आधी निश्चित की गई है। मुझे आशा है कि सरकार न्यूनतम दरमें कोई फर्क करना नहीं चाहती।

आपका आज्ञाकारी सेवक
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज़ सी० एस० ओ० २४८५/१८९६।

१. इसको मंजूर कर लिया गया था।

१३१ पत्र : बम्बई-सरकारको

जोब
मई ४, १९ १

सेवामें
माननीय आर जे सी कॉर्ड
[बम्बई-सरकार
बम्बई]

[प्रिय महोदय]

मुझसे खास अनुरोध किया गया है कि मैं संलग्न पत्र[1] आपको भेज दूँ और नम्रता-पूर्वक सुझाऊँ कि भारतकी विभिन्न विधानपरिषदोंमें इस बाबत कुछ कार्रवाई की जाये। प्रवासियोंकी बहुत बड़ी संख्या बम्बई, मद्रास और कलकत्तेसे दक्षिण आफ्रिकाको भेजी जाती है। इस दृष्टिसे तो कोई कारण नहीं है कि स्थानिक सरकारें उन निर्योग्यताओंपर विचार न करें, जिनसे ब्रिटिश भारतीय पीड़ित हैं। फिर भी अगर यह संभव न हो तो वाइसरायकी परिषदमें ही कार्रवाई की जाये।

यह प्रश्न उनमें से है जिनके बारेमें भारतीय और आंग्ल-भारतीय लोकमत एक है। और, मेरा खयाल है कि गैर-सरकारी सदस्योंकी संयुक्त कार्रवाई हमारी उद्देश्य-पूर्तिमें बहुत सहायक होगी। इसमें बहुत कम शक है कि सरकारी पक्षकी सहानुभूति हमारे साथ होगी। और कोई शकके रूपमें हमें जो जबरदस्त और सहानुभूतिशील वाइसराय मिले हैं उनके शासनमें हमारी निर्योग्यताओंकी तहमें समाये प्रश्नका अनुकूल निपटारा हुए बिना रह नहीं सकता। श्री [illegible]ने प्रश्नको इस प्रकार पेश किया है

> क्या ब्रिटिश भारतीयोंको जब वे भारत छोड़ते हैं, कानूनके सामने वही दर्जा मिलना चाहिए, जिसका उपभोग अन्य ब्रिटिश प्रजाएँ करती हैं? वे एक ब्रिटिश प्रदेशसे दूसरेको स्वतंत्रतापूर्वक जा सकते हैं या नहीं और सहयोगी राज्योंमें ब्रिटिश प्रजाके अधिकारोंका दावा कर सकते हैं या नहीं?

जरूरत इतनी ही है कि यह प्रश्न पर्याप्त रूपमें परमश्रेष्ठकी नजरमें ला दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

भारतमंत्रीके नाम भारत-सरकारके खरीता नं १५, १९ १का अंश।
कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स साउथ आफ्रिका जनरल १९ १।

१ अप्रैल २, १ १ का परिपत्र। बम्बई-सरकारने [illegible] पत्र और उसके साथके कागजात भारत सरकारको भेज दिये थे जिसने उन्हें भारतमंत्रीके पास भेज दिया। भारतमंत्रीके कार्यालयने उस पत्रमें एक टिप्पणी जोड़ दी। वह यह थी कि [illegible] के सिलसिलेमें श्री [illegible]ने ऊपर दे दिया है कि ट्रान्सवाल तथा [illegible] की [illegible] ब्रिटिश भारतीयोंकी [illegible] मिलनाएं, [illegible] दक्षिण आफ्रिका [illegible] विचारके लिए [illegible] रखा गया है।

१३२ प्रार्थनापत्र सैनिक गवर्नरको[1]

पो० ऑ० बॉक्स ४४२
जोहानिसबर्ग
मई ९, १९०१

सेवामें
परमश्रेष्ठ
कर्नल कॉलिन मैकेंजी
सैनिक गवर्नर
जोहानिसबर्ग

परमश्रेष्ठ ध्यान देनेकी कृपा करें,

हम जोहानिसबर्गके भारतीय समाजके नीचे हस्ताक्षर करनेवाले सदस्य सम्मानपूर्वक आपको बताना चाहते हैं कि *जोहानिसबर्ग गज़ट*में एक महत्त्वपूर्ण सूचना छपी है। [उसमें कहा गया है कि] सभी एशियाइयोंसे व्यवहार करनेके लिए एक भारतीय प्रवास-कार्यालय खोला गया है। उसीके जरिये इस प्रकारके सभी प्रजाजनोंको अपने परवाने बदलवाने होंगे और ऐसे सब सरकारी मामले निपटाने होंगे जिनमें वे दिलचस्पी रखते हों।

हम बताना चाहते हैं कि अबतक सम्राट्के अधिकारियोंके साथ हमारा सीधा व्यवहार किसी शिकायतके बिना चलता रहा है और हमें भय है कि इस नये परिवर्तनसे हमारे बहुतसे साथी-प्रजाजनोंमें असन्तोष उत्पन्न होगा।

हमने विदेशोंके प्रजाजनोंके परवाने बदलवानेके सम्बन्धमें कोई सूचना नहीं देखी है, इस लिए हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि यह भेदभाव किया जा रहा है। यदि ऐसा हो तो हमें बहुत दुःख होगा।

हम सदैव वफादार रहे हैं और अबतककी भाँति सीधे साम्राज्यीय अधिकारियोंके अधीन रहना चाहते हैं जिनके व्यवहार और दयालुताकी हम बहुत सराहना करते हैं।

हमें भरोसा है कि परमश्रेष्ठ इस मामलेपर गम्भीरतासे विचार करेंगे और हमारी विनीत प्रार्थना स्वीकार कर लेंगे।

परमश्रेष्ठके अत्यन्त विनीत और
आज्ञाकारी सेवक,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३८२२ १) से।

[1] ऐसी अर्जीकी प्रति दूसरे दिन ब्रिटिश एजेंट और ट्रान्सवालके गवर्नरको भी भेजी गई थी जिसपर अब्दुल गनी और अन्य ११९ व्यक्तियोंके हस्ताक्षर थे।

१३३. पत्र : ईस्ट इंडिया असोसिएशनको

पो० आ० बॉक्स १८२
डर्बन
मई १८, १८९७

सेवामें
अवैतनिक मन्त्री
ईस्ट इंडिया असोसिएशन
लंदन

प्रिय महोदय,

मैं यह पत्र विशेष रूपसे यह सुझानेके लिए लिख रहा हूँ कि श्री चेम्बरलेन और सर ऑल्फ्रेड मिल्नरसे एक शिष्टमंडलका मिल लेना उचित होगा। यदि श्री चेम्बरलेनसे नहीं तो भी सर ऑल्फ्रेड मिल्नरसे मिल लेना तो उचित मालूम ही होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि दोनों राजनयिकोंमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मामलोंपर बातचीत होगी और यदि सब प्रकारके विचारोंका प्रतिनिधित्व करनेवाला एक सक्षम शिष्टमंडल भारतीयोंका पक्ष उनके सामने प्रस्तुत करे तो उससे हित ही होगा। उसमें सर लेपेल[1] श्री दादाभाई, सर विलियम वेडरबर्न, सर मंचरजी, सर्वश्री रमेशदत्त[2], परमेश्वरम् पिल्ले और बर्स्ट जैसे व्यक्ति हो सकते हैं। लॉर्ड नॉर्थब्रुक और रे से मेरी जो बातचीत हुई थी उससे मेरा यह खयाल होता है कि यदि उन दोनोंमें से किसी एकसे कहा जाये तो वे *प्रतिनिधिमण्डलका नेतृत्व अवश्य करेंगे। जिन तथ्योंकी आपको आव*श्यकता होगी वे सभी पहले ही भेजे जा चुके हैं।

इसी आशयके पत्र भारतीय राष्ट्रीय महासभाकी ब्रिटिश समिति आदिको भी भेजे जा रहे हैं।

आपका सच्चा,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२५) से।

१. सर लैपेल ग्रिफिन।
२. रमेशचन्द्र दत्त, प्रसिद्ध भारतीय प्रशासक और कांग्रेसके लखनऊ अधिवेशन (१८९९) के अध्यक्ष।

भारतीय शरणार्थी डर्बनमें हैं, इसलिए मुझे आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करनेके लिए कहा गया है कि नेटालके लिए चार अनुमतिपत्र बहुत कम हैं।

केपटाउनके दो नामोंके लिए मैंने तार दे दिया है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस॰ एन॰ १८२९) से।

१३६. तार : तैयबको

[डर्बन]
मई २८, १९०१

सेवामें
तैयब
मारफत पुल
केपटाउन

अनुमतिपत्र सचिवको भेजनेके लिए कृपया तत्काल चुने हुए शरणार्थियोंके नाम भेजें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय : एस॰ एन॰ १८२८।

१३७. पत्र : रेवाशंकर झवेरीको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
मई २८, १९०१

मुरब्बी भाई रेवाशंकर[1]

कविश्रीके[2] गुजर जानेकी खबर भाई मनसुखलाल[3]के पत्रसे मिली। उसके बाद अखबारोंमें भी यही देखा। यह बात मान सको ऐसी नहीं है। मनसे बिसारते नहीं बनती। विचार करनेका भी इस देशमें थोड़ा ही अवकाश है। टेबिलपर बैठा था कि खबर पाई। पढ़कर एक मिनिट उदास हुआ। फिर तुरन्त आफिसके काममें लग गया। ऐसी यहाँकी जिन्दगी है पर जब भी जरा-सी फुरसत मिलती है तब यही विचार चलता है। झूठा कहो चाहे सच्चा मुझे उनसे बड़ा

1. रेवाशंकर जगजीवनदास झवेरी, गांधीजीके आजीवन मित्र।
2. राजचन्द्र रावजीभाई मेहता या रायचन्दभाई मेहता जो कवि तथा तत्त्वज्ञानी सन्त थे। गांधीजीने अपनी आत्मकथामें उनपर एक अध्याय (भाग २, अध्याय १) लिखा है।
3. श्री राजचन्द्रके भाई। देखिए पादटिप्पणी २।

पूर्वी भारत संघ (ईस्ट इंडिया असोसिएशन) संयुक्त कार्रवाईका सुझाव पहले ही दे चुका है। इसलिए मैं सादर निवेदन करता हूँ कि यदि सभी मतोंके लोगोंका प्रतिनिधित्व करनेवाली एक छोटी-सी समिति बना दी जाये और सदा संगठित कदम उठाये जायें तो हमें बहुत-कुछ सफलता मिलेगी।

उपनिवेश-मन्त्रीके असहानुभूतिपूर्ण उत्तरसे यहाँ बुरा प्रभाव पड़ा है और भारतीयोंके प्रति विरोधको और भी प्रोत्साहन मिला है। इसलिए श्री चेम्बरलेनको या तो पत्र लिखा जाये या उनसे व्यक्तिगत भेंट की जाये। मेरी तुच्छ रायमें जानकारी प्राप्त करनेका यही एक तरीका हमारे मामलेकी परिस्थितियोंके अधिक अनुकूल पड़ता है। रायटर द्वारा तारसे भेजे गये श्री चेम्बरलेनके उपर्युक्त उत्तरसे कुछ बिगाड़ होनेका अनुमान है। उसका अर्थ यह लगाया गया है कि वे लोगोंकी चीख-पुकारके सामने झुक जायेंगे और भारतीयोंको बिलकुल त्याग देंगे।

मैं जानता हूँ कि हम जो मौकेपर मौजूद हैं मजबूरनशिलतासे ग्रस्त हैं। और इसके फलस्वरूप हो सकता है कि हम संकुचित और सीमित दृष्टि अपना लें और वहाँकी परिस्थिति या हमारी ओरसे काम करनेवाले नेताओंकी स्थितिकी ओर उचित ध्यान न दें। इसलिए यदि मेरे सुझावमें कोई ढिठाईकी बात हो तो मुझे विश्वास है कि आप कृपाकर उसकी ओर ध्यान न देंगे।

मैं इस पत्रकी एक प्रतिलिपि माननीय दादाभाई नौरोजीको भेज रहा हूँ।

आपका सच्चा,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१६) से।

१४१. एक चेकके बारेमें दफ्तरी टीप

डर्बन
जून ८ [१९०१]

यह चेक कांग्रेसके प्रस्तावकी रूसे दिया गया है। प्रस्ताव यह था कि श्री इनको मामाके लिए चन्दा किया जाये और अगर चन्देसे पूरा न पड़े तो कांग्रेस तोल फरोख्तकी जायदाद लेनेके बाद जो पैसा बचे वह भी इनको दे दे। चंदा अब बढ़ेगा ऐसा नहीं लगता। इसलिए चेक द देनेकी जरूरत मालूम होती है। सो आजके दिन चेक काटा है।

प्रस्ताव २१ नवम्बर, १९०० ।

मो० क० गांधी

मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३८१७) से।

१४२. तार : अनुमति-पत्रोंके बारेमें

[डर्बन]
जून १४, १९११

सेवामें
कमरुद्दीन
बॉक्स २९९
जोहानिसबर्ग

अनुमति-पत्र नहीं आये। जाँच करें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय : एस० एन० ५८४७।

१४३. तार : अनुमति-पत्रोंके बारेमें

[डर्बन]
जून २, १९११

सेवामें
इमम्स फॉर्स्टर
रैंडक्लब
जोहानिसबर्ग

कृपया पूछताछ कीजिए, चाचा किसे अनुमति-पत्र अबतक नहीं आये — भावर।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय : एस० एन० ५८४९।

१४४ पत्र मंचरजी मेरवानजी भावनगरीको

पो० ऑ० बॉक्स १८२
डर्बन, नेटाल
जून २८, १९०१

प्रिय सर मंचरजी

मैंने गत सप्ताह आपके दो पत्रोंकी प्राप्ति स्वीकार की थी। उसके बाद मुझे आपका गत मासकी २४ तारीखका पत्र मिला है। आपके पत्रोंने हमारे उत्साहको फिरसे जगाया है और आप जो महान् कार्य कर रहे हैं उसके लिए दक्षिण आफ्रिकाके गरीब पीड़ितोंकी ओरसे मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। हम यहाँके लोग आपसे पूरी तरह सहमत हैं कि जहाँतक बन सके काम मैत्रीपूर्ण मुलाकातोंसे जैसी कि आप श्री चेम्बरलेन और अन्य लोगोंसे कर रहे हैं सिद्ध किया जाये क्योंकि संसदमें किसी प्रश्नका असहानुभूतिपूर्ण उत्तर देनेसे अधिक क्षतिके सिवा और कुछ नहीं हो सकता — जब कि न्याय पूरी तरह हमारे पक्षमें है और विभिन्न दलोंमें कोई मतभेद भी नहीं है। अभीष्ट परिणाम पानेके लिए बस इतना ही जरूरी है कि अधिकारियोंको लगातार याद दिलाते रहा जाये और निरन्तर चौकसी रखी जाये। हमने पहले ही जान लिया था कि आप भारतमें संयुक्त आन्दोलन छेड़नेका सुझाव देंगे। इसलिए हमने वहाँके नेताओंको पत्र[1] लिख दिये हैं और उनसे प्रार्थना की है कि वे स्मरणपत्र भिजवाते रहें और वाइसरायकी परिषदमें प्रश्न उठाते रहें। साथ ही मुझे सफलताकी ज्यादा आशा नहीं क्योंकि वहाँ कोई ऐसी संगठित समिति नहीं है जो कि सिर्फ दक्षिण आफ्रिकी सवालको या यों कहें कि प्रवासी भारतीयोंकी शिकायतोंके सवालको हाथमें ले। परन्तु, यदि पूर्व भारत संघ (ईस्ट इंडिया असोसिएशन) और कांग्रेस समिति मिलकर भारत-कार्यालयसे जोरदार निवेदन करें तो यह भारतमें जो कुछ किया जाये उसका पूरक हो सकता है या उसका स्थान ग्रहण कर सकता है।

मैं जानता हूँ कि हमारी निर्योग्यताओंके इस मामलेको आप बहुत महसूस करते हैं। ये निर्योग्यताएँ शान्तसे-शान्त व्यक्तिमें भी वास्तविक रोष उत्पन्न कर देनेके लिए काफी बुरी हैं। किन्तु क्या मैं आपसे यह निवेदन कर सकता हूँ कि आप अपने इस उत्तम कार्यमें जिसे आप कर रहे हैं परमावश्यक बहस छेड़कर तबतक बाधा न आने दें जबतक कि आपको कामयाबीकी पूरी उम्मीद न हो। हम पूरी तरह अनुभव करते हैं कि इस कार्यमें आपकी गहरी दिलचस्पी इंग्लैंडमें भारतके स्थायी अधिकारियोंपर आपके प्रभाव और, सबसे अधिक कार्य करनेमें आपकी तत्परताके कारण इसके प्रति न्याय करनेके लिए आपसे अधिक योग्य व्यक्ति इंग्लैंडमें और कोई नहीं है।

मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि परवानोंकी बाबत आपको भेजे गये तार[2] के सम्बन्धमें डर्बनके अधिकारियोंने श्री चेम्बरलेनको जो जानकारी दी है वह भ्रामक है। मैं अब भी कहता हूँ कि तार सही है। यह जानकारी उन रिपोर्टोंसे ली गई थी जो स्थानीय समाचारपत्रोंके विभिन्न संवाददाताओंने भेजी थी। मैं स्वयं फुटकर दूकानदार गोरोंकी समितिके मन्त्रीसे मिलने गया था। उसने मुझे निश्चयपूर्वक बताया कि अधिकांश दूकानें खुली हुई हैं और यह माँग कि लाग

१ ये उपलब्ध नहीं हैं।

२. अप्रैल १८, १९०१ का तार।

रैंड राइफल्स में भर्ती हों न्यूनाधिक रूपमें उपचार-मात्र है। वास्तवमें यदि वे यह नहीं चाहते कि भारतीय रैंड राइफल्स में भर्ती हों तो कमसे-कम इसे उनकी वापसीमें रुकावट डालनेके लिए उपयोगमें न लाया जाये। यह स्मरण रहे कि बहुत-सी यूरोपीय महिलाओंको जानेकी अनुमति दे दी गई है। और रोजाना ट्रान्सवालके लिए परिवारके-परिवार गाड़ियोंमें बैठते दिखाई देते हैं। आपको सूचना देते हुए मुझे खेद होता है कि यह पत्र लिखनेके समयतक और कोई अनुमति-पत्र नहीं मिला यद्यपि छ अनुमति-पत्र देनेका वादा किया गया है — चार गेटाक्रे और दो केपटाउनके लिए। किन्तु वास्तवमें अनुमति-पत्रोंका सवाल तो आखिर अर्थहीन और केवल अस्थायी है; यद्यपि जबतक यह मौजूद है तबतक इस सर्वग्राही प्रश्नकी तुलनामें कि नई हुकूमतमें भारतीयोंकी क्या स्थिति है, कठिनाई और भी अधिक महसूस होगी। अभीतक इस आशयकी घोषणा नहीं की गई है कि कमसे-कम वर्तमान कानूनमें तो बहुत-कुछ सुधार कर ही दिया जायेगा। हमारे लन्दनके मित्र लॉर्ड मिलनरकी उपस्थितिका लाभ उठाकर वहाँ जो कुछ कर लेंगे उसीमें हमारी आशाएँ केन्द्रित हैं।

आशा है अगले सप्ताह आपको अधिक लिख सकूँगा। तबतक आपको पुनः धन्यवाद।

आपका सच्चा,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १८५१) से।

१४५. भाषण : भारतीय विद्यालयमें

डर्बनके भारतीय उच्च शिक्षा विद्यालय (हायर ग्रेड इंडियन स्कूल) के पुरस्कार वितरण समारोहमें गांधीजीने जो भाषण दिया था उसका पत्रोंमें प्रकाशित संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है। समारोहके अध्यक्ष नेटालके गवर्नर सर हेनरी मैक-कैलम थे।

[डर्बन
जून २८, १९०१ के पूर्व]

परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयके प्रति धन्यवादका प्रस्ताव पेश करते हुए श्री गांधीने कहा कि परमश्रेष्ठने अपने कार्य-कालके प्रारम्भमें ही और इतने सौजन्यके साथ भारतीयोंके सम्पर्कमें आनेकी जो कृपा की इसपर भारतीय समाज अगर गर्व और सन्तोष अनुभव करे तो यह उचित ही है। इस प्रसंगपर श्री गांधीने लॉर्ड रॉबर्ट्सके आगमनके समय आयरिश असोसिएशन और भारतीय समाजके बीच जो होड़ लग पड़ी थी उसका हवाला देते हुए कहा — तब आयरिश असोसिएशन कहता कि लॉर्ड रॉबर्ट्स आयरिश हैं और भारतीय कहते कि वे भारतीय हैं। परमश्रेष्ठको तो पहले ही स्कॉटलैंडके लोग अपना बता चुके हैं। परन्तु सर हेनरीको उनके प्रवासके अनुसार भारतीय कहनेके पर्याप्त कारण उनके पास हैं (हँसी)। श्री गांधीने आशा प्रकट की कि सरकारने जो व्यायामशाला, संगीत-वर्ग वगैरह विद्यालयमें खोलनेका आश्वासन दिया है उसकी वह शीघ्र ही पूर्ति कर देगी। उन्होंने यह भी आशा प्रकट की कि हायर ग्रेड स्कूलके समान ही लड़कियोंके लिए भी एक ऐसा विद्यालय सरकार खोलनेकी कृपा करेगी।

[अंग्रेजीसे]
नेटाल मर्क्युरी, २८-६-१९०१

१४६. तार : अनुमति-पत्रोंके बारेमें

[डर्बन]
जुलाई २, १९११

सेवामें
परमिट्स
जोहानिसबर्ग

मेरा २१ मईका पत्र। भारतीय शरणार्थी-समिति सादर निवेदन करती है वादा किये अनुमति-पत्रोंके बारेमें जानकारी दें। आपका २५ मईका तार।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस एन ५८५८।

१४७. तार : उपनिवेश-सचिवको

[डर्बन]
जुलाई २८, १९११

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

क्या मैं पूछ सकता हूँ कि भारतीय प्रार्थियोंने नियम-विधेयक (कारपोरेशन्स बिल) की जिन धाराओंपर आपत्ति की है वे कमेटीके हाथोंसे गुजर चुकी हैं या नहीं? अगर नहीं तो क्या सरकारका विचार कोई कार्रवाई करनेका है?

गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन ५८९९) से।

१४८. तार : हेनरी बेलको

[डर्बन]
अगस्त ८, १९०१

सेवामें
सर हेनरी बेल
पीटरमैरित्सबर्ग

महामहिम सम्राट् द्वारा आपको पदवी दी जानेके उपलक्ष्यमें अपने देश-भाइयोंकी ओरसे नम्रतापूर्वक बधाइयाँ देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस० एन० १८७९।

१४९. तार : सी० बर्डको

[डर्बन]
अगस्त ८, १९०१

सेवामें
श्री सी० बर्ड
सी० एम० जी०
पीटरमैरित्सबर्ग

महामहिम सम्राट् द्वारा आपको पदवी दी जानेके उपलक्ष्यमें आपको बधाइयाँ देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय एस० एन० १८७७।

१५१ भारतीय और ड्यूक

मर्क्युरी लेन
डर्बन
अगस्त ११, १९१०

सेवामें
सम्पादक
नेटाल मर्क्युरी

महोदय

"अंग्रेजी बोल सकनेवाले तथा अन्य भारतीयोंकी विरोध-सभा" के अध्यक्षके नाते संयोजकके पाससे सभाके प्रस्तावोंकी पक्की नकल मुझे मिली है मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। आमंत्रण-पत्रकी नकल भी संलग्न है। मैं उस सभाका सभापति जरूर था परन्तु उन प्रस्तावोंसे मुझे जरा भी सहानुभूति नहीं है क्योंकि उनमें वस्तुस्थिति बतानेकी कई महत्त्वपूर्ण भूलें हैं और वे भ्रमोत्पादक हैं। परन्तु मैं मानता हूँ कि सही या गलत शिकायतोंको मैदानमें लाकर रख देनेसे रोष कुछ ठंडा ही होता है। मैं उन्हें आपके पास भेज रहा हूँ। आप जैसा उचित समझें उनका उपयोग करें।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[प्रस्ताव]

गत २ तारीखको कांग्रेसके सभा-भवनमें अंग्रेजी-भाषी और अन्य भारतीयोंकी एक विरोध-सभा हुई थी। श्री मो० क० गांधी सभापति थे। सभामें संयोजक श्री थे. ए० ऐंड्रयूजने नीचे लिखे प्रस्ताव पेश किये और श्री वी० सी० पैट्रिकने उनका समर्थन किया। प्रस्ताव सर्वानुमतिसे स्वीकृत हुए।

१. कॉनॉट तथा स्ट्रैथर्नके ड्यूक और डचेसको मानपत्र देनेके लिए प्रतिनिधियोंका चुनाव जिस ढंगसे किया गया उसपर यह सभा जोरदार विरोध प्रकट करती है। क्योंकि, चुनावके लिए की गई सभाकी सूचना केवल मुसलमानोंको दी गई थी। इस तरह दूसरे भारतीयोंको उसमें भाग लेनेसे वंचित रखा गया।

२. यह सभा इस बातका भी जोरदार विरोध करती है कि महानुभावोंको अभिनन्दन-पत्र देनेके लिए की गई सभामें भाग लेनेके लिए जो प्रतिनिधि चुने गये हैं उनमें अधिकांश मुसलमान हैं। उपनिवेशमें दूसरे भारतीयोंकी संख्या मुसलमानोंसे अधिक है। अतः उनके प्रतिनिधियोंकी संख्या कमसे-कम मुसलमान प्रतिनिधियोंके बराबर तो होनी ही चाहिए थी।

३. जिन आठ अतिरिक्त प्रतिनिधियोंको निमन्त्रण भेजनेके लिए चुना गया है (स्वागत-समितिने उनकी स्वीकृति प्रदान कर दी है) उनमें से छः मुसलमान हैं। इस प्रकार अन्य भारतीयोंको पुनः न्यायोचित प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है।

४. यह सभा मुसलमानोंके इस रवैयेका भी जोर विरोध करती है कि वे अपना प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्तियोंका चुनाव कर लेनेके बाद, हमेशा और कोरे नाममात्र अंग्रेजी-भाषी और अन्य भारतीयोंका प्रतिनिधित्व करनेके लिए एक श्री एम० सी० दाउदको ही चुना करते हैं। इस तरह वे सदा उपनिवेशवासी भारतीयोंकी इच्छाके विरुद्ध काम करते हैं।

५. उपर्युक्त प्रस्तावोंकी प्रतिलिपियाँ कॉनॉटके ड्यूक और उनके सचिव (सेक्रेटरी) को, भारतीय स्वागत समितिको, स्थानीय सरकारको, और स्थानीय समाचारपत्रोंको भी भेज दी जायें।

[अंग्रेजीसे]
नेटाल मर्क्युरी १२-८-१९१०

१५२ भारतीय या कुली?

[मेरित्सबर्ग]
दिसम्बर ११, १९११

श्री गांधीने मांग की कि उन्हें इतनी कार्रवाई हो जानेपर भी वकीलके रूपमें उपस्थित होने दिया जाये क्योंकि यह मुकदमा भारतीय समाजके लिए महत्त्वका है और पुलिस भारतीयोंकी मान-मर्यादाके बारेमें भ्रममें पड़ी मालूम होती है। कुछ दिन पूर्व उसने नेटालमें जन्मे ऐसे अनेक भारतीयोंको गिरफ्तार किया था जिन्होंने गिरफ्तारीकी धमकीके कारण ही अपनी जमानत जब्त करा दी थी। प्रतिवादीको जो भारतीय है और जो स्वच्छासे नेटाल आया था "कुली" बताकर कानूनकी धारामें फँसानेकी कोशिश की गई है। धाराके शब्द हैं ". . . ९ बजे रातके बाद . . . अगर अपने मालिकसे प्राप्त परवाना न दिखा सके"। वह ऐसा कैसे कर सकता था जब कि अपना मालिक वह खुद था? उन्होंने *श्रीमती विमन बनाम डर्बन-निगम* मुकदमेके फैसलेका कुछ अंश पढ़कर सुनाया जिसमें सर्वोच्च न्यायालयने कहा था कि उक्त शब्दका भाषान्तर "गिरमिटिया भारतीय" किया जा सकता है।

न्यायमूर्तिने कहा जो नजीर दी गई है उसके अलावा वे और कुछ कहना जरूरी नहीं समझते। वे कोई सख्त व पुख्ता नियम नहीं बना सकते क्योंकि इन मामलोंपर उनके गुण-दोषोंके आधारपर ही विचार करना होगा। कानून कठिन है। यद्यपि अभियुक्त साफ-साफ एक रंगदार व्यक्ति है फिर भी कानून उसे वैसे नहीं पुकारता इसलिए उसे बरी किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]
नेटाल मर्क्युरी, १२-१२-१९११

१५३ पत्र टाउन क्लार्कको

१४ मर्क्युरी लेन
[डर्बन]
दिसम्बर १०, १९११

सेवामें
श्री विलियम कूली
टाउन क्लार्क
डर्बन

प्रिय महोदय,

प्लेग-निरोधके हेतु स्वीकृत उपायोंके सम्बन्धमें भारतीय चौकसी-समिति (इंडियन विजिलैन्स कमिटी) जो-कुछ कर सकी उसके लिए आपका १२ तारीखका धन्यवाद-पत्र मिला। मैं आपका कृतज्ञ हूँ।

१. जिसमें [illegible] रातको [illegible] था। जिस दिन [illegible] था उस दिन [illegible] अभियुक्तकी पैरवी की थी।

मेरा निवेदन है कि समितिने जो-कुछ किया वह उसका कर्तव्य-मात्र था। और, अगर फिर कभी कोई अवसर आया तो नगर-परिषद नगरके स्वास्थ्यके हितमें जो भी उपाय करेगी उसमें भारतीय समाजका सहयोग पूर्ववत् तत्परतासे प्राप्त होगा।

आपका विश्वासपात्र,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन ३९१) से।

१५४ नेटाल भारतीय कांग्रेसका चिट्ठा

नेटाल भारतीय कांग्रेसका ११ अगस्त १९ १ तकका आय-व्ययका चिट्ठा जब कांग्रेसके सामने पेश करनेके लिए तैयार किया गया, तब गांधीजीने देखा कि चन्दे और दानकी ७२१ रकमोंकी सूचीमें जिसका योग १ ४ ४ पौंड था, कुछ रकमोंकी भूल है। उन्होंने अपनी सहीके साथ निम्नलिखित नोट लिख दी और अपने ही अक्षरोंमें चिट्ठेमें नीचे बताया हुआ परिवर्तन कर दिया।

सितम्बर [?] १९ १

टीप

चन्देके जोड़ और आय-व्ययके चिट्ठेमें दिखाई गई रकममें जो कि सही रकम है अन्तर रोकड़-बहीसे रकमें उतारते समय की गई किसी भूलका नतीजा है। मुझे यह कार्य करनेका समय नहीं मिला यद्यपि रोकड़-बही दो बार जाँच ली गई है। यह भूल शायद इसलिए हुई कि बहुतसे लोगोंका नाम रसीदें के लेनेपर भी चन्दा न देनेके कारण काट दिया गया है। रोकड़-बही जाँच की गई होती तो इस भूलका पता तुरन्त चल जाता।

मो० क० गांधी

[आय-व्ययके चिट्ठेमें परिवर्तन]

(आय-व्ययके चिट्ठेमें जोड़ें)

सूचीके अनुसार चन्दे तथा दानसे ११ अगस्त १९ १ तक प्राप्त हुई रकम जिसमें १८२ पौंडके ब्याजकी रकम भी शामिल है। अन्तरका कारण चिट्ठेके नीचे दी हुई टीपमें देखें।

[अंग्रेजीसे]

साबरमती संग्रहालय जिल्द ९९६।

१५५ टिप्पणी वकीलकी सलाहके लिए

डर्बन
नवम्बर २, १९११

१८९७ का अधिनियम १८, थोक और फुटकर व्यापारियोंको परवाने देनेका नियमन और नियन्त्रण करनेके लिए है।

१८७२ के कानून १९ की धारा ७१ उपधारा (क) में जिन परवानोंका जिक्र है उनमें इस अधिनियमकी धारा १ द्वारा थोक व्यापारियोंके परवाने भी शामिल कर दिये गये हैं। हमारा कथन है कि यह इसलिए किया गया है कि थोक व्यापारियोंके परवाने भी निगम (कारपोरेशन) के नियन्त्रणमें आ जायें।

इस अधिनियमकी धारा १ की रचना विशेष रूपसे इस प्रकार की गई है कि "फुटकर व्यापारियों" शब्दोंमें फेरीवालोंकी गिनती हो। हमारा कथन है कि इसका मतलब यह निकलता है कि शेष सब व्यापारी इस गिनतीसे बाहर हो गये।

वकीलकी रायमें इस अधिनियमके अनुसार रोटीवालों या कसाइयोंकी गिनती फुटकर व्यापारियोंमें होगी या थोक व्यापारियोंमें? उनके परवानोंपर यह अधिनियम लागू होगा या नहीं?

वकीलका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकृष्ट किया जाता है कि १८७२ के कानून १९ में रोटीवालों और कसाइयोंके परवानोंके लिए दरोंकी तालिका फुटकर दुकानदारोंके परवानोंकी तालिकासे अलग है और कमसे-कम आम लोगोंका खयाल तो यह है कि रोटीवालोंके परवाने रोटी पकाने-बेचनेके रोजगारसे असम्बद्ध कारोबारपर लागू नहीं होंगे। और इसी प्रकार फुटकर व्यापारीका परवाना रोटी पकाने-बेचनेके कारोबारपर लागू नहीं होता।

मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१५) से।

१५६ पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
[illegible]
अक्तूबर ८, १९११

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्,

मैंने गत नवम्बर मासमें पोर्टशेप्स्टनकी एक जायदादका स्वामित्व खान मुहम्मदके नाम दर्ज करानेके बारेमें सरकारकी सेवामें एक पत्र भेजा था।

सरकारने कृपापूर्वक यह निर्णय किया था कि यदि पट्टेकी शर्तें पूरी कर दी गई हैं तो सामान्य रीतिसे दर्ज करनेका हुक्म हो जायेगा। सब किस्तोंकी अदायगी हो जानेपर मैंने अपने पी० मैं० बर्गके एजेंटकी मारफत दर्ज करनेके अन्तिम दस्तावेजके लिए प्रार्थनापत्र भेजा और उसने २१ अगस्तको मुझे लिखा कि सरकारने स्वत्वाधिकारकी आज्ञा देनेसे इनकार कर दिया है क्योंकि बिक्री और खरीदके प्रमाणपत्रमें जो निर्माण-सम्बन्धी धारा है उसका पालन नहीं हुआ है।

मैं अपने मुवक्किलसे लिखा-पढ़ी करता रहा हूँ और मैं देखता हूँ यह सच है कि उसने मजिस्ट्रेटसे लिखित अनुमति पहले लिये बिना ही लकड़ी और लोहेकी इमारतें निर्मित की हैं। परन्तु मुझे मालूम हुआ है कि ऐसी इमारतें उस स्थानमें सर्वत्र निर्मित हुई हैं। इतना ही नहीं मजिस्ट्रेटने इमारतके मूल्यके विषयमें अपना प्रमाणपत्र दिया है जो कि महाधिवक्ता (सर्वेयर जनरल) के सामने पेश किया गया था।

मुझे और भी मालूम हुआ है कि इन्हीं परिस्थितियोंमें दूसरोंको स्वत्वाधिकारके दस्तावेज दिये गये हैं कि लकड़ी और लोहेकी इमारत खड़ी करनेसे पहले मेरे मुवक्किलने ईंटें बनानेकी आज्ञा माँगी थी कि आज्ञा न मिलनेपर ही उसने लकड़ी और लोहेकी इमारत खड़ी की कि उल्लिखित इमारत बड़े प्रतिष्ठित किरायेदार अर्थात् स्टैंडर्ड बैंकके कब्जेमें है और यह कि मेरा मुवक्किल उस भूमिपर ईंट और पत्थरकी इमारतें भी खड़ी कर रहा है।

इन परिस्थितियोंमें मैं निवेदन करता हूँ कि स्वत्वाधिकारकी रजिस्ट्री करानेके बारेमें मेरे मुवक्किलके प्रार्थनापत्रपर पुनः विचार किया जाये। मुझे भरोसा है कि गवर्नर महोदय कृपापूर्वक इसे मंजूर करेंगे।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ ८११८/११।

१५७. विदाई-सभामें भाषण

गांधीजीको, उनके भारत रवाना होनेसे पूर्व नेटाल भारतीय कांग्रेस और अन्य भारतीय संस्थाओंकी ओरसे मानपत्र दिये गये थे। कांग्रेसके कार्यालय-भवनकी विदाई सभामें कई प्रमुख यूरोपीय नागरिक भी शामिल थे। इस अवसरपर गांधीजीने जो भाषण दिया उसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है।

[डर्बन]
अक्तूबर १५, १९०१

श्री गांधीने उस भव्य और बहुमूल्य मानपत्रके[1] लिए सच्चे हृदयसे धन्यवाद दिया। उन्होंने अनेक उपहारोंके दाताओंको और उनको भी धन्यवाद दिया जिन्होंने उनकी प्रशंसामें बढ़-चढ़ कर भाषण दिये थे। उन्होंने कहा कि मैं इस प्रश्नका कोई संतोषजनक उत्तर नहीं ढूँढ़ सका कि इस सबका अधिकारी मैं कैसे बन गया हूँ? सात या आठ वर्ष हुए,[2] हम लोग एक खास सिद्धान्त लेकर चले थे और मैंने इन उपहारोंको इस संकेतके रूपमें स्वीकार किया है कि हम उसी सिद्धान्तपर चलते रहेंगे जिसे लेकर उस समय चले थे। नेटाल भारतीय कांग्रेसने उपनिवेशमें बसनेवाले यूरोपीय और भारतीयोंके बीच सद्भाव बढ़ानेका काम किया है। उसमें हमने प्रगति की है भले वह थोड़ी ही क्यों न हो। पिछले चुनाव-सम्बन्धी भाषणोंमें हमने भारतीयोंके विरुद्ध बहुत-कुछ सुना। दक्षिण आफ्रिकामें आवश्यकता गोरे लोगोंके देशकी नहीं गोरे भ्रातृमण्डलकी भी नहीं बल्कि एक साम्राज्यगत भ्रातृमण्डलकी है। प्रत्येक व्यक्तिका जो साम्राज्यका मित्र है यही ध्येय होना चाहिए। इंग्लैंड पूर्वमें अपने अधीन प्रदेशोंको कभी नहीं छोड़ेगा और जैसा कि लॉर्ड कर्जनने कहा है भारत ब्रिटिश साम्राज्यका उज्ज्वलतम रत्न है। हम दिखाना चाहते हैं कि हम समाजके एक खास अंग हैं और यदि हमने जो कार्य प्रारम्भ किया था उसे जारी रखेंगे तो जब कुहरा छँट जायेगा हम एक-दूसरेको ज्यादा अच्छी तरह जानेंगे।" इसके बाद श्री गांधीने उनकी देशी भाषामें भाषण दिया और भारतीयोंके उस विशिष्ट देशबन्धुके प्रति हर्षोल्लासके साथ सभा समाप्त हुई।

[अंग्रेजीसे]
नेटाल ऐडवर्टाइज़र १६-१०-१९०१

[संलग्न पत्र १]

[अभिनन्दन-पत्र]

सेवामें
श्री मोहनदास करमचंद गांधी
बैरिस्टर
अवैतनिक मन्त्री, नेटाल भारतीय कांग्रेस आदि आदि
महानुभाव,

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले नेटालवासी सब वर्गोंके भारतीयोंकी ओरसे, आपके भारत प्रस्थान करनेके अवसरपर आपकी सेवाओं पर अभिनन्दनपत्र भेंट करनेकी आज्ञा चाहते हैं। हमारा काम यद्यपि

१. देखिए संलग्न पत्र १ और २।
२. यह अगस्त १८९४ में नेटाल भारतीय कांग्रेसकी स्थापनाका है।

(२) इनमें से किसी भी अलंकारको या ऐसे अलंकारोंको जिनका उपयोग न किया जा सका हो कांग्रेसके क्षेत्रमें या उसके बाहर किसी भी लाभप्रद कार्यके लिए मुझे वापस लेनेका अधिकार हो।

जब इन अलंकारोंके उपयोगकी जरूरत पड़े तब मेरे लिए यह सम्मानकी बात होगी कि कांग्रेस हो सके तो मुझसे सलाह ले कि जिस कार्यके लिए इनका उपयोग होगा वह मेरी रायमें पत्रके अर्थके अनुसार, आपात-कार्य है या नहीं। किन्तु कांग्रेस मुझसे पूछे बिना किसी भी समय इन अलंकारोंको निकालनेके लिए स्वतन्त्र है।

मैंने जान-बूझकर और प्रार्थनापूर्वक उक्त कदम उठाया है। मैं यह अनुभव करता हूँ कि इन मूल्यवान उपहारोंका व्यक्तिगत उपयोग न तो मैं कर सकता हूँ और न मेरा परिवार। वे इतने पवित्र हैं कि मैं या मेरे *उत्तराधिकारी इन्हें बेच भी नहीं सकते*। यह देखते हुए कि दूसरी सम्भावनाके विरुद्ध कोई गारंटी नहीं हो सकती मेरी रायमें अपने कौमके प्रेमका प्रति-दान देनेका केवल एक ही उपाय है कि मैं एक पवित्र उद्देश्यके लिए इन सबका समर्पण कर दूँ। और चूँकि वास्तवमें कांग्रेसके सिद्धान्तोंके प्रति ये श्रद्धांजलिके परिचायक हैं इसलिए मैं इन्हें कांग्रेसको ही वापिस देता हूँ।

अन्तमें मैं फिर आशा करता हूँ कि हमारे लोग (संस्थाके प्रति) अपने अच्छे इरादोंको जिनका कि हालका उपहार प्रदान एक उपलक्षण था कार्य-रूपमें परिणत करेंगे।

मेरी हार्दिक प्रार्थना है कि कांग्रेस साम्राज्य और समाजकी सेवा करती रहे और मेरे उत्तराधिकारियोंको वही समर्थन प्राप्त हो जो मुझे प्राप्त हुआ है।

आपका सच्चा

[अलंकारोंकी सूची]

सन् १८९६ में दिया गया स्वर्णपदक।
सन् १८९६ में तमिल भारतीयों द्वारा दी गई स्वर्ण-मुद्रा।
सन् १८९९ में जोहानिसबर्ग समिति द्वारा भेंट की गई सोनेकी जंजीर।
श्री पारसी रुस्तमजी द्वारा भेंट की गई सोनेकी जंजीर, गिन्नियोंकी थैली और सात स्वर्ण-मुद्राएँ।
श्री दादा अब्दुल्ला ऐंड कम्पनीके श्री चुकुल द्वारा भेंट की गई सोनेकी घड़ी।
हमारे समाज द्वारा समर्पित हीरेकी अँगूठी।
गुजराती हिन्दुओं द्वारा समर्पित सोनेका हार।
र्स्टेंजरवासी काठियावाड़ी हिन्दुओं द्वारा भेंट किया गया चाँदीका प्याला तथा तश्तरी और श्री अब्दुल कादिर तथा अन्य सज्जनों द्वारा भेंट किया गया हीरेका पिन।

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३९२१-१) से।

१६० पत्र उपनिवेश-सचिवको

१४ मर्क्युरी लेन
डर्बन
अक्तूबर १८ १९ १

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

श्रीमन्

आज आमको प्रतिनिधि भारतीयोंकी ओरसे मैंने सेवामें निम्नलिखित तार भेजा है

डर्बनका भारतीय समाज लॉर्ड मिलनरको आदरयुक्त अभिनन्दन-पत्र देना चाहता है। क्या लॉर्ड महोदय उसे स्वीकार करेंगे?

इस आशासे कि परमश्रेष्ठकी अनुमति मिल जायेगी मुझे प्रस्तावित विनम्र मानपत्र[1]की प्रति परमश्रेष्ठकी स्वीकृतिके लिए भेजनेका अधिकार दिया गया है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ ९ १८/१९ १।

१६१ अभिनन्दन-पत्र लॉर्ड मिलनरको

डर्बन
अक्तूबर १८ १९ १

परमश्रेष्ठकी सेवामें निवेदन है कि

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले इस उपनिवेशके निवासी ब्रिटिश भारतीयों और ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंकी ओरसे इस नगरमें पधारनेपर परमश्रेष्ठका सादर स्वागत करते हैं। महामहिम सम्राट् द्वारा महान् पदवी दी जानेके उपलक्ष्यमें हम परमश्रेष्ठको हार्दिक बधाई भी देते हैं।

हम सर्वशक्तिमानसे हार्दिक प्रार्थना करते हैं कि वह परमश्रेष्ठको स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन प्रदान करे जिससे कि परमश्रेष्ठने ब्रिटिश झंडेके नीचे दक्षिण आफ्रिकाकी अलग-अलग जातियोंको एक सूत्रमें बाँधनेका जो महत्त्वपूर्ण कार्य हाथमें लिया है उसको आगे रखने और सफल बनानेमें परमश्रेष्ठ समर्थ हों।

१ देखिए अगला शीर्षक।

क्या हम परमश्रेष्ठका ध्यान नये उपनिवेशोंमें ब्रिटिश भारतीयोंकी दशाके प्रश्नकी ओर खींच सकते हैं? इसे परमश्रेष्ठके हाथों ही हल होना है। हमें विश्वास है कि इस बारेमें किसी निर्णयपर पहुँचते समय परमश्रेष्ठ हमारे जन्मके देशकी परम्पराओं राजगद्दीके प्रति हमारी अटल और प्रामाणिक राजभक्ति और हमारी मानी हुई नियम-पालनकी प्रवृत्तिका ध्यान रखेंगे। परमश्रेष्ठकी व्यापक सहानुभूति उदार स्वभाव और सम्राट्के विशाल साम्राज्यके विविध भागोंके निकट परिचयको जानते हुए हमें दृढ़ विश्वास है कि नये उपनिवेशोंमें बसनेवाले भारतीयोंका प्रश्न सम्भवतः परमश्रेष्ठसे ज्यादा अच्छे हाथोंमें नहीं हो सकता।

हम सैकड़ों ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंकी ओरसे परमश्रेष्ठसे सादर प्रार्थना करते हैं कि यदि सम्भव हो तो उनकी वापसीके लिए जल्दी की जाये और खास कर इस बातको ध्यानमें रखते हुए जल्दी की जाये कि सामान्य सहायता-कोषसे उन्होंने लाभ नहीं उठाया।

अन्तमें हम परमश्रेष्ठसे अनुरोध करते हैं कि राजगद्दीके प्रति हमारी अटल-भक्तिका महामहिम सम्राट्की सेवामें निवेदन करें।

परमश्रेष्ठके अत्यन्त नम्र और आज्ञाकारी
सेवक,

[अंग्रेजीसे]

पीटरमैरित्सबर्ग आर्काइव्ज सी एस ओ ९ १८/१९ १।

१६२ भाषण मॉरिशसमें

दक्षिण आफ्रिकासे भारत जाते हुए गांधीजी मॉरिशसमें पोर्ट लुई बन्दरमें रुके थे। वहाँके भारतीय समाजने स्वागत आयोजन किया था। इस अवसरपर गांधीजीने जो भाषण दिया उसका आशिक पत्रोंकी रिपोर्टोंके आधारपर तैयार किया गया ब्यौरा नीचे दिया जाता है।

नवम्बर ११ १९ १

श्री गांधीने समारोहमें उपस्थित मेहमानों और खास तौरपर मेजबानको धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा कि द्वीपके चीनी उद्योगको जो अभूतपूर्व सफलता मिली है उसका श्रेय प्रवासी भारतीयोंको है। उन्होंने जोर दिया कि भारतीयोंको अपनी मातृभूमिमें होनेवाली घटनाओंका परिचय रखना अपना कर्तव्य मानना चाहिए तथा राजनीतिमें भी दिलचस्पी लेते रहना चाहिए। उन्होंने बच्चोंकी शिक्षापर तुरन्त ध्यान देनेकी आवश्यकतापर बहुत ही जोर दिया।

[अंग्रेजीसे]
लॉकार्ड १५-११-१९ १
ल रैडिकल १५-११-१९ १

१६३. अपील : वाइसरायकी सेवामें शिष्टमण्डल भेजनेके लिए

गांधीजी सितम्बरके मध्यमें भारत पहुँचे। यह दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके प्रश्नपर उनका पहला सार्वजनिक वक्तव्य था।

बम्बई
सितम्बर १९, १९ १

सेवामें
सम्पादक
टाइम्स ऑफ़ इंडिया
बम्बई

महोदय

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय बड़ी उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहे हैं कि वे उस उपमहाद्वीपमें जीवित रहनेके लिए भयंकर विषमताओंके विरुद्ध जो संघर्ष कर रहे हैं उसमें भारतीय जनता उनकी सहायता किस प्रकार करेगी। आपको ज्ञात ही है कि पूर्व भारत संघ (ईस्ट इंडिया असोसिएशन) ने लॉर्ड जॉर्ज हैमिल्टनको जोरदार शब्दोंमें एक प्रार्थनापत्र भेजा है। सर मंचरजी भावनगरी पीड़ितोंकी अत्यन्त लाभदायक सेवा कर रहे हैं। वे मौका हो या न हो ब्रिटिश लोकसभाके भीतर और बाहर, अपनी वाणी और लेखनीसे हमारी शिकायतोंको दूर करानेका प्रयत्न करते रहते हैं। और उन्हें सफलता भी मिली है। आपने श्रीमन् हमारी सहायता निरन्तर की है। भारतीय और आंग्ल-भारतीय जनता भी सदा हमारी सहायक रही है। कांग्रेस[1] भी हमारे प्रति सहानुभूतिके प्रस्ताव प्रतिवर्ष पास करती रहती है। परन्तु मेरी नम्र सम्मति है कि इससे कुछ अधिक करनेकी जरूरत है। दक्षिण आफ्रिकाके प्रमुख भारतीयोंने मुझे यह सुझानेको कहा है कि कुछ वर्ष पूर्व स्वर्गीय सर विलियम विल्सन हंटरकी प्रेरणासे जैसा एक शिष्टमण्डल श्री चेम्बरलेनकी सेवामें गया था हमारे प्रतिनिधियोंका वैसा ही शिष्टमंडल वाइसरायकी सेवामें जाये। यह तो स्पष्ट ही है कि भारतमें वाइसराय और इंग्लैंडमें हमारे कार्यकर्ताओंका बल बढ़ानेकी आवश्यकता है। यद्यपि ह्वाइटहॉल और डाउनिंग स्ट्रीट [लंदन] के अधिकारी सहानुभूति-रहित नहीं हैं — वे वैसे हो नहीं सकते।

दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीय उपनिवेश-कार्यालयपर दबाव डालनेका भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। वे चाहते हैं कि उन्हें ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध मनमाने कानून बनानेका अबाध अधिकार मिल जाये। इसलिए यदि एक शिष्टमण्डल भेज दिया जाये और, सम्भव हो तो उसका समर्थन सभाओं द्वारा भी कर दिया जाये तो उसका फल अवश्य निकलेगा। वस्तु-स्थितिको समझनेमें हमें भूल नहीं करनी चाहिए। हम आशा करें कि श्री चेम्बरलेनने उपाके लिए घोषणा कर दी है कि भारतीयोंपर विशेष प्रतिबन्ध लगानेके रूपमें वे सम्राट्के करोड़ों प्रजाजनोंका अपमान किया जाना सहन नहीं करेंगे। इसीलिए नेटालवाले अपना मतलब प्रवासी-प्रतिबन्धक और विक्रेता परवाना-अधिनियमों[2] जैसे अप्रत्यक्ष उपायों द्वारा पूरा करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। कहनेको तो ये कानून सबपर लागू होते हैं परन्तु अमलमें इनका प्रयोग केवल भारतसे आनेवालोंपर किया जाता है।

१ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस।
२ देखिए खण्ड २, पृ ३०९ से ३८९।

केप कालोनीके विधि-निर्माता भी अपने यहाँ नेटाल जैसे प्रतिबन्ध लागू करना चाहते हैं।

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीमें बहुत कठोर भारतीय-विरोधी कानून पहलेसे लागू हैं। ट्रान्सवालमें भारतीय लोग जमीनके मालिक नहीं हो सकते उन्हें केवल बस्तियोंमें रहना और व्यापार करना पड़ता है और वे पटरियोंपर नहीं चल सकते इत्यादि। ऑरेंज रिवर कालोनीमें तो वे विशेष अनुमति प्राप्त किये बिना प्रविष्ट भी नहीं हो सकते और प्रविष्ट होनेकी अनुमति भी केवल घरेलू नौकरों या मजदूरोंको मिलती है। पुराने दोनों उपनिवेशोंको पूर्ण स्वशासनके अधिकार प्राप्त हैं। नवीन अधिकृत प्रदेशोंको ये अधिकार प्राप्त नहीं हैं। उनपर सीधा उपनिवेश-कार्यालयका नियन्त्रण है और यहाँ ही समस्या सबसे ज्यादा जोरदार है। सर मंचरजीके पूछनेपर श्री चेम्बरलेनने जो जवाब दिया है वह भाषा मित्रतापूर्ण होनेपर भी सन्तोषजनक बिलकुल नहीं है। स्पष्ट है कि वे पुराने गणराज्योंके कानूनोंपर कलम फेरना नहीं चाहते। लॉर्ड मिलनरसे कहा गया है कि वे विचार करके बतलायें कि उन कानूनोंमें क्या परिवर्तन करना चाहिए और क्या नहीं। इसलिए भारतको इसी समय यह बतलाकर कि वह ब्रिटिश साम्राज्यका अभिन्न अंग है दक्षिण आफ्रिकामें अपने देशवासियोंके लिए ब्रिटिश नागरिकोंके पूरे अधिकारोंका दावा करना चाहिए। निश्चय ही यह प्रश्न साम्राज्य-व्यापी महत्त्वका है। स्वर्गीय सर विलियम विल्सन हंटरके शब्दोंमें प्रश्न यह है कि भारतसे बाहर निकलते ही ब्रिटिश भारतीयोंको ब्रिटिश प्रजाकी स्थितिका पूरा-पूरा लाभ उठानेका अधिकार है या नहीं? इस प्रश्नका उत्तर बहुत हदतक उस कार्रवाईपर निर्भर करेगा जो कि भारतकी जनता अपने देशमें करेगी। यह समय विशेष है, क्योंकि ब्रिटिश साम्राज्यके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक इस समय साम्राज्य-भावनाकी लहर फैल रही है। इसलिए इस समय भारतकी जनता दृढ़ संयत और सर्वसम्मत स्वरसे जिस लोकमतका स्थिरतापूर्वक प्रकाशन करेगी उसकी उपेक्षा उपनिवेश भी नहीं कर सकेंगे।

इसलिए मैं दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए भारतीयोंकी ओरसे आपसे और आपके सहयोगियोंसे अपील करता हूँ कि आप हमारी अभीष्ट सहायता कीजिए। मैं आपके सहयोगियोंसे प्रार्थना करता हूँ कि यदि सम्भव हो तो वे भी इस पत्रको उद्धृत करें।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

वॉयस ऑफ इंडिया २-१२-१९०१

१६४ भाषण : कलकत्ता कांग्रेसमें

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कलकत्तेमें हुए १७वें अधिवेशनमें दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंकी मान-मर्यादाके सम्बन्धमें प्रस्ताव पेश करते हुए गांधीजीने निम्नलिखित भाषण दिया था।

[कलकत्ता
दिसम्बर २७, १९०१]

सभापतिजी और प्रतिनिधि भाइयो,

मैं जो प्रस्ताव आपके विचारार्थ पेश करना चाहता हूँ वह इस प्रकार है :

> यह महासभा दक्षिण आफ्रिकामें बसे भारतीयोंके साथ उनके अस्तित्व-सम्बन्धी संघर्षमें सहानुभूति प्रकट करती है और चूंकि भारतीय-विरोधी कानूनोंकी ओर परम-श्रेष्ठ वाइसरॉयका ध्यान आदरपूर्वक आकर्षित करते हुए भरोसा करती है कि ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशोंमें बसे ब्रिटिश भारतीयोंकी मान-मर्यादाका प्रश्न जब अभी माननीय उपनिवेश-मन्त्रीके विचाराधीन ही है परमश्रेष्ठ उसका न्यायपूर्ण और योग्य निबटारा करा देनेकी कृपा करेंगे।

सज्जनो, मैं आपकी सेवामें एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे नहीं बल्कि अधिक तो दक्षिण आफ्रिकामें बसे एक लाख भारतीयोंकी तरफसे और शायद उन भावी प्रवासी भारतीयोंकी तरफसे भी जो हम चाहते हैं विदेशोंमें जायें और ब्रिटिश प्रजाजनोंकी मान-मर्यादाके साथ जायें एक अर्जदारके रूपमें उपस्थित हुआ हूँ। सज्जनो, आप जानते हैं कि दक्षिण आफ्रिका लगभग भारत जितना ही बड़ा देश है और वहाँ लगभग एक लाख ब्रिटिश भारतीय रहते हैं। इनमें से पचास हजार केवल नेटाल उपनिवेशमें बसे हुए हैं। दक्षिण आफ्रिकामें वही एक ऐसा उपनिवेश है जो बाहरसे गिरमिटिया मजदूरोंको लाता है। और जहाँतक दक्षिण आफ्रिकाका सम्बन्ध है, इन मजदूरोंका प्रश्न एक बहुत बड़ी समस्या बन गया है। सज्जनो, समस्त दक्षिण आफ्रिकामें हमारी शिकायतें दो प्रकारकी हैं। पहले वर्गकी शिकायतें तो यूरोपीय उपनिवेशियोंके भारतीय-विरोधी रुखसे पैदा होती हैं। और दूसरे प्रकारकी शिकायतें उस भारतीय-विरोधी भावनासे उत्पन्न होती हैं जो दक्षिण आफ्रिकाके सारे उपनिवेशोंके कानूनोंमें उतारी गई है। पहले वर्गकी शिकायतोंका एक उदाहरण यह है कि तमाम भारतीय — फिर वे कोई भी क्यों न हों — वहाँ कुलियोंकी जमातमें शामिल किये जाते हैं। अगर हमारे सुयोग्य सभापतिजी भी दक्षिण आफ्रिका जायें तो वे भी कुली हैं — एशियाकी अर्ध-सभ्य जातियोंके एक व्यक्ति — मान लिये जायेंगे। सज्जनो, मैं आपके सामने केवल दो उदाहरण पेश करूँगा जिनसे आपको मालूम हो जायेगा कि इस कुली शब्दके प्रयोगने सारे दक्षिण आफ्रिकामें कितना उपद्रव किया है। कुछ दिन पहले मेरा खयाल है पिछले वर्ष बम्बईके महान् आदमजी पीरभाईके पुत्र जो खुद भी बम्बई निगम (कार्पोरेशन) के सदस्य हैं नेटाल आये। वहाँ उनके कोई मित्र नहीं थे। जान-पहचान भी नहीं थी। उन्होंने कई होटलोंमें जगह पानेकी कोशिश की। कुछ होटल मालिकोंने तो शिष्ट ढंगसे कहा कि हमारे पास जगह खाली नहीं है। किन्तु दूसरे होटल मालिकोंने

१ देखिए हिन्दूकी कतरन। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२१।

साफ-साफ कह दिया कि "हम अपने होटलोंमें कुलियोंको नहीं ठहरावेंगे।" इसी प्रकार एक बार अवधके स्व. काजी शिहाबके पुत्र भी केकोबाद भी नेटाल गये थे। बादमें वे केपटाउन चले गये थे। केपटाउनसे वे नेटाल लौट रहे थे परन्तु उन्हें बेहद कठिनाइयोंके बाद कहीं जमीनपर कदम रखने दिया गया। उन दिनों दक्षिण आफ्रिकामें प्लेग-सम्बन्धी पाबन्दियाँ थीं। नेटाल जानेके लिए उन्होंने पहले दर्जेका टिकट तो किसी तरह पा लिया परन्तु पहुँचनेपर उनपर क्या बीती? प्लेग-अधिकारीने उनसे साफ कह दिया "आप तो भारतीय जैसे दीखते हैं। मैं आपको जहाजसे नहीं उतरने दे सकता। मुझे आदेश है कि किसी भी रंगदार आदमीको उतरने न दिया जाये।" और आप विश्वास करेंगे? नेटालके उपनिवेश-सचिवको इसके लिए तार भेजना पड़ा तब कहीं उन्हें जमीनपर कदम रखने दिया गया। और यह सब इसलिए कि उनकी चमड़ीका रंग काला था।

अब दूसरे वर्गकी शिकायतोंकी बात लीजिए। जहाँतक नेटालका सम्बन्ध है मुझे भय है, वहाँ कुछ नहीं हो सकता। कानून पहले ही मंजूर हो चुका है। उसमें लिखा है कि जो भारत वासी स्त्री या पुरुष प्रवासी-अधिनियमके साथ जुड़े हुए फार्मको यूरोपकी किसी भाषामें नहीं भर सकता उसे नेटालमें प्रवेश नहीं मिलेगा। यह कानून बहुत बड़ी संख्यामें भारतीयोंको नेटालमें जाकर रहनेसे रोकता है। नेटाल-उपनिवेशमें एक और कानून है जिसे "विक्रेता-परवाना अधिनियम (डीलर्स लाइसेंसेज ऐक्ट) कहा जाता है। यह कानून परवाना-अधिका रियोंके हाथोंमें निरंकुश सत्ता सौंप देता है। वे जिसे चाहें विक्रेता-परवाना दे सकते हैं और जिसे न देना चाहें उसे इनकार कर सकते हैं। उनके निर्णयपर अपीलके लिए कहीं कोई गुंजाइश नहीं रखी गई है। केवल स्थानिक निकायों (लोकल बोर्डों) और निगमों (कार्पोरेशनों) के —जो कि इन अधिकारियोंको नियुक्त करते हैं— सामने जाकर वे अपना दुखड़ा रो सकते हैं। इनमें से कुछने तो इन अधिकारियोंको स्पष्ट आदेश दे रखे हैं कि वे किसी भी भारतीयके नाम विक्रेता-परवाने जारी न करें। शुभाशा अन्तरीप (केप ऑफ गुड होप) उपनिवेशमें बहुत अधिक भारतीय-विरोधी कानून नहीं हैं। परन्तु जहाँतक ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी बात है वहाँ तो हमारे दुर्भाग्यवश पुराने कानून ही अब भी अमलमें आ रहे हैं। ट्रान्सवालमें तो भारतीयोंको पृथक् बस्तियोंमें ही रहना और व्यापार करना पड़ता है। वे पैदल-पटरियोंपर नहीं चल सकते। पृथक बस्तियोंसे बाहर कहीं भी वे जमीन-जायदाद नहीं खरीद सकते। ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें तो हम केवल मजदूरोंकी हैसियतसे ही प्रवेश कर सकते हैं। अब बम्बई प्रदेशके बिना मुकुटके राजाके प्रति उचित आदर प्रकट करते हुए, मैं मानता हूँ कि ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें हमारी हालत इतनी खराब इसलिए है कि ब्रिटिश प्रशासनोंके नाते हमारे अधिकारोंकी रक्षा करनेके लिए उचित कदम नहीं उठाये गये। और अगर नेटालमें कुछ न किया गया होता तो वहाँ भी हमारी हालत आजकी अपेक्षा बेहद खराब होती। समस्त दक्षिण आफ्रिकामें यही स्थिति है।

अब सवाल यह है कि इस विषयमें कांग्रेस क्या कर सकती है? जहाँ तक ट्रान्सवालका प्रश्न है श्री चेम्बरलेनके दिलमें अबतक हमारे प्रति बहुत सहानुभूति रही है। पिछली हुकूमतके दिनोंमें उन्होंने हमारे दुखड़ोंके प्रति सहानुभूति प्रकट की थी। परन्तु उस समय वे प्रत्यक्ष कुछ नहीं कर सके थे क्योंकि वे लाचार थे। अब ऐसी स्थिति नहीं है। वे सर्वेसर्वा हैं। उन्होंने लॉर्ड मिलनरसे सलाह-मशविरा करनेका वादा किया है कि पुराने कानूनको किस प्रकार बदला जा सकता है। इसलिए हम दक्षिण आफ्रिकावालोंके लिए अगर कुछ हो सकता है तो

१ कॉरिन्थियन जहाज।

अभी नहीं तो कभी कुछ नहीं हो सकेगा। यह सलाह दे सकते और जोर दे-देकर उन्हें करते हैं। उनके एक बार हो जानेके बाद तो कुछ भी नहीं हो सकेगा। इंग्लैंडमें जो हमारे हितैषी हैं वे अपने पत्रोंमें मुझे लिखते हैं "भारतकी जनतामें आन्दोलन कीजिए। वह सभाएँ करे। अगर सम्भव हो तो वाइसरायके पास शिष्टमण्डल भेजिए और यहाँ हमारे हाथ मजबूत करनेके लिए जो-जो भी वहाँ किया जा सकता हो कीजिए। अधिकारियोंकी हमदर्दी है और आपको न्याय मिल सकता है।" यह एक तरीका है जिससे आप हमारे प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट कर सकते हैं। परन्तु हम केवल जबानी सहानुभूति नहीं चाहते। हम आपसे धन भी नहीं चाहते। धनके मामलेमें तो दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए हमारे देशभाइयोंने यहाँके अकाल-पीड़ितोंकी काफी सहायता की है। टाइम्स ऑफ इंडियामें अकाल-पीड़ितोंके जो चित्र छपे थे उन्हें वहाँकी जनताके लिए हमने पुनः मुद्रित किया था। आप यह सुनकर आश्चर्य करेंगे कि उपनिवेशमें जो भाई पैदा हुए हैं उन्होंने जब इन चित्रोंको देखा तब उनकी आँखोंमें आँसू आ गये। केवल भारतीयोंने २ पौंड चन्दा दिया था। और मुझे स्वीकार करना चाहिए कि उस समय यूरोपीयोंने भी अच्छी मदद दी थी। परन्तु मैं तो प्रस्तुत विषयपर आऊँ। हमारे प्रतिनिधियोंमें प्रभावशाली पत्रोंके सम्पादक हैं, बैरिस्टर हैं, व्यापारी हैं, राजा-महाराजा आदि हैं। ये सब बहुत व्यावहारिक मदद कर सकते हैं। सम्पादक इस विषयमें सही-सही जानकारी एकत्र करके अपने पत्रोंमें प्रवासी भारतवासियोंके सारे प्रश्नका और हमारे दुखड़ोंका व्यवस्थित विवरण दे सकते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकारका व्यवसाय करनेवाले लोग दक्षिण आफ्रिकामें जाकर बस सकते हैं और इस तरह अपनी और अपने देशभाइयोंकी सेवा कर सकते हैं। मैं मानता हूँ कि कांग्रेस दूसरी बातोंके साथ-साथ यह भी प्रमाणित कर सकती है कि विदेशोंमें जाकर तरह तरहके साहसिक काम करने और स्वशासन सम्बन्धी योग्यतामें हम संसारकी दूसरी सभ्य जातियोंकी अपेक्षा किसी प्रकार कम नहीं हैं। अब अगर हम यूरोपीयोंके इतिहासपर नजर डालें तो देखेंगे कि शुरू-शुरूमें साहसिक लोग दूसरे देशोंमें जा पहुँचते हैं। उनके बाद व्यापारी वहाँ जाते हैं। इनके पीछे-पीछे मिशनरी, डॉक्टर, वकील, कारीगर, इंजीनियर और पेशेवर लोगोंका तांता बँध जाता है। ऐसी सूरतमें वे जहाँ-कहीं जाकर बसते हैं वहाँ स्वतन्त्र, वैभवशाली और स्वशासित कौमोंके रूपमें उभर आयें तो इसमें कौन बड़ी आश्चर्यकी बात है? हमारे व्यापारी दक्षिण आफ्रिका, जंजीबार, मॉरिशस, फीजी, सिंगापुर, आदि संसारके भिन्न-भिन्न भागोंमें हजारोंकी संख्यामें गये हैं। क्या उनके पीछे भारतीय धर्मोपदेशक, बैरिस्टर, डॉक्टर, तथा अन्य पेशे करनेवाले भारतीय भी वहाँ गये हैं? कितने दुःखकी बात है कि इन गरीब प्रवासी भारतवासियोंको धर्मकी शिक्षा देनेका प्रयास यूरोपीय धर्मोपदेशक करते हैं। यूरोपीय वकील बैरिस्टर उनकी कानूनी सहायता करते हैं और यूरोपीय डॉक्टर जो उनकी भाषा भी नहीं जानते उनका इलाज करनेका प्रयास करते हैं। इन दूर देशोंमें बसे भारतीय व्यापारियोंको अपने अधिकारोंका कुछ भी ज्ञान नहीं। दिलमें खूब उत्साह है। परन्तु उसका उपयोग कहाँ और किस प्रकार करें यह वे नहीं जानते। हमारे अशिक्षित लोगोंके बीच पड़े हुए हैं। यद्यपि लोगोंमें उनके बारेमें तरह-तरहकी [illegible] धारणाएँ बनी हुई हैं और उन्हें दूर करनेमें वे अपने आपको असमर्थ पाते हैं। ऐसी सूरतमें अगर वे अपने-आपको अँधेरेमें टटोलते हुए पायें और आसमान [illegible] भावनाओंके शिकार बनें तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? बेचारे [illegible] रहते हैं। आज हमको इस अधिवेशनका आरम्भ एक गीतसे शुरू हुआ जिसमें अन्तिम पदमें कहा गया है कि हमें [illegible] चाहिए। हमारे अन्दर भक्ति भारत-माताके कामें पूर्ण [illegible] और [illegible] हो, दूसरोंके कामोंमें न हो और [illegible] एकत्र

हों। सज्जनो, आज मैं जिन सुयोग्य पुरुषोंको अपने सामने देख रहा हूँ इनमें से अगर कुछ भी इस भावनासे दक्षिण आफ्रिका चले जायें तो हमारी सारी शिकायतोंका अन्त हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी कलकत्ता द्वारा प्रकाशित "सेवन्टीन्थ इंडियन नेशनल कांग्रेस" (१९०२) से।

१६५ भाषण: कलकत्तेकी सभामें[1]

कलकत्ता
जनवरी १९, १९०२

श्री गांधीने खास तौरसे दक्षिण आफ्रिकाकी चर्चा करते हुए उस महाखण्डके निवासी ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिपर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि नेटालमें प्रवासी-प्रतिबन्धक-अधिनियम, परवानोंसे सम्बन्धित कानून और सरकार द्वारा भारतीय बच्चोंकी शिक्षाका प्रबन्ध चिन्ताके मुख्य विषय हैं। ट्रान्सवालमें भारतीय जमीन-जायदाद नहीं रख सकते और न पृथक बस्तियोंके सिवा कहीं अन्यत्र व्यापार कर सकते हैं। वे पैदल-पटरियोंपर भी नहीं चल सकते। ऑरेंज रिवर कालोनीमें तो भारतीय मजदूरोंके सिवा और किसी रूपमें घुस भी नहीं सकते। और मजदूरोंकी हैसियतसे भी खास मंजूरी लेकर ही घुस सकते हैं। वस्तुतः दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके साथ होनेवाले व्यवहारकी बहुत-सी बातें जो अखबारोंमें पहले ही छप चुकी थीं दोहराई गईं। किन्तु उन्होंने कहा कि मैं आप लोगोंके सम्मुख स्थितिका भयानक पक्ष जिससे कि आप आंशिक रूपसे पहले ही परिचित हैं प्रस्तुत करनेके उद्देश्यसे नहीं आया हूँ बल्कि आया हूँ उसका उज्ज्वल पूर्वभूमा पक्ष रखनेके लिए। बादमें उन्होंने बताया कि किस प्रकार वे लड़ाई छिड़नेके समयसे कुछ उपनिवेशियोंकी सहानुभूति प्राप्त करनेमें सफल हुए हैं। उनके विचारमें भारतीयोंका मामला कुछ प्रगति कर रहा है। किन्तु उन्होंने उस भारतीय विरोधी कार्रवाईकी जोरदार निन्दा की जिसका उद्देश्य ऐसे प्रत्येक भारतीयको जो कोई भी यूरोपीय भाषा नहीं पढ़ सकता, उपनिवेशसे निकाल बाहर करना है। सभामें उपस्थित सज्जन जो सभी कमसे-कम अंग्रेजी भाषा जानते हैं सम्भव है, यह न समझ सकें हों कि स्थिति कितनी गम्भीर है किन्तु इसका असर उस लोक-समुदायपर घातक होगा जिसका बहुत बड़ा भाग निरक्षर है और जो केवल भारतीय देशी भाषाएँ जानता है। बेशक उन लोगोंके प्रति उपनिवेशियोंका द्वेष तीव्र है परन्तु, श्री गांधीने कहा मेरा इरादा उस द्वेषको प्रेमसे जीतनेका है।

वक्ताने श्रोताओंसे अनुरोध किया कि वे उनके इस वक्तव्यको केवल औपचारिक न समझें। दक्षिण आफ्रिकी भारतीय इस सिद्धान्तपर विश्वास करते हैं और इसपर चलनेका प्रयत्न करते हैं। जिसका युद्ध दूसरोंके लिए अवश्य ही विनाशक सिद्ध हुआ होगा किन्तु भारतीयोंके लिए वह वरदान बनकर आया क्योंकि उसमें उन्हें अपनी क्षमता दिखानेका अवसर मिला। लड़ाईसे पहले उपनिवेशी उन्हें ताना मारा करते थे कि जब खतरेका वक्त आयेगा भारतीय भेड़ोंकी भाँति दुम दबा कर भाग जायेंगे और वे ही लोग हमारे समान अधिकारोंकी माँग करते हैं। किन्तु युद्धने दिखा दिया कि भारतीय दुम दबाकर भागे नहीं। उन्होंने घायलोंमें अपने कामोंका

1. गांधीजीने जनवरी १९ को कलकत्तामें हुई एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया था, यह उसी भाषणका पत्रोंमें प्रकाशित संक्षिप्त विवरण है।

घर गमाया और वे अन्योंके साथ बराबरीकी जिम्मेदारी उठानेके लिए तैयार हो गये। जब लड़ाई शुरू हुई, तब अपनी इस रायका खयाल किये बिना ही कि युद्ध उचित है या अनुचित (उनका खयाल था कि उसके लिए सम्राट् और केवल सम्राट् ही उत्तरदायी है) उन्होंने सरकारको अपनी सेवाएँ मुफ्त देना स्वीकार किया और इसी विचारसे उन्होंने सरकारको एक प्रार्थनापत्र दिया। किन्तु उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की गई। परन्तु इसके तुरन्त बाद ही कर्नल गालवेने जिसे कोलेंजोकी लड़ाईका कुछ पूर्वाभास मिल गया था एक प्रमुख भारतीय[1] को एक आहत-सहायक दल संगठित करनेके लिए लिखा और वह दल बनाया गया जिसमें १९ भारतीय नायकोंके रूपमें और १२   भारतीय आहत-वाहकोंके रूपमें शामिल हुए। भारतीयोंने देशकी कैसी सेवा की यह वे सभी जानते हैं और उसकी प्रशंसा उन उग्रपंथी उपनिवेशियोंको भी करनी पड़ी जिन्होंने उस समय पहली बार भारतीयोंमें अच्छे संस्कारोंकी झाँकी देखी।

श्री गांधीने आगे कहा कि उपनिवेशियोंमें भारतीयोंके विरुद्ध जो घृणा-भाव उत्पन्न हुआ उसके लिए एक अर्थमें स्वयं भारतीय ही दोषी हैं। यदि भारतीय प्रवासियोंके पीछे कुछ अधिक अच्छे वर्गके भारतीय भी गये होते जो जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें उपनिवेशियोंकी बराबरी कर सकते तो इतना मनोमालिन्य उत्पन्न न हुआ होता। किन्तु अब भावनाएँ सुधर रही हैं। वे यहाँतक सुधर गई हैं कि भारतके पिछले अकालमें सहायता देनेके लिए कुछ भारतीयोंने एक राष्ट्रीय अकाल-कोष खोलकर जो ५   पौंड इकट्ठे किये थे उनमें से ११   पौंड उपनिवेशियोंने दिये थे।

वक्ताने अपना कथन समाप्त करते हुए कहा कि इस सभामें मेरा उद्देश्य केवल इतना था कि दोनों समुदायोंकी अच्छाइयोंको प्रकाशमें लाया जाये। वैसे कड़वाहट भी है, किन्तु अच्छाइयोंका खयाल करना ज्यादा अच्छा है। भारतीय आहत-सहायक दल उसी भावनासे संगठित किया गया था। यदि भारतीय लोग ब्रिटिश प्रजाके अधिकार माँगते हैं तो उन्हें उस स्थितिके दायित्वोंको भी स्वीकार करना चाहिए। जिस आहत-सहायक दलमें भारतीय मजदूरोंने मजदूरी लिये बिना काम किया था उसके कामका उल्लेख जनरल बुलरके खरीतोंमें विशेष रूपसे किया गया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन मिरर ? -१-१९ २

अमृत बाजार पत्रिका २१-१-१ २

१. यह गांधीजी स्वयं थे। देखिए "[illegible]" [illegible] ११ ।

१६७. पत्र : दलपतराम भवानजी शुक्लको

[कलकत्ता]
जनवरी २५, १९०२

प्रिय शुक्ल

मैं अगले मंगलको रंगून रवाना हो रहा हूँ।

मैं एक तरहसे सफल हुआ हूँ। बंगाल व्यापार-संघ (चेम्बर ऑफ कॉमर्स) के अध्यक्षसे मिला था। उन्होंने इस मामलेमें खूब दिलचस्पी ली और वाइसरायसे भेंटकी प्रार्थना की। वाइसरायने शिष्टमण्डलसे मिलनेके बजाय अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण उत्तर[2] दिया है। अध्यक्षने अब भी जरूरी हो तो एक स्मरणपत्र भेजनेका वचन भी दिया है।

मैंने भाषण भी दिये हैं।[1] नेताओंने निश्चय ही इस प्रश्नमें दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया है।

मेरे घर जानेके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। कृपया कभी-कभी वहाँ जाते रहें। ऐसा लगता है कि सभी लड़कोंको बारी-बारीसे बुखार आ रहा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३९२८) से।

१६८. कलकत्तेमें भाषण[3]

[कलकत्ता
जनवरी २७, १९०२]

सभापतिजी और सज्जनो,

गत रविवारको समाप्त हुए सप्ताहमें मुझे अपने दक्षिण आफ्रिकाके अनुभव आपको सुनानेका सम्मान प्राप्त हुआ था। आपको याद होगा कि अपने भाषणमें मैंने बताया था कि वहाँ हमारे देश-भाइयोंने अपनेपर लगी कानूनी बन्दिशोंके सम्बन्धमें जिस नीतिसे काम लिया है, उसका सार दो नीति-वचनोंमें बताया जा सकता है। वे वचन हैं चाहे कितनी भी कीमत चुकानी पड़े सत्यपर दृढ़ रहना और द्वेषको प्रेमसे जीतना। यह हमारा आदर्श है जिसे

१ दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका प्रश्न।

२ उत्तर यह था कि वाइसराय व भारत-सरकारके विचार कई बार ब्रिटिश सरकारके सामने पेश किये जा चुके हैं और उपनिवेश-मन्त्रीके द्वारा ही कोशिश करना उचित है। निर्णय आखिर उन्हें ही करना है और उनकी सहानुभूतिका आश्वासन मिल चुका है (एस० एन० ३९३१)।

३ यह भाषण उन्होंने २७ जनवरीको एक सार्वजनिक सभामें दिया था।

४ [illegible] कलकत्ताके इस दूसरे भाषणमें मुख्य रूपसे बोअर-युद्धमें भारतीय आहत-सहायक दल द्वारा किये गये कार्योंपर प्रकाश डाला गया है।

हम प्राप्त करना चाहते हैं। उस दिन आपसे मैंने याचना की थी और आज फिर कर रहा हूँ कि आप विश्वास रखें हमारे लिए ये सिर्फ़ तकियाकलाम नहीं हैं बल्कि इन तमाम पिछले वर्षोंमें हमने इन आदर्शोंके अनुसार चलनेका प्रयत्न किया है। वर्तमान युद्धमें स्थानिक भारतीयोंका योगदान शायद इस कार्यतत्परताका सबसे अच्छा उदाहरण है।

आप जानते ही हैं जब सन् १८९९ में बोअरोंने अन्तिम चुनौती दी उस समय ब्रिटिश सरकार तैयार नहीं थी। ब्रिटिश सरकारका जवाब मिलते ही अपनी पहलेसे निश्चित योजनाके अनुसार बोअर नेटालकी सीमाको लाँघकर अन्दर घुस आये। सर जॉर्ज पेन सिमन्सने जानको झोंककर दुश्मनकी फौजोंको *तालाना टेकड़ीके पास कुछ समयके लिए रोका।* और सर जॉर्ज व्हाइटने अपने १ वीरोंके साथ लेडीस्मिथमें अपने आपको घिर जाने दिया। ये घटनाएँ इस तरह अनपेक्षित और आश्चर्यजनक रीतिसे और एकके बाद एक ऐसी तेजीसे घटीं कि लोगोंको मुड़कर देखने और विचार करनेका समय नहीं मिला। मेफ़्रिकिंग और किम्बरले पर एक साथ ही घेरा पड़ गया। *आधा नेटाल बोअरोंके हाथोंमें था।* और हम अक्सर सुनते थे कि बोअर मैरित्सबर्ग लेकर डर्बनपर कब्जा करनेवाले हैं। परन्तु लोगोंको शायद आश्चर्य होगा कि सर जॉर्ज और उनकी फौजने अपने आपको घिरवाकर नेटालको बचा लिया और इस तरह बोअर-सेनापति और उसकी सेनाकी उत्तम टुकड़ीको वहीं उलझा रखा। यह थी उस उपनिवेशको *ब्रिटिश भारतकी सहायता।*

नेटालकी जनताने इन तमाम घटनाओंका जिस शान्ति और दृढ़तासे मुकाबला किया उसकी जितनी तारीफ की जाये थोड़ी है। और इससे ब्रिटिश शक्तिका रहस्य प्रकट होता है। कोई हलचल नहीं थी। व्यापार-व्यवसाय इस तरह चल रहा था मानो कुछ हुआ ही नहीं। नेटालकी सरकार जरा भी *विचलित नहीं हुई थी।* यद्यपि खजाना लगभग खाली था तथापि नौकरोंको बराबर तनख्वाहें दी जा रही थीं। अंग्रेजी जीवनके साधारण शिष्टाचारोंका पालन किया जा रहा था। खाकी वर्दीवाले पुरुषोंकी इतनी बड़ी उपस्थिति और बन्दरगाहपर असाधारण हलचल न होती तो आपको यह खयाल भी नहीं हो सकता था कि डर्बनके हाथसे निकल जानेका खतरा सरपर है।

स्वयंसेवकोंकी माँग हुई और पुकारके २४ घण्टेके अन्दर डर्बन अपने सर्वोत्तम पुरुषोंसे खाली हो गया। सवाल यह था कि ऐसे संकटकालमें उपनिवेशमें रहनेवाले ५ भारतीय क्या रुख धारण करें? इसका उत्तर निश्चित उत्साहके रूपमें सामने आया। ब्रिटिश प्रजाजनोंके नाते हम विशेषाधिकार माँग रहे थे। अब उस हैसियतकी जिम्मेदारियाँ अदा करनेका समय आ गया। जिस नीतिका शुरूमें जिक्र किया जा चुका है उसपर अगर अमल करना है तो हमें स्थानीय मतभेद भुलाने ही होंगे। लड़ाई सही है या गलत इस प्रश्नसे हमें कुछ मतलब नहीं था। इसका निर्णय करना बादशाहका काम था। इसी उद्देश्यके लिए निमन्त्रित एक बड़ी सभामें आपके देशभाइयोंने इस तरहके विचार प्रकट किये। उपनिवेशमें भारतीयोंके बारेमें अक्सर कहा जाता था कि यदि युद्ध होगा तो ये भारतीय गीदड़ोंकी तरह भाग जायेंगे। इस आरोपके जवाब देनेका अवसर आ पहुँचा। उस सभामें निश्चय किया गया कि तमाम उपस्थित लोग अपनी सेवाएँ सरकारको अर्पित कर दें और उससे कह दें कि लड़ाईमें जो भी काम उनकी योग्यतानुसार उनको दिया जायेगा उसे वे बगैर किसी वेतनके करेंगे। सरकारने इन स्वयंसेवकोंको धन्यवाद देते हुए अपने जवाबमें कहा कि अभी उनकी

१. सर जॉर्ज व्हाइट पहले भारतीय सेनाके प्रधान सेनापति थे।

सेवाकी जरूरत नहीं है। इस बीच इंग्लैंडसे यहाँ एक ऐसे सज्जन पधारे जिन्होंने चर्च ऑफ इंग्लैंडके मातहत भारतमें बीस वर्षतक ईसाई मिशनके डॉक्टरकी हैसियतसे काम किया था। उनका नाम है कैनन बूथ। आजकल वे सेंट जॉनके डीन हैं। उन्हें यह देखकर आनन्द हुआ कि भारतीय लड़ाईमें साम्राज्यकी सेवा करनेके लिए तैयार हैं। उन्होंने उन्हें शुश्रूषा-दलके नायकोंके रूपमें प्रशिक्षण देनेका प्रस्ताव किया। और भारतीय स्वयंसेवक डॉक्टर बूथसे कई हफ्तोंतक घायलोंकी प्राथमिक परिचर्याका पाठ पढ़ते रहे। इस बीच नेटाल पुलिसकी फौजके मुख्य चिकित्साधिकारी कर्नल गाल्वेको यह खयाल हुआ कि कोलेंजोमें एक भयंकर लड़ाई होने-वाली है। अतः उसके घायलोंकी सेवाके लिए तैयार रहनेके हेतु उन्होंने एक यूरोपीय शुश्रूषा-दल खड़ा करनेके लिए सूचनाएँ जारी कीं। इसपर हमने सरकारको तार द्वारा सूचित किया कि किस प्रकार हम स्वयं अपने-आपको इस कामके योग्य बना रहे हैं। सरकारसे हमको सूचना मिली कि हमें भारतीय आहत-सहायक दल बनानेमें प्रवासी भारतीयोंके संरक्षककी मदद करनी चाहिए। चार पाँच दिनके अन्दर भिन्न भिन्न जायदादोंसे कोई एक हजार भारतीय एकत्र कर लिये गये। वास्तवमें वे इस तरह अपनी सेवाएँ देनेके लिए बँधे नहीं थे और न उनपर किसी प्रकार जरा भी दबाव ही डाला गया था। बिलकुल खुशी-खुशी वे अपनी सेवाएँ देनेको तैयार हो गये थे। यूरोपीय स्वयंसेवकोंके साथ उन्हें भी जबतक वे कामपर रहते थे भोजनके अलावा हफ्तेमें एक पौंड दिया जाता था। परन्तु मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि इन डोली (स्ट्रेचर) उठानेवालोंमें कितने ही भारतीय व्यापारी थे और वे चार पौंड मासिकसे कहीं अधिक पैदा करते थे। इससे उनकी सेवाओंके मूल्यकी आप ठीक-ठीक कल्पना कर सकेंगे। परन्तु जैसा कि एक अधिकारीने कहा था यह युद्ध अनेक बातोंमें आश्चर्योंका युद्ध था। यूरोपीय स्वयंसेवकोंमें भी बड़ेसे-बड़े प्रतिष्ठित पुरुष थे जो घायलोंको ढोनेका यह काम कर रहे थे। घायलोंकी सेवा करना एक विशेष सम्मानका काम समझा जाता था। और यह सही भी है।

परन्तु प्रशिक्षण प्राप्त नायक कोई पुरस्कार नहीं लेते थे। सुयोग्य डॉ॰ बूथ भी हमारे साथ बगैर किसी वेतनके नायकका काम कर रहे थे। कर्नल गाल्वेने बादमें उनको इन दलोंका चिकित्साधिकारी (मेडिकल आफिसर) नियुक्त किया। नायकोंमें दो भारतीय बैरिस्टर[1] आढ़तियोंकी लन्दन-स्थित एक प्रसिद्ध दूकानसे सम्बन्धित एक भद्र पुरुष दूकानदार और मुंशी थे।

इस प्रकार जो दल बना वह कोलेंजोकी लड़ाईके तुरन्त बाद अपने काममें जुट गया। भूखे प्यासे और थके हम चोवूलिवेलामें चिवेलेकी छावनीमें पहुँचे। दुश्मनकी छिपी हुई फौजके साथ अभी-अभी एक भयंकर लड़ाई समाप्त हुई थी। कर्नल गाल्वे हमें देखते ही उनके अधीक्षक (सुपरिंटेंडेंट) के पास आये और उन्होंने पूछा कि क्या हम अभी इसी क्षण घायलोंको स्थायी अस्पतालमें पहुँचा सकेंगे? अधीक्षकने अपने नायकोंपर प्रश्नात्मक नजर डाली और नायकोंने फौरन जवाब दिया कि वे तैयार हैं। रातके १२ बजे तक कोई बीस घायल अफसर तथा सिपाही अस्पताल पहुँचाये गये। काम इतनी मुस्तैदीसे किया गया कि अब वहाँसे उठानेके लिए कोई घायल नहीं बचा था। मध्य रात्रिमें १२ बजे थे जब भारतीय स्वयंसेवकोंने अपने मुँहमें अन्न डाला। इनमें कई ऐसे लोग थे जिनको इस तरहका परिश्रम करने और भूखे रहनेकी कभी आदत नहीं थी।

फासला पाँच मीलका था। यूरोपीय शुश्रूषा-दल जो सेनासे सम्बन्धित था लड़ाईके मैदानसे घायलोंको मोर्चेके अस्पतालतक लाता था। वहाँ उनके घावोंकी मरहम-पट्टी होती

[1] गांधीजी और उनके साथी खान।

थी। हम उनको स्थायी अस्पतालोंमें पहुँचाते थे। प्रत्येक डोली (स्ट्रेचर) के लिए छ उठानेवाले और ऐसे तीन दलोंपर एक नायक होता था जिसका काम उठानेवालोंका मार्गदर्शन करना तथा घायलोंका दवा-पानी करना था।

दूसरे दिन सुबह नाश्ता करनेसे पहले ही फिर काममें लग जानेकी आज्ञा मिली। काम दिनके ११ बजेतक चलता रहा। घायलोंको हटानेका काम मुश्किलसे पूरा हो पाया था कि हमें डेरा उखाड़ने और कूच करनेकी आज्ञा हो गई। कर्नल गालवेने शुश्रूषा-दलको उसकी सेवाओंके लिए व्यक्तिगत रूपसे धन्यवाद दिया और उसका विघटन कर विश्वास प्रकट किया कि अगर फिर कहीं काम पड़ा तो उन्हें ऐसा ही सहयोग मिलेगा। इस बीच जनरल बुलर लेडीस्मिथ पहुँचनेके लिए स्पियोन कॉपके बीचसे होकर अपनी फौजोंको टुगेलाके उस पार लिये जा रहे थे। उस दिनके विश्रामके बाद दलोंके मुख्य चिकित्साधिकारी (पी एम ओ) ने शुश्रूषा-दलोंको फिर संगठित करनेकी आज्ञा भेजी। और तीन दिनके अन्दर फिर एक हजारसे ऊपर आदमी एकत्र हो गये।

स्पियोन कॉप फ्रीअरसे कोई २८ मील है। फ्रीअर रेलवेका मुख्य केन्द्र और स्टेशन था। रेल द्वारा घायलोंको साधारण अस्पतालोंमें पहुँचानेके लिए पहले उन्हें यहीं लाना पड़ता था। स्पियोन कॉप अर्थात् स्पियोनकी टेकरी एक जंगलकी आड़में है। यहीं मोर्चेका अस्पताल बनानेके लिए तम्बू खड़े किये गये थे। यहाँ मरहमपट्टी हो जानेके बाद घायलोंको कोई तीन मीलके फासलेपर स्पियरमैनकी छावनीमें ले जाया जाता था। स्पियरमैनकी वाड़ी (फार्म) और मोर्चा-अस्पतालके बीच एक तंग-सी नदी पड़ती थी। इस नदीपर पीपोंका एक अस्थायी पुल बनाया गया था जो बोअर-तोपोंकी मारके अन्दर पड़ता था। और स्पियरमैनकी छावनी तथा फ्रीअरके बीचका रास्ता पहाड़ी और कुछ अधिक ऊबड़खाबड़ था।

तोपोंकी मारके अन्दर न तो यूरोपीय दलोंको और न भारतीय दलोंको काम करना था। परन्तु यूरोपीय दलोंको कोलेंजो और स्पियोन कॉपमें तोपोंकी मारके अन्दर काम करना पड़ा और भारतीय दलोंको केवल स्पियोन कॉप और वालक्रांजमें। कर्नल गालवेके सचिव मेजर बैप्टीका बड़े-बड़े खतरोंका सामना करनेके कारण बड़ा आदर था। वे विक्टोरिया क्रॉससे विभूषित थे। उन्होंने हमें सम्बोधन करते हुए कहा

> सज्जनो आपको तोपोंकी मारके बाहर काम करनेके लिए नियुक्त किया गया है। मोर्चेके अस्पतालमें बहुतसे घायल पड़े हैं जिनको वहाँसे हटानेकी जरूरत है। इसकी आशंका है यद्यपि यह बहुत दूर है कि उस पीपोंवाले पुलपर बोअर एक-दो गोले डाल दें। इस छोटे-से खतरेके बावजूद भी अगर आप उस पुलको लाँघ कर जानेको तैयार हों तो बड़ी खुशीसे मैं आपका नेतृत्व करूँगा। परन्तु चाहें तो आप इनकार करनेके लिए स्वतंत्र हैं।

ये शब्द इतने उत्साहसे और इतनी कृपालुता तथा सुजनतासे कहे गये थे कि मैंने जितना मुझसे बन पड़ा ठीक उसी तरह आपको सुनानेकी कोशिश की है। हम और मेजरका अनुगमन करना मानना और आश्रितोंने एक स्वरसे स्वीकार कर लिया। स्पियोन कॉपमें ब्रिटिश फौजोंकी आकस्मिक हारके कारण हमको वहाँ लगातार तीन दिनों काम करना पड़ा यद्यपि दलको वहाँ भी इससे ऊपर कामपर रहना पड़ा था। घायलोंके अनमोल बोझको लेकर हमें तीन-चार बार पच्चीस मीलका फासला प्रतिदिन तय करना पड़ा था। और अगर आप मुझे इजाजत दें तो बिना किसी आत्मप्रशंसाके मैं कहूँगा कि इन दलका काम सारी उम्मीदोंके बाहर इतना

अच्छा साबित हुआ कि जो इसपर राय देनेके अधिकारी हैं और उन्होंने स्वीकार किया है कि घायलोंको उठाकर पच्चीस-पच्चीस मील चलना एक रिकार्ड कायम करनेकी बात है। कर्नल गालवेने हमें दो दिनमें यह फासला तय करनेकी छूट दी थी।

जनरल बुलरने अपने खरीतोंमें इस दलके कामोंका सम्मानपूर्वक उल्लेख किया है।

यह है नेटालके भारतीय आहत-सहायक दलकी सेवाओंका संक्षेपमें लेखा।

जो भारतीय व्यापारी अपने व्यापारको छोड़कर दलमें शरीक नहीं हो सकते थे उन्होंने जरूरतमन्द स्वयंसेवक-नायकोंके परिवारोंके निर्वाहके लिए धन इकट्ठा किया और उनके लिए वर्दियाँ मुहैया कर दीं।

डर्बन देशभक्त महिला संघ कोष (डर्बन विमन्स पैट्रियॉटिक लीग फंड) को भी एक अच्छी रकम लड़ाईपर गये स्वयंसेवकोंके लिए भेजी गई थी। भारतीय महिलाओंने तकियोंके गिलाफ बास्कट वगैरा बनाकर लड़ाईमें अपना हिस्सा अदा किया।

घायलोंको देनेके लिए व्यापारियोंने हमें सिगरेटें भी भेजीं। यह सब धन ऐसे समय एकत्र किया गया था जब कि नेटालका भारतीय समाज सामान्य शरणार्थी सहायता कोषको छुए बिना ट्रान्सवाल तथा शत्रु द्वारा अधिकृत नेटालके भागोंसे आये हुए हजारों शरणार्थी भारतीयोंका उदर-पोषण कर रहा था।

इस मौकेपर अगर मैं आपको यह न बताऊँ कि जब ब्रिटिश सैनिक कामपर होता है अथवा अस्थायी पड़ावकी स्थितिमें होता है तब उसका जीवन कैसा होता है तो मैं अपने प्रति सच्चा नहीं हूँगा। पिछले रविवारको समाप्त होनेवाले सप्ताहमें मैंने आपको ट्रैपिस्ट मठकी प्रशान्त स्तब्धताका वर्णन सुनाया था। इसमें से कुछको सुनकर आश्चर्य होगा परन्तु उन विशाल छावनियोंके अन्दर भी ऐसी ही स्तब्धता विद्यमान थी यद्यपि वहाँ अधिकसे-अधिक हलचल थी। परन्तु उस हिलको हिला देनेवाले समयमें कोई एक मिनट भी बेकार नहीं खो रहा था। सर्वत्र सम्पूर्ण व्यवस्था और सम्पूर्ण स्तब्धता थी। उस समय अंग्रेज सिपाही बहुत प्यारा लग रहा था। वह हमसे और हमारे आदमियोंसे बिलकुल खुले दिलसे मिलता-जुलता था। जब कभी उसे कोई अच्छी खोराक आदिकी चीज मिलती हमें उसका हिस्सेदार बनाता था। एक बार हम चिवेलीकी छावनीमें ऐसा किस्सा हो गया जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता। उस दिन बहुत गरमी पड़ रही थी। पानीकी बेहद कमी थी। केवल एक कुआँ था। एक अधिकारी प्यासोंको टीनके डिब्बोंमें थोड़ा-थोड़ा पानी बाँट रहा था। उस समय कुछ डोली (स्ट्रेचर) वाले अपना काम करके लौटे। अंग्रेज सिपाही जो पानी पी रहे थे हमारे इन आदमियोंको खुशीके साथ अपने हिस्सेमें से पानी देने लगे। और मैं कैसे बताऊँ वर्ण और धर्मकी अपेक्षा न करनेवाला यह भाईचारा! जान टॉम या चार्ली वगैरेने सबके बीच एकता पैदा कर दी चाहे इसके कारण करनेवालेकी चमड़ी गोरी रही हो या नहीं रही।

एक हिन्दूकी हैसियतसे मैं लड़ाईमें विश्वास नहीं करता। परन्तु अगर कोई बात मुझे उसका कुछ समर्थक बना सकती है तो वह है यह कीमती अनुभव जो हमने लड़ाईके साथ पर प्राप्त किया। निश्चय ही जो हजारों आदमी लड़ाईके मैदानपर रह उसका कारण सुनकी ख्याल नहीं थी। यदि मैं आपको भारतीयोंकी कर्तव्यनिष्ठ ठेठ जोशके बिना एक अत्यन्त पवित्र पुरुषका नाम ले लूँ तो मैं कहना चाहता हूँ कि उसे स्वर्गके समान विशुद्ध कर्मचारी भावना सहजभावमें ले दी थी। और इसने किसने उनकी पवित्री और उज्ज्वल गर्वोंका सिरा पर अन्तरतम शत्रु भीचामें नहीं बदल दिया है?

लड़ाईके सिलसिलेमें अपने देशभाइयोंके कामकी मैं सराहना कर रहा था। अब मैं दूसरी ओरकी बातें बतानेके लिए आपको थोड़ा रोकना चाहता हूँ। मुझे लगता है कि असली काम अब शुरू हो गया है। सिपाहियों और स्वयंसेवक सिपाहियोंको जिन कठिनाइयोंसे गुजरना पड़ा है और जो अभी खतम नहीं हुई हैं उनकी तुलनामें हमारा यह काम आखिर बहुत छोटा था। उसकी प्रशंसा हो रही है, क्योंकि हमसे ऐसी कभी आशा नहीं की जा सकती थी। किन्तु हमने ये जो कुछ अपेक्षाएँ पैदा कर दी हैं उनको क्या हम भविष्यमें पूरा कर सकेंगे? बस यही कारण है, जिससे मुझे लगता है, हममें आत्म-प्रशंसाका भाव पैदा होनेके बजाय नम्रताका भाव पैदा होना चाहिए। इसलिए जहाँ शायद मेरा कर्तव्य था कि अपने देशभाइयोंने जो थोड़ा-सा काम किया उसकी तरफ आपका ध्यान दिलाऊँ वहाँ मेरा यह भी कर्तव्य है कि अब हमें आगे क्या-क्या करना है इसकी भी सबको याद दिलाऊँ। परम माननीय श्री हेनरी एस्कम्ब और कुछ दूसरे हमारे कामके बारेमें बहुत उदारतापूर्वक सोचते रहे हैं। अतः अगर अब मैं उनके शब्द आपको सुनाऊँ तो मुझे विश्वास है आप मुझे अवश्य क्षमा करेंगे। जब हम मोर्चेपर जा रहे थे तब श्री एस्कम्बने हमारी प्रार्थनापर हमें आशीर्वाद दिया था। उन्होंने कहा था

> आप लोग लड़ाईके मैदानपर जा रहे हैं। इस अवसरपर विदाईके संदेशके रूपमें दो शब्द कहनेके लिए आपने जो मुझे बुलाया इसे मैं अपना विशेष सम्मान समझता हूँ। आप अपने साथ न केवल हम उपस्थित लोगोंकी बल्कि नेटालके समस्त निवासियोंकी और सम्राज्ञीके महान् साम्राज्यकी शुभ कामनाएँ लिये जा रहे हैं। इस महत्त्वपूर्ण युद्धकी अनेक घटनाओंमें यह घटना किसी प्रकार भी कम दिलचस्प नहीं है। यह तथ्य प्रकट करती है कि साम्राज्यकी एकता और दृढ़ताके लिए जो-कुछ भी किया जा सकता है वह स्वेच्छासे करनेके लिए नेटालके भारतीय प्रजाजन दृढ़-निश्चय हैं। और हम स्वीकार करते हैं कि नेटालमें जो अधिकारोंकी माँग कर रहे हैं वे अपने देशके प्रति कर्तव्य भी अदा कर रहे हैं। युद्धमें आपका स्थान उतना ही सम्मानपूर्ण होगा जितना कि लड़नेवालोंका। क्योंकि अगर युद्धमें घायलोंकी देखभाल करनेके लिए कोई नहीं होगा तो युद्ध अबकी अपेक्षा कहीं अधिक भयानक बन जायेगा। यह बात कभी भुलाई नहीं जा सकेगी कि आप नेटालके भारतीयोंने — जिनके साथ न्यूनाधिक अन्याय हुआ है — अपने कष्टोंको भुला दिया और आज अपनेको साम्राज्यका अंग मानकर उसकी जिम्मेदारियोंको भी उठानेके लिए तैयार हो गये। आज क्या हो रहा है, इसका जिनको ज्ञान है उनकी हार्दिक शुभ कामनाएँ आपके साथ हैं। और आपके इस कामके समाचार जहाँ-जहाँ भी पहुँचेंगे उनसे समस्त साम्राज्यमें सम्राज्ञीके भिन्न-भिन्न वर्गोंके प्रजाजनोंको एक दूसरेके नजदीक लानेमें मदद मिलेगी।

और नेटाल ऐडवर्टाइजरने यह लिखा था

> भारतीय आबादीने जो प्रशंसनीय भावना प्रकट की है इसके लिए उसे बधाई दी जानी चाहिए। उपनिवेशमें भारतीयोंके प्रवासके बारेमें और आम तौरपर भारतीयोंके प्रति जो रुख धारण कर रखा है उसे देखते हुए तो और भी अधिक प्रशंसाकी बात है। भारतीय समाज बड़ी आसानीसे उदासीनताका रुख धारण करके यह कह सकता था कि हम दुश्मनकी मदद नहीं करेंगे परन्तु हम आपकी भी मदद नहीं करेंगे क्योंकि आप

शिक्षाके निमित्त आपने महान् कार्य किया है। उसके प्रशंसक इस छोटे-से जहाजमें भी मौजूद हैं।

मैं कोचवानको इनाम देना भूल गया। क्या आप कृपया श्री माटेसे कह देंगे कि वे उसको एक रुपया और साईसको एक अठन्नी दे दें?

कृपया डा० प्रफुल्लचन्द्र रायको मेरी याद दिलायें।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२१) से।

१७० पत्र : गो० कृ० गोखलेको

७ मुगल स्ट्रीट,
रंगून
फरवरी ८, १९०२

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

चूँकि सोमवारसे पहले कलकत्तेको डाक नहीं जानेवाली थी इसलिए मैंने जहाजमें लिखा पत्र डाकमें डालना मुल्तवी कर दिया था। उसे मैं इस पत्रके साथ ही बन्द कर रहा हूँ।[1]

सौभाग्यसे प्रोफेसर काथवटे[2] मुझे मिल ही गये। वे कल सुबह मद्रासको रवाना हुए। प्रोफेसर साहबको रंगूनकी आबोहवा पसन्द नहीं आई। वह उनके लिए बहुत कष्टप्रद थी। उनको स्फूर्तिदायक जलवायुकी आवश्यकता है। रंगूनका जलवायु ऐसा प्रतीत नहीं होता।

सफाईकी दृष्टिसे यह बहुत अच्छी जगह है। सड़कें चौड़ी और सु-आयोजित हैं। नालियोंकी व्यवस्था भी काफी अच्छी दिखाई देती है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२४) से।

१. [illegible]
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. [illegible]

१७१ पत्र पुरुषोत्तम माईचन्द देसाईको

[राजकोट
फरवरी २८, १९ १ के बाद]

परशोत्तम माईचन्द देसाई
टोंगाट
बर्मा द ला

रा रा परशोत्तम माईचन्द देसाई,

बड़ी दिलगीरीकी बात है कि मुझे भरोसा देकर आप अपना वचन पाल नहीं सके। आपसे मैंने कहा था कि इस पैसे पर मैं कितना निर्भर करूँगा। और फिर लिखता हूँ कि मुझे पूरी-पूरी जरूरत है और यदि भेजेंगे तो मेहरबानी मानूँगा। तीन महीनोंकी किस्तें चढ़ गई हैं। ये सारीकी-सारी भेजिये और फिर बाकी नियमसे हर महीने आयें तो बहुत मदद हो सकेगी। मैं सोचता था उससे देशकी स्थिति खराब है। विशेष लिखनेकी जरूरत नहीं होगी। आपका व्यापार कैसा चल रहा है सो लिखिए। फकत।

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें दफ्तरी गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन १९०७) से।

१७२ पत्र देवकरन मूलजीको

[राजकोट
फरवरी १८, १९ २ के बाद]

देवकरन मूलजी
टंकारा [काठियावाड़]
रा. रा देवकरन मूलजी

आपका २१ जनवरीका पत्र यहाँ आया। पर मेरे उत्तर भारतमें होनेसे आजतक बिना जवाबके पड़ा है। मुझे लगता है कि आपको इस समय खुद नेटाल जानेमें बड़ी मुश्किल होगी। लड़ाईकी वजहसे जिस आदमीके पास नकद रु १५ हों वही वहाँ जा सकता है। ऐसी स्थिति आपकी न हो तो तबतक वहाँ नहीं जा सकते। समझ लीजिए, जबतक लड़ाई है तबतक निकलना सम्भव नहीं होगा। किन्तु अगर आप बाहर-देश जाना ही चाहते हों तो मैं अभी रंगून होकर आया हूँ यदि वहाँ जायें तो मेरे अनुभवसे ऐसा लगता है कि पेट भरने योग्य कमा सकेंगे। यह देश आबाद है और उपजाऊ है इसलिए अगर आदमी तन्दुरुस्त हो और शरीर-श्रम करनेमें शरमाये नहीं आलस्य न करे और सचाईसे चले तो ऐसे देशमें रोटी कमाना मुश्किल हो ही नहीं सकता। रंगूनमें रहनेकी एक भारतीय गृहस्थने बहुत अच्छी सुविधा कर रखी है। इसलिए आपको इस तरहकी कोई अड़चन नहीं होगी। मद्रास अथवा कलकत्तेके रास्ते जा सकते हैं। जानेका खर्च १ से ४ रु तक पड़ता है।

दफ्तरी गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन १९१८) से।

१ यह वाक्य पत्रमें स्पष्ट नहीं है।

रहा। दूसरे मुसाफिरोंकी और मेरी बातचीत खुलकर हुई और कभी-कभी हम गहरे दोस्त भी बने। गरीब मुसाफिरोंके लिए बनारस शायद सबसे बुरा स्टेशन है। रिश्वतका दौरदौरा है। जबतक आप पुलिस सिपाहियोंको घूस देनेके लिए तैयार न हों तबतक अपना टिकट पाना बहुत कठिन है। वे दूसरोंके साथ-साथ मेरे पास भी कई बार आये और बोले कि अगर हमें इनाम (या रिश्वत?) दें तो हम आपके टिकट खरीद देंगे। कई लोगोंने इस प्रस्तावका फायदा उठाया। इनमें से जिन्होंने यह मंजूर नहीं किया उन्हें खिड़की खुलनेके बाद भी करीब-करीब एक घंटे तक राह देखनी पड़ी। तब कहीं टिकट मिले। यदि हम कानूनके इन संरक्षकोंकी एक-दो ठोकरोंका उपहार लिये बिना ही ऐसा कर पाये तो यह हमारा सौभाग्य ही समझिए। इसके विपरीत मुगलसरायमें टिकट-मास्टर बहुत सज्जन था। उसने कहा कि मैं राजा और रंकमें भेद नहीं करता।

हम किसी तरह डिब्बोंमें भर गये। हालाँकि डिब्बोंमें सूचनाएँ लगी थीं फिर भी संख्याके सम्बन्धमें कोई रोक-थाम नहीं थी। ऐसी स्थितिमें रातका सफर तीसरे दर्जेके गरीब मुसाफिरोंके लिए भी बहुत असुविधाजनक हो जाता है।

तीन जगहोंपर अलग-अलग प्लेगकी जाँच की गई। लेकिन मैं नहीं कह सकता कि जाँचमें कोई सख्ती बरती गई हो। मेरा अनुभव बहुत थोड़ा है किन्तु इन मुसाफिरोंकी भयंकर दशाकी जो तसवीर मैंने कल्पनासे खींची थी वह कुछ हल्की पड़ गई है। कोई सही नतीजा निकालनेके लिए पाँच दिनोंमें मुश्किलसे ही काफी मसाला जुट सकता है। फिर भी इस अनुभवसे मेरा हौसला बढ़ा और मजबूत हुआ है और पहला मौका आते ही मैं इसे पुन: प्राप्त करूँगा।

मैं बनारस आगरा जयपुर और पालनपुरमें उतरा। सेंट्रल हिन्दू कॉलेज कोई बुरी संस्था नहीं यद्यपि अखबारोंमें किये गये निरीक्षणके आधारपर विश्वासके साथ ऐसा कहना बड़ा कठिन है। संगमरमर-निर्मित सपना ताजमहल सचमुच देखने लायक है। जयपुर अद्भुत जगह है। कलकत्तेके अजायबघरसे अल्बर्ट अजायबघरकी इमारत बहुत ज्यादा अच्छी है और उसका कला-विभाग स्वत: ही अध्ययनकी चीज है। ऐसा मालूम होता है कि जयपुरी चित्रकला अपने बंगीय अधीक्षकके अधीन खूब फूल-फल रही है।

अब मेरे पत्रका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हिस्सा आता है। पालनपुरमें जानेका मेरा एक-मात्र उद्देश्य था राज्यके कारभारीसे भेंट करना। वे मेरे निजी मित्र हैं। मैं संयोगसे उनसे यह चर्चा कर बैठा कि शायद अगली अप्रैलमें रानडे स्मृति-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करनेमें मैं उनके साथ सम्मिलित हो जाऊँ। राज्यके कारभारी श्री पटवारी एक सच्चे आदमी हैं। वे कहते हैं कि कोष-संग्रहका काम अप्रैलमें शुरू करना भारी गलती होगी खासकर अगर हम गुजरातमें भी करना चाहते हैं। उनका खयाल है कि इससे हमें कमसे-कम १ रुपयेका घाटा होगा। सभी राज्य अकालके असरसे कम-ज्यादा कराह रहे हैं। उनकी यह पक्की राय है कि धन-संग्रह अगले दिसम्बर या जनवरी मासमें किया जाये। मैं उनके मन्तव्यको वह जिस लायक हो उसके लिए, आपके सम्मुख रखता हूँ।

काठियावाड़के कई हिस्सोंमें प्लेग जोरोंपर है।

मेहरबानी करके प्रोफेसर रायको मेरी याद दिलायें।

१ सर्व-अधिकारी।

२. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२।

कि सम्राटकने आपकी ओरसे ही अनुरोध किया था। मुझे लगता है कि विभिन्न उपनिवेशोंमें ब्रिटिश भारतीयोंके साथ व्यवहारके समस्त प्रश्नपर बहसके लिए ओर देनेसे लाभके बजाय हानि होनेकी ही ज्यादा सम्भावना है क्योंकि विभिन्न उपनिवेशोंमें स्थिति एक जैसी नहीं है। उदाहरणके लिए नेटालमें प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम विक्रेता-परवाना अधिनियम और इसी प्रकारके दूसरे अधिनियम जिनकी नकलें समय-समयपर ब्रिटिश समितिको भेजी गई हैं पहलेसे ही लागू हैं। नेटालके नमूनेका अनुकरण आस्ट्रेलिया और कैनडा दोनोंमें किया जा रहा है। इन स्थितियोंमें नेटालमें इनको रद करवाना या आस्ट्रेलिया और कैनडामें नेटालके अनुकरणके प्रयत्नको विफल करना अगर असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य होगा। इसकी साखी श्री चेम्बरलेनके उस भाषणमें मिलती है जो उन्होंने हीरक-जयन्तीके अवसरपर प्रधान मन्त्री सम्मेलनमें दिया था। उसके उद्धरणकी एक नकल[1] आपके पढ़नेके लिए भेजता हूँ। उन्होंने उपनिवेशोंको भारी रियायतें दी हैं परन्तु शायद ये भारी रियायतें पूरी रियायतोंसे कहीं ज्यादा खतरनाक हैं। क्योंकि उनकी अप्रत्यक्ष विधानकी मंजूरीसे ऐसी धाराओंकी सम्भावनाओंका मार्ग खुल गया है जिनका कभी सपनेमें भी खयाल न था यह आप मेरे वक्तव्यसे जान लेंगे। श्री चेम्बरलेनने अभी हालमें जो कुछ कहा है वह भी आशाजनक नहीं है। उससे औपनिवेशिक सरकारोंके भारत-विरोधी रुखको महज ताकत मिलेगी। इसलिए जहाँतक नेटालका सम्बन्ध है उसका इलाज उस उपनिवेशके निवासी भारतीयोंके हाथोंमें है कि वे *उपनिवेशकी सरकारको उचित व्यवहारके लिए राजी करें। यह न्यूनाधिक रूपमें पुराने कानूनोंके* प्रशासनका मामला है। वहाँ औपनिवेशिक सरकार नये प्रतिबन्ध-कानून बनानेका प्रयत्न करे वहाँ वे ब्रिटेनकी सरकारसे अपील करें, और उनके मित्रोंका काम है कि वे उनकी सहायता करें। औपनिवेशिक कार्यालयके उपाधार दबाव और ब्रिटेनके समाचारपत्रोंमें सहानुभूतिपूर्ण चर्चा — ये ही मुख्य प्रमाण हैं जिनसे अनुमान है कि नेटालके मन्त्री पसीजेंगे। मेरा खयाल है कि इंग्लैंड और भारतमें मित्रोंकी सहायतासे हम कुछ हदतक सफल हुए हैं। आस्ट्रेलिया और कैनडाका जहाँतक सम्बन्ध है, उपाय यह है कि वहाँ प्रस्तावित कानून जिसका मसविदा दुर्भाग्यसे मैं नहीं देख पाया हूँ हाथमें लिये जायें और उनकी तफसीलोंका विरोध किया जाये जिससे वे यथासम्भव नरम हो सकें। प्रमुख मुद्दोंपर श्री चेम्बरलेनसे कोई सहायता नहीं मिलेगी। यदि बहसके लिए जोर डाला गया तो वे ऐसी तकरीर करेंगे जिससे उपनिवेशियोंका भारत विरोधी रुख और कड़ा हो जायेगा।

दक्षिण आफ्रिकाके नये उपनिवेशोंमें हमारी स्थिति दूसरी जगहोंके मुकाबले बहुत ज्यादा मजबूत है और होनी भी चाहिए। इसमें औपनिवेशिक कार्यालयका हाथ भी ज्यादा खुला है। इसी भारतीय-विरोधी कानूनके खिलाफ, जो अब लागू किया जा रहा है श्री भूपरको भेजी गई पिछली आपत्तियोंकी शर्म ही श्री चेम्बरलेनको बिलकुल दूसरा रुख अपनानेके लिए बाध्य कर देगी। ट्रान्सवाल-कानूनपर हमारे प्रार्थनापत्रका उन्होंने जो उत्तर दिया उसका एक उद्धरण साथमें भेजता हूँ। तब उन्होंने मदद नहीं की थी। क्योंकि वे असमर्थ थे। अब वे पूरी तरह समर्थ हैं और मदद कर सकते हैं। उनके खिलाफ ऐसा निष्कर्ष निकालना जो सराहनीय न हो अनुचित प्रतीत हो सकता है। फिर भी हमें बहुत भय है कि अब उनका प्रेम पहले जैसा नहीं रहा इसलिए यदि उचित निगरानी न रखी गई तो दोनों नये उपनिवेशोंमें वे हमारी स्थितिपर सम्भवतः झुक जायेंगे।

१ देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३९९–८।
२. यह यहाँ नहीं दिया गया है।

हमारे मित्र इंग्लैंडमें जो कुछ कर सकते हैं उसके बारेमें मेरा खयाल है, वे फिलहाल अपनी सारी शक्तियाँ ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीकी शिकायतें दूर करवानेमें केन्द्रित करें। इस समय नेटालमें राहत नहीं मिल सकती। आस्ट्रेलिया और कैनडामें कोई भारतीय शिकायत भी जो हानि उठाये। वहाँ प्रश्न केवल सिद्धान्तका है। यह निस्सन्देह एक बड़ा प्रश्न है। ट्रान्सवालमें सिद्धान्तका प्रश्न तो है ही बहुत बड़ा भारतीय स्वार्थ निहित होनेके कारण वहाँ की शिकायतें साफ और सच्ची हैं। वहाँ राहत भी मिल सकती है। शर्त एक यही है कि श्री लिटलटन इधर-उधर कहीं कोई वचन न दे बैठे हों और लॉर्ड लैंसडाउनका तो कहना है कि ब्रिटिश भारतीयोंके साथ व्यवहार युद्धके कारणोंमें से एक था।

इस बारेमें कोई मतभेद नहीं है। पूर्व भारत संघ (ईस्ट इंडिया असोसिएशन) ने हमारी ठोस काम किया है और इसी प्रकार लंदन टाइम्स और सर मंचरजीने भी। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि औपनिवेशिक विरोधके विरुद्ध आपने जो जिहाद शुरू किया है उसमें आप इनके साथ मिलकर काम करेंगे।

अगर मैं सुझाव देनेका साहस करूँ तो पसन्द करूँगा कि हमारे मित्र उपनिवेशोंके प्रधान मन्त्रियोंसे जिनकी ताजपोशी-समारोहमें आनेकी आशा है, भेंट करने और उनके साथ स्थितिपर चर्चा करनेका प्रयत्न करें।

इस प्रश्नको उठाते समय वर्तमान युद्धमें नेटालकी भारतीयोंके बलिदानका ध्यान रखा जाये। इसके साथ मैं एक कतरन[1] भेजता हूँ जिससे आपको उनके कार्यका कुछ आभास मिल जायेगा।

मैंने आपको विस्तारसे और खुलकर सारी बातें लिखनेकी स्वतंत्रता ली है। विश्वास है इसके लिए आप मुझे कृपापूर्वक क्षमा करेंगे। यदि आपको और अधिक जानकारीकी आवश्यकता हो तो उसे आपकी सेवामें प्रस्तुत करते हुए मुझे प्रसन्नता होगी।

आपका विश्वासपात्र,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १९३५) से।

१७७. टिप्पणियाँ : भारतीयोंकी स्थितिपर

केवल विचारार्थ

[राजकोट
मार्च २०, १९०२]

दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंकी वर्तमान स्थितिपर टिप्पणियाँ

पत्रोंको दक्षिण आफ्रिकासे यहाँतक पहुँचनेमें बहुत समय लगता है यह देखते हुए जो कुछ नीचे लिखा गया है वह इस तारीखसे दो महीने पहलेकी स्थितिपर ही लागू होता है। इसे ध्यानमें रखना आवश्यक है क्योंकि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय अब भी एक संकटसे गुजर रहे हैं जैसा कि नीचेके विवरणसे प्रकट होगा।

१. गांधीजीने २० जनवरी, १९०२ को एक भाषण दिया था। अनुमानतः उसी भाषणके पाठकी कतरनका उल्लेख है।

नेटाल और दोनों नये उपनिवेशोंमें भारतीयोंके प्रयत्नोंमें फर्क करनेकी वकालतपर अधिक जोर नहीं दिया जा सकता। फिलहाल केप उपनिवेशको अलग छोड़ा जा सकता है। लोक-सभा (हाउस ऑफ कॉमन्स) में नेटालके नये उपनिवेशोंके सम्बन्धमें पूछा गया दूसरा प्रश्न मेरी नम्र सम्मतिमें कार्य-नीतिकी दृष्टिसे एक बड़ी भूल थी। श्री चेम्बरलेनके इस उत्तरसे कि नेटालमें पहलेसे ही लागू भारतीय विरोधी-कानूनके सम्बन्धमें मैं फिलहाल नेटाल-सरकारको कुछ कहनेका इरादा नहीं रखता और कुछ नहीं तो उपनिवेशमें एक दुर्भाव उत्पन्न हो गया है और उप-निवेशियोंका भारतीय-विरोधी रुख और भी कड़ा हो गया है। श्री चेम्बरलेनके सुविदित विचारोंको ध्यानमें रखते हुए नेटालका परवाना-कानून केवल उनके और सहानुभूति रखनेवाले मित्रोंके बीच निरन्तर पत्र-व्यवहारका विषय हो सकता है।

अब नेटालके बारेमें। प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम और विक्रेता-परवाना अधिनियम ब्रिटिश भारतीयोंको हानि पहुँचानेवाले मुख्य कानून हैं। इनमें दूसरा कानून खास तौरसे हानि कर है क्योंकि उससे परवाना-अधिकारियोंको परवाना देनेके बारेमें असीमित अधिकार मिल जाते हैं और उनके निर्णयोंके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें अपील भी नहीं की जा सकती। नवीनतम सूचना और घटनाओंका असर यह होता है कि उन्हें भारतीयोंके अधिकार कम करनेकी शक्ति मिल जाती है। नेटाल नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) अधिनियमसे नागरिक सेवा निकाय (सिविल सर्विस बोर्ड) को उसके अन्तर्गत उम्मीदवारोंको परीक्षा आदिके विषयमें उप-नियम पास करनेका अधिकार मिल जाता है। और संविधान-अधिनियम अपेक्षा रखता है कि सब वर्गीय विधान कानून बननेसे पहले सम्राट्से मंजूर कराये जायें। इसके अलावा यह साफ है कि कानूनके मूल सिद्धान्तोंको बदलनेके लिए उसके अन्तर्गत उपनियम नहीं बनाये जा सकते। नेटाल-सरकार सिर्फ एक उपनियम जोकि नेटाल नागरिक सेवा अधिनियमकी ठेठ जड़तक पहुँचता है प्रकाशित करके वर्गीय कानूनोंकी मंजूरीके लिए उपनिवेश-मन्त्रीके पास जानेसे बच निकली है।

प्रस्तुत उपनियम किसी भी ऐसे व्यक्तिको जिसे संसदीय मताधिकारके लिए अयोग्य ठह-राया गया हो अन्य बातोंके साथ-साथ नागरिक सेवाके लिए उम्मीदवार बननेसे रोकता है। मताधिकार-अपहरण अधिनियम सुविदित है। इसके अन्तर्गत नेटाल-सरकार कहेगी कि भारतीय मताधिकारके उपभोगके लिए अयोग्य ठहराये गये हैं इसलिए वे नेटाल नागरिक सेवाकी प्रतियोगितामें बैठनेके लिए भी अयोग्य हैं। निस्सन्देह बहुत कम भारतीय ऐसे हैं जो उस परीक्षामें बैठते हैं। फिर भी सिद्धान्तका प्रश्न तो है ही। और इसके लिए जो तरीका अपनाया जाता है वह अत्यन्त खतरनाक है। उससे उपनिवेशी भारतीय प्रवासियोंको और अधिक सतानेकी बहुत बड़ी छूट पा जाते हैं। सम्भवतः यह मामला पत्र-व्यवहार द्वारा श्री चेम्बरलेनके ध्यानमें लाया जाये।

श्री चेम्बरलेनके उत्तरको ध्यानमें रखते हुए ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीके सम्बन्धमें स्थिति अत्यन्त नाजुक है। दोनों उपनिवेशोंमें सभी भारतीय-विरोधी कानून पूरी तरह लागू है। उनके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें भारतीय पृथक बस्तियोंके अलावा दूसरी जगह न जमीनकी मिल्कियत ले सकते हैं और न व्यापार कर सकते हैं। उनको काफिर लोगोंकी भाँति यात्रा-सम्बन्धी और अन्य परवाने रखने पड़ते हैं। ऑरेंज रिवर कालोनीमें वे प्रवेश नहीं कर सकते। हाँ घरेलू नौकर बनकर अवश्य जा सकते हैं। श्री चेम्बरलेनके उत्तरके अनुसार, इन्हीं कानूनोंके बारेमें कोई मिल्नर उन्हें सलाह देनेवाले हैं और परमश्रेष्ठका रुख अब है बिलकुल वैसा मैत्रीपूर्ण नहीं रहा जैसेकी एक समय अपेक्षा की जाती थी। उन्होंने एक अवैध परवाना-कानूनकी जो पुराने ट्रान्सवाल परवाना-कानूनसे अच्छा माना जाता है, घोषणा की है। नया कानून उसीकी जगह

किया गया है। उसकी इस घोषणाकी नकल इसके साथ संलग्न[1] है। इससे यह मालूम हो जायेगा कि इसके द्वारा जो राहत मिलती है उसका लाभ प्राय: काफिर उठा सकते हैं यद्यपि उसमें दिये गये "अश्वेत व्यक्ति" शब्दोंमें पहलेकी तरह भारतीयोंका भी समावेश है। पुराने ट्रान्सवाल परवाना-कानून भारतीयोंके विरुद्ध बहुत कम लागू होता था। ब्रिटिश शासनमें जहाँ नियमोंका पालन कठोरतासे होता है स्थिति क्या होगी उसकी कल्पना आसानीसे की जा सकती है। यदि दी जानेवाली राहत उपर्युक्त किस्मकी है तो स्पष्ट है कि वह राहत होगी ही नहीं। ट्रान्सवाल-सरकारने लंदन-समझौतेकी १४वीं धाराका उल्लंघन कर ऐसे कानून बनाये हैं जिनमें व्यावहारिक रूपसे भारतीयोंका वर्गीकरण आफ्रिकी वतनी लोगोंके साथ किया है। स्मरण रहे, स्वर्गीय लॉर्ड लॉक और सर हर्क्युलीज रॉबिन्सनने इस प्रकारके वर्गीकरणके विरुद्ध आपत्ति प्रकट की थी और उक्त धाराके अन्तर्गत माँग की थी कि भारतीयोंको दूसरी ब्रिटिश प्रजाके समान ही अधिकार दिये जायें। (देखिए दक्षिण आफ्रिकी ब्लू बुक *ग्रीवेन्सिज ऑफ ब्रिटिश इंडियन्स* — ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतें)। इसलिए अगर इन दोनों उपनिवेशोंमें ये भारतीय-विरोधी कानून वापस न भी लिये जायें तो कमसे-कम ब्रिटिश भारतीयों और वतनी लोगोंमें अन्तर तो किया ही जा सकता है। इन स्थितियोंमें सारी उपलब्ध शक्ति केवल इन दो उपनिवेशोंके प्रश्नको हल करनेमें लगानी चाहिए। अगर वहाँ पूरा न्याय मिल गया तो नेटाल भी जल्दी ही उन्हींकी पंक्तिमें आ जायेगा।

इन टिप्पणियोंको तैयार करनेमें तथ्योंकी अनावश्यक पुनरुक्तिसे बचनेके लिए यह बात मान ली गई है कि सहानुभूति रखनेवाले मित्रोंको स्मरणपत्रों आदिकी जानकारी पहलेसे ही है।

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३९४९) से।

१७८. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

राजकोट
मार्च २७, १९०२

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि आपको बुखार आ गया है। कहनेकी जरूरत नहीं कि इस समय आपका एक सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है अपने देशकी खातिर अपनी तन्दुरुस्तीका ध्यान रखना। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप ज्यादा फिक्र या ज्यादा काम करनेसे बीमार नहीं हुए होंगे। अगर मुझे कुछ कहनेकी इजाजत दें तो मैं कहूँगा कि अपने घरमें अत्यन्त सादगीके साथ नियमितता बरतनेसे न केवल आपको बल्कि आपके अलावा उनको भी फायदा होगा जिन्हें आपके सम्पर्कमें आनेका विशेष अधिकार प्राप्त है। सम्भव है मैं गुस्ताखीका दोषी ठहरूँ, किन्तु मैं निश्चित रूपसे महसूस करता हूँ कि इसका पालन बहुत कठिन नहीं है।

मैंने अखबारोंमें पढ़ा है कि वाइसरायकी परिषदमें कारीगरों अथवा दस्तकारोंकी समुद्र-पार भरतीको नियमित करनेके लिए एक विधेयक पेश किया जानेवाला है। यह क्या हो सकता है? क्या यह उपनिवेशियोंको रियायत है या सचमुच इसका उद्देश्य हमारा हित करना है?

1. यह यहाँ नहीं दी गई है।

सुना है श्री आडिया राजकोटसे गुजरे थे और उनके स्मारकके लिए कुछ सौ रुपये इकट्ठा कर के गये हैं। आशा करता हूँ आप अपनी अगले कुछ दिनोंकी हलचलोंके बारेमें मुझे लिखेंगे।

क्या मैं आपको यह कष्ट दे सकता हूँ कि आप श्री माटेसे कह दें कि आखिरकार कलकत्तासे मेरी चीजें मुझे मिल गई हैं?

आपका सच्चा

मो० क० गांधी

[पुनश्च] श्री टर्नरने आखिरकार निजी सचिवके पत्रकी एक प्रतिलिपि मुझे भेज दी है। उसकी नकल साथ भेज रहा हूँ।

मो० क० गां०

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२१) से।

१७९. आवरणपत्र "टिप्पणियों" के लिए

राजकोट

मार्च ३, १९०२

सेवामें
सम्पादक
इंडिया

प्रिय महोदय,

आपका २८ फरवरीका पत्र मिला। यह बम्बईसे पता बदलकर पुनः भेजा गया था। आपके अनुरोधके अनुसार दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी यथासम्भव अद्यतन स्थितिपर टिप्पणियाँ[1] इसके साथ भेजता हूँ। यह मानते हुए कि समय-समयपर आपको भेजे गये सब कागजात आपके पास होंगे ही मैंने सारा पूर्व इतिहास नहीं दुहराया। मैं इसकी नकल सर मंचरजीको भी भेज रहा हूँ। मेरा खयाल है कि ब्रिटिश समिति इस मामलेमें उनका सहयोग माँगती ही।

आपका सच्चा,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १९४८) से।

१. "टिप्पणी: भारतीयोंकी स्थिति," मार्च २७, १९०२।

१८१. पत्र खान और नाजरको

राजकोट
मार्च ३०, १९०२

प्रिय श्री खान तथा नाजर,

आपको अरसेसे मुझे पत्र लिखनेकी फुरसत नहीं मिली यह बहुत खेदजनक है। अब मैं इसके साथ माइसराय द्वारा श्री टर्नर[1] को लिखे गये पत्रकी नकल भेज रहा हूँ। *इंडिया* सम्पादकके अनुरोधपर कांग्रेसकी ब्रिटिश समितिके लिए तैयार की गई टिप्पणीकी[2] नकल भी साथमें भेजता हूँ। इसकी एक नकल मैंने सर मंचरजीको भी भेजी है। अगर किसी गुमनाम दोस्तने मुझे *जोहानिसबर्ग स्टार* और एक अखबार, जिसमें नागरिक सेवा (सिविल सर्विस) के नये नियम थे, न भेजे होते तो टिप्पणीमें वे दो बातें शामिल न की जा सकतीं। मुझे अब भी आशा है कि सर मंचरजी सुझाव मानेंगे। मैं अपने उस अनुरोधको जो मैंने रंगूनसे अपने पत्रमें[3] किया था फिर दोहराता हूँ कि यदि हमारे लोग मेरे वादेको[4] पूरा कराना चाहते हैं तो यह तबतक कर लेना चाहिए जबतक मेरी योजनाएँ अनिश्चित हैं, यद्यपि मैं जानता हूँ कि मेरे वादेके साथ ऐसी कोई शर्त नहीं है। यदि उसे निकट भविष्यमें पूरा नहीं कराया जाता तो मुझपर बड़ी कृपा होगी कि मुझे उससे मुक्त कर दिया जाये। यदि आपने अबतक बकाया रकम ड्राफ्टसे न भेजी हो तो कृपया यह पत्र पाते ही भेज दें। आप दोनोंके क्या हाल हैं? पुस्तिकाओंकी प्रतियाँ अबतक आ ही रही हैं। वैसे ही पत्रोंकी नकलें भी जो जेम्स मेरे लिए तैयार करनेवाले थे। इस सबके पीछे या तो अविचल निष्ठा है या पैसा बनानेकी कोशिशें। मैं आशा करता हूँ कि यह पैसेके लिए है। आज आये रायटरके एक तारमें दक्षिण आफ्रिकाके बिना ताजके बादशाहकी[5] मृत्युकी खबर है। उनके सभी दोषोंके बावजूद उनकी मृत्युपर आँसू रोकना असम्भव है।

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३९४१) से।

१. देखिए पादटिप्पणी २, पृष्ठ २३५।

२. टिप्पणी "भारतीयोंकी स्थिति," मार्च २७, १९०२।

३. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

४. दक्षिण आफ्रिका छोड़ते समय गांधीजीने वादा किया था कि यदि दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीय समाज चाहता तो वे एक वर्षके अन्दर वापस आ जायेंगे। (आत्मकथा गुजराती १९५२, पृष्ठ २१७)

५. सेसिल रोड्स, जिनकी मृत्यु २६ मार्चको हुई थी।

१८२ पत्र मारिसको

राजकोट
मार्च १९, १९ २

प्रिय श्री मॉरिस

मुझे आपके दो पत्र कलकत्तेमें मिले और तीसरा कलकत्तेसे पता बदलकर रंगून भेज दिया गया था वहाँ मिला। आपके पिछले पत्रसे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि मैंने आपके पहले पत्रका जो उत्तर भेजा था वह उस तारीखतक भी आपको नहीं मिला था। किन्तु आशा है दक्षिण आफ्रिकाके लिए जहाजमें बैठनेसे पहले वह आपको अवश्य मिल गया होगा।

आपकी यात्राको यथासम्भव सुखमय बनानेके लिए कलकत्तेमें मुझसे जो कुछ बन पड़ा हो उसके लिए आपने मुझे धन्यवाद देना उचित समझा है। मैं नहीं जानता कि मैं इसके योग्य हूँ। मैंने अपना कर्तव्य पालन करनेके अलावा और कुछ नहीं किया। काश मैं कुछ और कर सका होता!

बहुत अधिक कठिनाइयोंके बाद मैं व्यापार-मण्डल (चेम्बर ऑफ कामर्स) के अध्यक्षको तैयार कर सका। उसके फलस्वरूप वाइसरायसे एक बहुत ही सहानुभूतिपूर्ण उत्तर मिला है। मगर, बेशक सिर्फ सहानुभूतिसे बहुत काम न चलेगा। उसके अनुसार कार्रवाई करानेके लिए आवश्यक है कि भारतीय जनता एक भारी प्रयत्न करे।

क्या ही अच्छा होता कि रंगूनकी समुद्र-यात्रा और उत्तर-पश्चिमकी तीसरे दर्जेकी रेल-यात्रामें आप मेरे साथ होते। आपके पत्रसे मेरी सारी इच्छा मर-सी गई, किन्तु मैंने सोचा कि मैं पहले बने कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए बँधा हूँ इसलिए मैंने वैसा किया। यह बताते हुए मुझे खुशी होती है कि इसके फलस्वरूप जो अनुभव हुआ उससे मेरी ज्ञान-वृद्धि हुई है। मैं मानता हूँ कि तीसरे दर्जेके मुसाफिरोंकी गन्दी आदतोंके सम्बन्धमें मैं आपसे पूर्ण-रूपसे सहमत नहीं हूँ। मैं नहीं जानता कि आपने मेरी तरह यूरोपीय रेलोंमें तीसरे दर्जेमें बैठकर यात्रा की है या नहीं। मैं यूरोपीय रेलोंकी अपेक्षा भारतीय रेलोंमें तीसरे दर्जेमें बैठना पसन्द करता हूँ क्योंकि यूरोपीय रेलोंमें कभी-कभी तीसरे दर्जेके मुसाफिरोंका साथ स्वच्छताकी तथा अन्य दृष्टियोंसे भी मुझे बहुत अप्रिय लगा है। सो भी रोड्स चल बसे। उनकी नीतिको कोई चाहे कितना ही नापसन्द क्यों न करे, अब जबकि वे संसारमें नहीं हैं आँसुओंको रोकना असम्भव है। इससे इनकार करना बहुत कठिन होगा कि व साम्राज्यके सच्चे मित्र थे। आशा है आप फिर केपटाउनमें स्थिर हो गये होंगे और आपका और आपके परिवारका स्वास्थ्य अच्छा होगा। यदि आपने पत्र न लिखा हो तो अब लिखिए।

आपका सच्चा,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ३९५) से।

१८३. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

राजकोट
अप्रैल ८, १९ २

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

आपके महान् बजट-भाषणपर मैं आपको सादर बधाई देता हूँ। उसकी एक प्रति मुझे मिली है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरी प्रशंसा जानकारीपर आधारित नहीं है फिर भी वह सच्ची तो है ही। यदि सम्भव हो तो मैं चाहूँगा कि नेटालके मित्रोंमें बाँटनेके लिए मुझे आपके भाषणकी कुछ प्रतियाँ मिल जायें।

रानडे स्मारकके चन्देके बारेमें अपने पिछले पत्रके उत्तरमें मैं आपके पत्रकी जिसका आपने वचन दिया था प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० १७१९) से।

१८४. पत्र : गो० का० पारेखको

[राजकोट]
अप्रैल १८, १९ १

माननीय श्री गोकुलदास कहानदास पारेख
महाबलेश्वर लॉज
महाबलेश्वर

प्रिय पारेखजी,

आपका इसी ९ तारीखका पत्र मिला। उसके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। जब मेरे बम्बईमें होनेकी सम्भावना होगी मैं आपको पहले ही उचित सूचना दे दूँगा।

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० १२५५१) से।

१८५ दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय

राजकोट
अक्तूबर २२, १८९६

सेवामें
सम्पादक
टाइम्स ऑफ़ इंडिया

महोदय

आपके १ तारीखके अंकमें एक तार इस आशयका छपा है कि नेटालकी विधान-सभामें एक ऐसे विधेयकका द्वितीय वाचन पूरा हो चुका है जिसके द्वारा उस उपनिवेशमें गिरमिटिया भारतीयोंकी सन्तानोंपर भी वही सब प्रतिबन्ध लगा दिये जायेंगे जो उनके माता-पिताओंपर लगाये जाते हैं।

इस विधेयककी पूरी नकल न होनेसे इसकी आलोचना करना कठिन है, परन्तु चूँकि दक्षिण आफ्रिकाकी डाकका यहाँ आना इतना ज्यादा अनिश्चित है और मैं जानता हूँ कि उस उपनिवेशमें विधेयक कितनी तेजीसे कानूनका रूप ले सकते हैं इसलिए मैं इसपर कुछ कहनेका साहस करता हूँ।

मेरा खयाल है, १८९३ में नेटाल-सरकार द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि भारत-सरकारको इसलिए राजी करने भारत आये थे कि वह एक ऐसा कानून पास करनेकी अनुमति दे दे जिसके अनुसार गिरमिटिया भारतीय अपना गिरमिट समाप्त हो जानेपर या तो भारत लौट जायें या प्रति वर्ष २५ पौंड व्यक्ति-कर (पोल टैक्स) दिया करें। इस प्रतिनिधिमण्डलके यहाँ आनेका एक लम्बा इतिहास है। वह दुःखदायी होते हुए भी मनोरंजक है। परन्तु अपनी बात संक्षेपमें कहनेके लिए, मुझे उसे छोड़ना पड़ रहा है। उस समयके वाइसराय परमश्रेष्ठ लॉर्ड एल्गिनने वहाँ २५ पौंड व्यक्ति-कर लगाने देनेसे बिलकुल इनकार कर दिया था वहीं दुर्भाग्यवश उसे घटाकर ३ पौंड व्यक्ति-कर लगानेकी मंजूरी दे दी और इस प्रकार उसके सिद्धान्तको स्वीकार कर लिया। मुझे आशंका है कि उन्हें पता नहीं था कि बीस वर्ष पूर्व भी इसी प्रकारका एक असफल प्रयत्न किया गया था। उन्हें यह ज्ञात होता तो शायद वे अपनी स्वीकृति न देते।

मुझे भय है कि जो काम १८९३ का प्रतिनिधिमण्डल नहीं कर सका था उसे कुछ हदतक इस विधेयक द्वारा पूरा करनेकी बात सोची गई है क्योंकि इसके अनुसार गिरमिटिया माँ बापोंकी सब सन्तानोंको (गोदके शिशुओंको भी) ३ पौंड कर देना पड़ा करेगा। यदि किसी गिरमिटिया भारतीयके सात बच्चे हों—जो कि कोई अनहोनी बात नहीं है तो उसे अपने और अपने बच्चोंके लिए २४ पौंड प्रति वर्ष देने पड़ेंगे जो उसके सामर्थ्यसे सर्वथा बाहरकी बात होगी। इस कठोर करके कारण लोगोंके आचार विचारपर जो भारी दुष्प्रभाव पड़ेगा मेरा हृदय तो उसकी कल्पना करके ही काँपने लगता है। जिस देशमें इन लोगोंको सचमुच निमन्त्रित किया गया है अथवा मैं तो कहूँगा कि बहकाकर ले जाया गया है, उसमें ही जीवित रहने मात्रकी अनुमति पानेके लिए अब इन्हें इतना भारी दण्ड भरनेके लिए कहा जा रहा है।

लॉर्ड एल्गिनने १८९३ में जो कर लगानेकी इजाजत दी थी उसके अन्यायका आपने भली-भाँति वर्णन किया था। स्वर्गीय सर डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ हंटरने भी उसकी निन्दा की थी और गिरमिटकी

इथाको अर्थशास्त्रता बतलाया था। जब मजदूरोंको स्वदेश लौटनेके लिए विवश करनेका प्रस्ताव पहले-पहल रखा गया था तब नेटालके विधि-निर्माताओंने जो मत प्रकट किया था मैं उसे भी यहाँ उद्धृत करनेकी अनुमति चाहता हूँ।

स्वर्गीय श्री सॉण्डर्सने जो एक प्रतिष्ठित उपनिवेशी और एक समय नेटाल विधान-परिषद्के सदस्य थे प्रस्तावकी निम्नलिखित टीका की थी

> यद्यपि आयोगने ऐसा कानून बनानेकी कोई सिफारिश नहीं की कि अगर भारतीय अपने गिरमिटकी अवधि पूरी होनेके बाद नया इकरार करनेको तैयार न हों तो उन्हें भारत लौटनेके लिए बाध्य किया जाये फिर भी मैं ऐसे किसी भी विचारकी जोरोंसे निन्दा करता हूँ। मेरा पक्का विश्वास है कि आज जो अनेक लोग इस योजनाकी हिमायत कर रहे हैं वे जब समझेंगे कि इसका अर्थ क्या होता है तब वे भी मेरे समान ही जोरोंसे इसे ठुकरा देंगे। भले ही भारतीयोंका आना रोक दीजिए और उसका फल भोगिए, परन्तु ऐसा कुछ करनेकी कोशिश मत कीजिए जो, मैं साबित कर सकता हूँ भारी अन्याय है।
>
> यह इसके सिवा क्या है कि हम अपने अच्छे और बुरे दोनों तरहके नौकरोंका ज्यादासे-ज्यादा लाभ उठा लें और जब उनकी अच्छीसे-अच्छी उम्र हमें कमाकर यहीं जानेमें कट जाये तब (अगर हम कर सकें तो मगर कर नहीं सकते) उन्हें अपने देश लौट जानेके लिए बाध्य करें और इस प्रकार उन्हें अपने पुरस्कारका सुख भोगने देनेसे इनकार कर दें? और आप उन्हें भेजेंगे कहाँ? उन्हें उसी भुखमरीकी परिस्थितिको झेलनेके लिए फिर क्यों वापस भेजा जाये जिससे अपनी जवानीके दिनोंमें भागकर वे यहाँ आये थे? अगर हम शाइलॉकके समान एक पौंड मांस ही चाहते हैं तो विश्वास रखिए, शाइलॉकका ही प्रतिफल भी हमें भोगना होगा।

इस उपनिवेशके भूतपूर्व प्रधानमन्त्री स्वर्गीय श्री एस्कम्बने भारतीय प्रश्नपर विचार करनेके लिए नियुक्त आयोगके सामने गवाही देते हुए कहा था

> जहाँतक अवधि पूरी कर लेनेवाले भारतीयोंका सम्बन्ध है, मैं नहीं समझता कि किसी व्यक्तिको जबतक वह अपराधी न हो और उस अपराधके लिए उसे देशनिकाला न दिया गया हो दुनियाके किसी भी भागमें जानेके लिए बाध्य किया जाना चाहिए। मैंने इस प्रश्नके बारेमें बहुत-कुछ सुना है। मुझसे बार-बार अपना दृष्टिकोण बदलनेको कहा गया है, परन्तु मैं वैसा नहीं कर सका। एक आदमी यहाँ लाया जाता है। सिद्धान्ततः रजामन्दीसे व्यवहारतः बहुधा बिना रजामन्दीके लाया जाता है। वह अपने जीवनके सर्वश्रेष्ठ पाँच वर्ष लगा देता है। नये सम्बन्ध स्थापित करता है। पुराने सम्बन्धोंको भुला देता है। शायद यहीं अपना घर बसा लेता है। ऐसी हालतमें मेरे न्याय और अन्यायके विचारसे उसे वापस नहीं भेजा जा सकता। भारतीयोंसे जो-कुछ काम आप ले सकते हैं वह लेकर उन्हें चले जानेका आदेश दें इससे तो यह कहीं अच्छा होगा कि आप उनको यहाँ लाना ही बिलकुल बन्द कर दें। ऐसा दीखता है कि उपनिवेश या उपनिवेशका एक भाग भारतीयोंको बुलाना तो चाहता है, परन्तु उनके आगमनके परिणामोंसे बचना चाहता है। जहाँतक मैं जानता हूँ भारतीय हानि पहुँचानेवाले लोग नहीं हैं।

कुछ बातोंमें तो वे बहुत परोपकारी हैं। फिर, ऐसा कोई कारण तो मेरे सुननेमें कभी नहीं आया जिससे किसी व्यक्तिको पाँच वर्षतक चाल-चलन अच्छा रखनेपर भी देशनिकाला दे दिया जाये और इस कार्यको उचित ठहराया जा सके। मैं नहीं समझता कि किसी भारतीयको उसकी पाँच वर्षकी सेवा समाप्त होनेपर पुलिसकी निगरानीमें रखना चाहिए। हाँ अगर वह अपराधी वृत्तिका हो तो बात दूसरी है। मैं नहीं जानता कि अरबोंको क्यों पुलिसकी निगरानीमें यूरोपीयोंकी अपेक्षा अधिक रखा जाना चाहिए। कुछ अरबोंके सम्बन्धमें तो यह बात बिलकुल हास्यास्पद है। वे बहुत साधन-सम्पन्न हैं। उनके सम्बन्ध भी बहुत फैले हुए हैं। अगर उनके साथ कारोबार करना दूसरोंकी अपेक्षा ज्यादा लाभप्रद हो तो व्यापारमें उनका उपयोग हमेशा किया जाता है।

मुझे मालूम है कि आपको चुनावके दबावसे दबकर इन माननीय सज्जनने अपना दृष्टिकोण बदल लिया था। इन उद्धरणोंका सम्बन्ध निःसन्देह गिरमिटिया लोगोंकी अवरुद्ध वापसीसे है, परन्तु व्यक्ति-करका उद्देश्य भी क्योंकि गिरमिटियोंको इस प्रकार वापस जानेके लिए विवश करनेका है इसलिए ये उसपर भी लागू होते हैं। और, विवादास्पद विधेयकका एक आवश्यक परिणाम यह होगा कि यदि भारतीय गिरमिटिया व्यक्ति-कर देनेको तैयार न होंगे तो उनके बच्चोंको यहाँसे वापस जाना पड़ेगा।

आपने और आपके अन्य सहयोगियोंने प्रवासी भारतीयोंकी शिकायतें प्राय प्रकाशित करके उनको अपना बड़ा आभारी बना लिया है। परन्तु प्रतीत होता है कि जबतक एक-एक भारतीयको नेटालसे निकाल नहीं दिया जायेगा तबतक वहाँके यूरोपीय उपनिवेशी प्रसन्न नहीं होंगे। इस कारण भारतीयोंके लिए यह एक जीवन-मरणका संघर्ष हो गया है। उनके पक्षको पूर्णतया न्यायसंगत मानना पड़ेगा। और भी अनेक परिस्थितियाँ ऐसी हैं जिनसे उनके साथ न्याय होनेकी आशा है। हमारे वाइसराय बहुत जबरदस्त व्यक्ति हैं। उपनिवेश-मन्त्रीने भी बहुधा सहानुभूति प्रकट की है। क्या आप इन सब शक्तियोंको गतिमान् करनेकी कृपा करेंगे? यह समय इसके लिए अपरिपक्व नहीं है। शायद जबतक कागज-पत्र नेटालसे यहाँ आयेंगे तब तक यह विधेयक भी मंजूरीके लिए उपनिवेश-कार्यालय पहुँच चुकेगा। इसलिए अब प्रतीक्षा करनेका समय नहीं है। मैं यहाँ इतना और बता दूँ कि उपनिवेशके संविधानके अनुसार समस्त भारतीय कानूनोंके लिए इंग्लैंडकी सरकारसे मंजूरी मिलना जरूरी है।

मो॰ क॰ गांधी

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया १–५–१९ २

१८६ पत्र : गो० कृ० गोखलेको

राजकोट
अप्रैल २२, १९ २

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

क्या मैं आपको नेटालके प्रवासी भारतीयोंके सम्बन्धमें कष्ट दे सकता हूँ ? आपने इस मासकी १ तारीखके *टाइम्स ऑफ़ इंडिया*में क्या तार पढ़ा होगा। इसपर मैंने सम्पादकको चिट्ठी लिखी है। मैंने इस विषयपर एक प्रार्थनापत्रकी नकल भी भेजी है ताकि वे इस प्रश्नका इतिहास समझ सकें। यदि मैं सलाह देनेकी धृष्टता करूँ तो मुझे लगता है सबसे ज्यादा कारगर उपाय जिसमें सम्भवतः आप हमारी सहायता कर सकते हैं, यह है कि आप सम्पादकसे मिलें और उनसे इस स्थितिपर बातचीत करें। इस समय कार्रवाईका एक ही तरीका है कि अखबारोंमें जोरोंसे और सूझबूझके साथ आन्दोलन चलाया जाये। नेटालसे कागजात मिलते ही सम्भवतः यह आवश्यक होगा कि श्री टर्नरको उनके वादेकी याद दिलाई जाये और वाइसरायको एक प्रातिनिधिक प्रार्थनापत्र भेजनेमें साथ देनेके लिए कहा जाये। मुझे बहुत दुःख है मैं आपको उल्लिखित प्रार्थनापत्रकी नकल भी नहीं भेज सकता किन्तु यदि प्रेसिडेन्सी असोसिएशनने समय-समयपर प्रेषित पत्रोंकी फाइल रखी होगी तो आपको वहींसे नकल मिल जायेगी। मैं इसके बारेमें श्री मुधोलकरको लिख रहा हूँ। आशा है मैं आपके समयपर अनुचित दखल नहीं दे रहा हूँ।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७२) से।

१८७ पत्र : जॉ० रॉबिन्सनको

राजकोट
अप्रैल २७, १९ २

प्रिय सर जॉन,

आपके ११ मार्चके कृपापूर्ण और सुन्दर पत्रके लिए, तथा फोटोग्राफके लिए भी जिसे मैं बहुत ही मूल्यवान समझूँगा, धन्यवाद।

प्रोफेसर मैक्समूलरकी पुस्तक आपने पसन्द की यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। मेरे खयालसे साम्राज्य-परिवारकी पश्चिमी और पूर्वी शाखाओंके बीच सद्भाव बढ़ानेवाली इससे अच्छी दूसरी कोई बात नहीं हो सकती कि वे एक-दूसरेकी अच्छीसे-अच्छी बातोंको जानें।

आपने मेरे स्वास्थ्यके बारेमें पूछा इसके लिए धन्यवाद। उसमें बराबर सुधार होता जान पड़ रहा है।

भारतके आम लोगोंकी बढ़ती हुई गरीबीके बारेमें कुछ वक्ता और लेखक जो कहते हैं मुझे भय है उसमें बहुत-कुछ सत्य है। कुछ वर्ग निश्चय ही अधिक समृद्ध हो गये हैं लेकिन

करोड़ों बरबाद होते चले रहे हैं। मैं १८९६ में यहाँ था। तब मैंने जो कुछ देखा और अब मैं जो कुछ देखता हूँ उसमें बहुत बड़ा अन्तर है। कष्ट अवर्णनीय है किन्तु इससे जरूरी तौरपर यह सिद्ध नहीं होता कि गरीबीका यही कारण है जो ये लेखक और वक्ता बताते हैं। फिर भी अकबरकी शासन-पद्धतिपर वापस लौटनेसे अकाल और प्लेगसे उत्पन्न मुसीबत कुछ हदतक कम हो सकती है। इस विषयपर मेरे कथनमें सुधारकी गुंजाइश है क्योंकि मैं इस प्रश्नका जितना पूरा अध्ययन करना चाहता था उतना अभीतक नहीं कर सका हूँ।

आशा है आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा। प्रभुसे प्रार्थना है कि वह आपको बहुत साल जीवित रखे ताकि दक्षिण आफ्रिका अपनी बहुत-सी समस्याओंके सम्बन्धमें जो अभीतक हल नहीं हुई हैं आपके भारी अनुभवका लाभ उठा सके।

आपको और श्रीमती रॉबिन्सनको अभिवादन।

आपका सच्चा,

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५९९१) से।

१८८ पत्र : गो० कृ० गोखलेको

राजकोट
मई १, १९०२

प्रिय प्रोफेसर गोखले

आपके कृपा-पत्रके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। यह तो मैं अच्छी तरह समझ सकता था कि आपके मौनका जरूर कोई अपरिहार्य कारण होगा किन्तु तीन दिन पहले जब मैं श्री वाडियासे मिला तबतक मैंने यह नहीं सोचा था कि कारण आपकी बीमारी है। आशा है, आप जल्दी ही अपना साधारण स्वास्थ्य प्राप्त कर लेंगे। यह जानकर आपको प्रसन्नता होगी कि मैंने फिलहाल राज्य स्वयंसेवक प्लेग समिति (स्टेट वालंटियर प्लेग कमिटी) के मन्त्रीका बहुत उत्तरदायित्वपूर्ण पद स्वीकार कर लिया है। यह समिति राजकोटमें प्लेग फैलनेकी आशंकासे स्थापित की गई है। इसलिए मैं सोचने लगा था कि यदि मुझे आपके पाससे राजकोटके स्मारकके लिए धन-संग्रहका बुलावा मिल गया तो मैं क्या करूँगा। यह कहना जरूरी नहीं है कि जब कभी आप कार्य आरम्भ करें, आप भरोसा कर सकते हैं कि मैं आपका सहायक बन जाऊँगा — बशर्ते उस समय आपको मेरी जरूरत हो तो।

आपका सच्चा
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७१८) से।

१८९. टिप्पणियाँ भारतीय प्रश्नपर

[illegible]
मई ८, १९ २

इस चर्चामें केवल नेटाल और दो नये उपनिवेशोंसे सम्बद्ध भारतीय प्रश्नपर ही विचार किया गया है।

नेटाल

नेटाल एक स्वशासित उपनिवेश है। उसके संविधानके अनुसार, रंग-भेदके सब कानूनों-पर अमल आरम्भ होनेसे पहले महामहिम सम्राट्की मंजूरी मिल जाना आवश्यक है। संविधानका एक साधारण नियम यह भी है कि उपनिवेशके विधानमण्डल द्वारा पास किये हुए किसी भी कानूनको पास होनेके पश्चात् दो वर्षके भीतर, नामंजूर किया जा सकता है।

इस उपनिवेशमें गोरे लोगोंकी आबादी ६   है, और इतनी ही संख्यामें वहाँ ब्रिटिश भारतीय बसे हुए हैं। वहाँके देसी लोग जूलू काफी अच्छे लोग हैं परन्तु वे बड़े आलसी हैं। उनसे लगातार ६ महीने तक भी काम लेना कठिन है। इसलिए जब वहाँ बसे हुए गोरे स्वामी और भरोसेके मजदूर मिलनेकी समस्याके कारण परेशान थे और उपनिवेशका दिवाला निकला जा रहा था तब वहाँके विधानमण्डलने भारतीय मजदूरोंका सहारा लिया। कुछ वर्षोंकी बातचीतके बाद भारत सरकारने गिरमिटिया भारतीयोंको नेटाल ले जानेकी इजाजत दे दी। इस बातको कोई ४ वर्ष हो गये। धीरे-धीरे भारतीय मजदूरोंकी माँग बढ़ती गई। उपनिवेशकी समृद्धि भी उसी हिसाबसे बढ़ने लगी। इन मजदूरोंकी गिरमिटकी शर्त यह होती थी कि जिस किसी मालिकके सुपुर्द इन्हें कर दिया जाये उसकी सेवा ये ५ वर्षतक करें, और वह इन्हें पहले वर्ष तो १ शिलिंग मासिक मजदूरी दे और उसके बाद प्रतिवर्ष १ शिलिंग मासिक बढ़ाता जाये। इस इकरारनामेमें मुफ्त निवास और चिकित्सा और इकरारनामेकी समाप्तिपर मुफ्त वापसीकी भी शर्तें शामिल थीं।

मालिकों और मजदूरोंके सम्बन्धोंका नियन्त्रण एक अति कठोर नियमावलीके द्वारा किया जाता है। उसके अनुसार मजदूरोंपर कुछ बहुत सख्त पाबन्दियाँ लागू हो जाती हैं और उनका उल्लंघन करना फौजदारी अपराध होता है।

स्वभावतः इन मजदूरोंके पीछे स्वतन्त्र भारतीय भी वहाँ पहुँचे अर्थात् वे अपना मार्ग व्यय खुद देकर व्यापारादि करनेके लिए उपनिवेशमें गये। गिरमिटिया भारतीयोंमें से भी अधिकतरने स्वतन्त्र हो जानेके पश्चात् मुफ्त वापस लौट जानेकी शर्तका लाभ उठानेके बदले उपनिवेशमें ही रहकर कारीगर, छोटे व्यापारी और किसान आदि बन जाना पसन्द किया। इस कारण गोरे लोग उनसे तीव्र व्यापारिक ईर्ष्या करने लगे और उन्होंने आसानीसे उनकी छोटी-बड़ी बुराइयोंको ढूँढ़ लिया जैसे कि विचित्र ढंगसे तंग बस्तियोंमें रहना, आबादियोंको मैला रखना और कुछ असह्य रीति-रिवाज या अन्धविश्वास। इनका बखान खूब बढ़ा-चढ़ाकर किया जाता और अखबारोंमें इनकी चर्चा कर-करके हमें खूब नुकसान पहुँचाया जाता था। यहाँतक कि आम लोगोंमें भी भारतीय प्रवासियोंके विरुद्ध भ्रम फैल गया। प्रवासी भारतीय अशिक्षित थे। उनका ऐसा कोई मित्र भी नहीं था जो उनका पक्ष लोगोंके सामने पेश करता। इस कारण इस भ्रमका निवारण किसीने नहीं किया। १८९४ से पहलेतक नेटाल सम्राट्

द्वारा शासित उपनिवेश था इस कारण इस प्रश्नका लाभ उठाकर कानून बनानेके प्रयत्न सफल नहीं हो पाये। परन्तु जब इस उपनिवेशको पूर्ण स्वशासनके अधिकार मिल गये तब यह भारतीय विरोधी कानून पास करनेमें सफल हो गया। पहली ही कोशिश विशेष रूपसे भारतीयोंपर लागू होनेवाले कानून बनानेकी हुई। उदाहरणार्थ एक विधेयक भारतीयोंको मताधिकारका प्रयोग करनेसे रोकनेके लिए पेश किया गया। इसपर भारतीयोंने आपत्ति की और अन्तमें उपनिवेश-मन्त्रीने इसे नामंजूर कर दिया। जब इस विधेयकके विरुद्ध आन्दोलन चल रहा था तब भारतीयोंने यह सर्वथा स्पष्ट कर दिया था कि उनकी इच्छा उपनिवेशमें कोई राजनीतिक अधिकार प्राप्त करनेकी नहीं है परन्तु वे इसका विरोध इस कारण कर रहे हैं कि यह ब्रिटिश भारतीय निवासियोंके अधिकारोंको कम करनेका पहला कदम है। आगे चलकर उनकी यह बात सत्य भी सिद्ध हो गई। यद्यपि यह विधेयक तब नामंजूर कर दिया गया फिर भी बादमें इसकी जगह एक और कानून बना दिया गया। वह यदि इससे अधिक बुरा नहीं तो इतना ही बुरा अवश्य था। इस दूसरे कानूनके अनुसार, जिन लोगोंने अभीतक अपने देशमें संसदीय मताधिकारका प्रयोग नहीं किया था वे इस उपनिवेशमें मत देनेके अयोग्य ठहरा दिये गये हैं। इस प्रकार परोक्ष कानून बनानेका द्वार खुल गया। उदाहरणके लिए, प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम और विक्रेता-परवाना अधिनियम स्वीकार किये गये। प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम उन लोगोंको उपनिवेशमें प्रविष्ट होनेसे रोकता है जो पहलेसे वहाँके निवासी न हों या इस प्रकारके किसी व्यक्तिकी पत्नी या सन्तान न हों या किसी यूरोपीय भाषामें छपे हुए फार्मपर दर्ज भरकर प्रार्थनापत्र न लिख सकते हों। विक्रेता-परवाना अधिनियममें उसके द्वारा नियुक्त परवाना-अधिकारियोंको पूरा-पूरा अधिकार दे दिया गया है कि वे जिसे चाहें व्यापार करनेका परवाना दें जिसे चाहें न दें। उनके फैसलेकी अपील केवल उन म्यूनिसिपल निगमोंमें हो सकती है जो इन अफसरोंको नियुक्त करते हों। इन निगमों (कौंसिलों) में ज्यादातर संख्यामें उन्हीं व्यापारियोंके प्रतिनिधि होते हैं जो अपने बस भर अधिकसे-अधिक भारतीय व्यापारियोंको परवानोंसे वंचित रखनेके प्रयत्नमें जुटे रहते हैं। यहाँतक कि ये निगम अपने अधिकारियोंको हिदायतें देते हैं कि किसको परवाना दें और किसको न दें। इस कानूनकी इनतक सर्वोच्च न्यायालयका अपील सुननेका परम्परागत अधिकार विशेष रूपसे समाप्त कर दिया गया है। परवाना-कानून एक नित्य बनी रहनेवाली परेशानीका सबब हो गया है क्योंकि परवाने हर साल लेने पड़ते हैं और जैसे-जैसे नया वर्ष पास आने लगता है भारतीय व्यापारी डर और चिन्तामें काँपने लगते हैं। इन सब कष्टदायक निर्योग्यताओंके होते हुए भी मुझे आशंका है कि इस समय प्रत्यक्ष रूपसे कुछ नहीं किया जा सकता क्योंकि ये सब कानून नेटालके हैं और इन्हें ब्रिटिश सरकार बाकायदा मंजूरी दे चुकी है। परन्तु यूरोपीयोंको जितना मिल चुका है वे उतनेसे ही सन्तुष्ट नहीं हैं। वे अत्यन्त उत्सुकतापूर्वक भारतीयोंपर और भी कानूनी निर्योग्यताएँ लादनेको उत्सुक हैं। मेरे पास नेटालसे जो समाचारपत्र आये हैं उनसे पता चलता है कि हालमें नेटाल नागरिक सेवा नियाम (सिविल सर्विस बोर्ड) ने एक उपनियम भारतीयोंको परीक्षामें बैठनेके उम्मीदवारोंकी श्रेणीसे अलग रखनेके लिए बनाया है। उसके अनुसार जो माता-पिता ऊपर बताये हुए मताधिकार कानूनके दायरेमें आते हैं उनके बालक इस परीक्षामें नहीं बैठ सकते। मेरी सम्मतिमें यह उपनियम अवैध है क्योंकि इससे उपनिवेशके संविधानके मुताबिक ही पूर्वाधिकार हो जाता है। यदि यह कानून नेटालकी विधान-सभामें पास किया होता तो इसकी मंजूरी ब्रिटिश-सरकारसे लेनी पड़ती। साधारण सिद्धान्त यह है कि कोई उपनियम जिस कानूनके अनुसार वह बना है उस कानून या अधिनियमके दायरेसे न बढ़ सकता है न घट सकता है।